VISIONIAS

www.visionias.in

विश्व इतिहास

भाग-1

क्रम संख्या	अध्याय	पृष्ठ संख्या
1.	सामंतवाद, चर्च, परिवर्तनशील समय, आधुनिक युग, वैश्विक सप्त वर्षीय युद्ध	1-18
2.	अमेरिकी क्रांति	19-24
3.	फ्रांसिसी क्रांति और नेपोलियन के युद्ध	25-31
4.	राष्ट्रवाद - उदय और प्रभाव	32-32
5.	जर्मनी और इटली का एकीकरण	33-36
6.	औद्योगिक क्रांति	37-43
7.	उपनिवेशवाद (अफ्रीका, प्रशांत-क्षेत्र, मध्य एवं पश्चिम एशिया, चीन) एवं साम्राज्यवाद (जापान और संयुक्त राज्य अमेरिका)	44-74
8.	प्रथम विश्व युद्ध से पूर्व की कुछ प्रमुख घटनाएँ और प्रथम विश्व युद्ध	75-85
9.	प्रथम विश्व युद्ध के प्रभाव तथा लीग ऑफ नेशंस (राष्ट्र संघ)	86-94
10.	1919-39 तक का विश्व	95-117

VISION IAS

Copyright © by Vision IAS

All rights are reserved. No part of this document may be reproduced, stored in a retrieval system or transmitted in any form or by any means, electronic, mechanical, photocopying, recording or otherwise, without prior permission of Vision IAS.

विषय सूची

18वीं शताब्दी से पूर्व का विश्व 7

1. सामंतवाद (Feudalism) 7

1.1. भूमिका 7

1.2. सामंतवाद का विकास क्यों हुआ? 7

1.3. सामंतवाद की विशेषताएं 7

1.3.1. मैनर 8

1.3.2. किसान 9

1.3.3. राजा और सामंत 9

1.4. निष्कर्ष 9

2. चर्च (The Church) 10

2.1. चर्च की बुराईयां 10

3. परिवर्तनशील समय 11

3.1. व्यापार, कस्बों और शहरों का उद्भव 11

3.2. उत्पादन विधि में परिवर्तन: गिल्ड (संघ) 11

3.3. व्यापारी वर्ग के प्रभाव में वृद्धि 11

3.4. पूंजीवादी अर्थव्यवस्था की दिशा में संक्रमण 12

3.5. राजा व्यापारी सांठ-गांठ और किसान विद्रोह 12

4. आधुनिक युग (Modern Era) 12

4.1. पुनर्जागरण और सुधार 12

4.1.1. पुनर्जागरण 12

4.1.2. सुधार आन्दोलन (Reformation) 15

4.2. अंतर्राष्ट्रीय व्यापार का आरंभ 15

4.3. निरंकुश राजतंत्रों का उदय 16

4.4. इंग्लिश रिवोल्युशन (अंग्रेजी क्रांति) 17

5. वैश्विक सप्त वर्षीय युद्ध (1756-63) 17

5.1. भूमिका 17

5.2. युद्ध के कारण 18

5.3. परिणाम: 1763 की पेरिस संधि 18

6. अमेरिकी क्रांति (1765-1783) 19

6.1. भूमिका 19

6.2. अंग्रेजों के प्रति अमेरिका वासियों के आक्रोश के कारण 19

VISION IAS

6.2.1. वाणिज्यिक पूंजीवाद 19

6.2.2. 1763 की घोषणा 20

6.2.3. प्रबुद्ध विचारकों की भूमिका 20

6.2.4. युद्ध (सप्त वर्षीय) व्यय की पुनर्प्राप्ति 21

6.2.5. ब्रिटिश संसद में कोई प्रतिनिधित्व नहीं 21

6.2.6. 1774 का कोएर्सिव एक्ट और फिलाडेल्फिया कांग्रेस 22

6.3. अमेरिकी क्रांति युद्ध या अमेरिकी स्वतंत्रता संग्राम (1775) 23

6.3.1. 1783 की द्वितीय पेरिस संधि 23

6.3.2. अमेरिकी क्रांति की समालोचना 24

7. फ्रांसीसी क्रांति और नेपोलियन के युद्ध 25

7.1. फ्रांसीसी क्रांति के पीछे निहित कारण 25

7.1.1. तीन एस्टेट्स 25

7.1.2. अलोकप्रिय राजतंत्र और वित्तीय कठिनाइयाँ 26

7.1.3. प्रबुद्ध विचारकों की भूमिका 26

7.2. 1789 की फ्रांसीसी क्रांति की घटनाएँ 27

7.2.1. जैकोबियन और नेपोलियन 29

7.3. फ्रांसीसी क्रांति के प्रभाव/रचनात्मक आलोचना 30

7.3.1. पक्ष 30

7.3.2. विपक्ष 31

8. राष्ट्रवाद - उदय और प्रभाव 32

8.1. राष्ट्र की संकल्पना 32

8.2. निरंकुश राजाओं द्वारा दुरुपयोग 32

8.3. क्रांतिकारी विचारकों की भूमिका 32

8.4. औद्योगिक क्रांति और राष्ट्रवाद 32

9. जर्मनी और इटली का एकीकरण 33

9.1. जर्मनी का एकीकरण 33

9.1.1. सामाजिक और आर्थिक स्थिति 33

9.1.2. नेपोलियन के युद्धों और फ्रांसीसी क्रांति की भूमिका 33

9.1.3. लोकतंत्र के अधीन एकजुट करने में विफलता 34

9.1.4. बिस्मार्क के नेतृत्व में एकीकरण: रक्त और लौह की नीति 34

9.2. इटली का एकीकरण 35

9.2.1. 1848 के विद्रोहों की भूमिका 35

9.2.2. प्रधान मंत्री कावूर की बिस्मार्क सदृश नीति के माध्यम से एकीकरण 35

10. औद्योगिक क्रांति 37

10.1. औद्योगिक क्रांति से पहले वस्तुओं के उत्पादन की विधि 37

10.1.1. पुटिंग-आउट प्रणाली 37

VISION IAS

www.examdivision.com ExamDivision.com

10.1.2. कारखाना प्रणाली 37

10.2. औद्योगिक क्रांति क्या है? 37

10.3. इंग्लैंड में ही सर्वप्रथम औद्योगिक क्रांति क्यों? 37

10.4. औद्योगिक क्रांति के घटक 38

10.4.1. वस्त्र क्षेत्रक में क्रांति 38

10.4.2. वाष्प शक्ति/स्टीम पावर 39

10.4.3. लोहे के उत्पादन में क्रांति 40

10.4.4. परिवहन एवं संचार में क्रांति 40

10.4.5. कृषि क्रांति 41

10.5. औद्योगिक क्रांति का प्रभाव 41

10.6. इंग्लैंड के बाहर औद्योगिक क्रांति का प्रसार 43

11. उपनिवेशवाद की परिभाषा 44

12. उपनिवेशवाद का इतिहास 44

12.1 भौगोलिक खोज या अन्वेषण की भूमिका 44

12.2. तकनीकी नवोन्मेष 46

13. औपनिवेशीकरण (Colonization) 47

14. उपनिवेशवाद का प्रभाव 48

15. उपनिवेशवाद और वाणिज्यिक पूंजीवाद में संबंध 49

16. उपनिवेशवाद और साम्राज्यवाद के बीच अंतर 49

17. नव साम्राज्यवाद (New Imperialism) की परिभाषा 50

18. नव साम्राज्यवाद का इतिहास 51

19. अफ्रीका में उपनिवेशवाद 53

19.1. अफ्रीका के लिए फ्रांसीसी संघर्ष 55

19.2. अफ्रीका के लिए ब्रिटिश संघर्ष 56

19.3. अफ्रीका के लिए जर्मनी का संघर्ष 56

19.4. अफ्रीका के लिए इटली का संघर्ष 56

19.5. अफ्रीका पर उपनिवेशवाद के प्रभाव 57

19.5.1. औपनिवेशिक श्वेत लोग कुलीन बन गए और उन्होंने देशी अश्वेतों का शोषण किया 57

19.5.2. दासप्रथा 57

19.5.3. औपनिवेशिक शक्तियों द्वारा जनसंहार 58

19.5.4. *बांटो और राज करो* की नीति से स्वतंत्रता पश्चात् समस्याएं 58

19.5.5. शिक्षा और स्वास्थ्य की अत्यधिक उपेक्षा 58

19.5.6. आर्थिक विकास की क्षति 59

VISION IAS

20. प्रशांत महासागर क्षेत्र में उपनिवेशवाद ______ *59*

21. मध्य और पश्चिमी एशिया में उपनिवेशवाद ______ *60*

22. चीन में साम्राज्यवाद ______ *61*

22.1. चीन की घटनाओं का विवरण ______ 62

22.2. प्रथम एवं द्वितीय अफीम युद्ध (1840-42 और 1858) ______ 62

22.2.1. 1858 में अमूर नदी के उत्तर का क्षेत्र रूस को सौंपना पड़ा ______ 63

22.2.2. मांचू राजवंश और वॉरलॉर्ड युग ______ 63

22.2.3. पांच प्रमुख घटनाएँ ______ 64

22.2.4. प्रथम विश्व युद्ध (1914-19) ______ 65

22.2.5. वॉरलॉर्डस युग (1916-28) ______ 65

22.2.6. 4 मई का आंदोलन (1919) ______ 65

22.2.7. कोमिन्तांग और सन यात सेन ______ 66

22.2.8. च्यांग काई शेक ______ 66

22.2.9. चीनी कम्युनिस्ट पार्टी (1921 के बाद) ______ 66

23. साम्राज्यवादी जापान ______ *68*

24. साम्राज्यवादी संयुक्त राज्य अमेरिका ______ *71*

25. 1914 में विश्व ______ *72*

25.1. यूरोप का अभी भी शेष विश्व पर प्रभुत्व ______ 72

25.2. विश्व शक्तियों की राजनीतिक व्यवस्था में व्यापक भिन्नता ______ 73

25.3. 1880 के बाद साम्राज्यवादी विस्तार ______ 73

26. यूरोप में होने वाले संघर्ष के कारण ______ *73*

27. प्रथम विश्व युद्ध से पूर्व की कुछ प्रमुख घटनाएं ______ *75*

28. आर्कड्यूक की हत्या और प्रथम विश्व युद्ध में इसकी परिणति के लिए उत्तरदायी कारण ______ *77*

29. प्रथम विश्वयुद्ध के दौरान ______ *79*

30. वुडरो विल्सन के 14 सूत्र (1918) ______ *81*

31. मित्र शक्तियों का दृष्टिकोण और शांति समझौते ______ *82*

31.1. वर्साय की संधि ______ 82

31.2. अन्य संधियाँ ______ 83

31.2.1. सेंट जर्मेन की संधि (1919) और ट्रायनॉन की संधि (1920) ______ 83

31.2.2. सेवर्स/सेव्रे की संधि (Treaty of Sevres; 1920) ______ 83

31.3. शांति संधियों की समालोचना ______ 84

32. प्रथम विश्व युद्ध के प्रभाव (1914-19) ______ *86*

33. लीग ऑफ़ नेशन्स (राष्ट्र संघ) ______ *88*

VISION IAS

33.1. लीग ऑफ़ नेशन्स (राष्ट्रसंघ) के उद्देश्य ___ 89

33.2. लीग की संविदा ___ 89

33.3. लीग ऑफ़ नेशन्स (राष्ट्रमंडल) का संगठनात्मक ढांचा ___ 89

33.4. राष्ट्रसंघ के प्रदर्शन का मूल्यांकन ___ 90

33.4.1. राष्ट्रसंघ की सफलता ___ 90

33.4.2. राष्ट्र संघ की विफलता/प्रभावहीनता के कारण ___ 91

33.5. राष्ट्र संघ की विफलता का प्रभाव ___ 93

33.6. राष्ट्रसंघ के साथ संयुक्त राष्ट्र संघ की तुलना ___ 93

33.7. संयुक्त राष्ट्र और राष्ट्रसंघ के बीच समानताएं : ___ 94

34. 1919-29 तक का विश्व ___ 95

35. प्रथम विश्व युद्ध के बाद अंतर्राष्ट्रीय संबंधों में सुधार की दिशा में किए गए प्रयास ___ 95

36. 1929 के बाद की घटनाएं ___ 98

36.1. 1929 का आर्थिक संकट ___ 98

36.2. लॉसेन सम्मेलन (1932) ___ 98

36.3. विश्व निःशस्त्रीकरण सम्मेलन ___ 98

37. फ्रांस-जर्मनी संबंध (1919-33) ___ 98

38. ब्रिटेन-सोवियत रूस संबंध (1919-33) ___ 101

39. सोवियत रूस-जर्मनी संबंध (1919-33) ___ 101

40. सोवियत संघ और फ्रांस के परस्पर सम्बन्ध (1919-33) ___ 102

40.1. वर्साय की संधि ___ 102

41. संयुक्त राज्य अमेरिका की विदेश नीति ___ 103

42. अंतर्राष्ट्रीय संबंध (1933-39) ___ 105

42.1. एडोल्फ हिटलर और नाजी ___ 110

42.1.1. हिटलर के उद्देश्य ___ 111

42.1.2. हिटलर की सफलताएँ ___ 111

VISION IAS

18वीं शताब्दी से पूर्व का विश्व

18वीं एवं 19वीं शताब्दी की घटनाओं को समझने के लिए 18वीं शताब्दी से पूर्व की घटनाओं को समझना आवश्यक है। 18वीं शताब्दी के प्रारंभ की कुछ प्रमुख विशेषताएं इस प्रकार थीं:

- इंग्लैंड में सामंतवाद का अंत (यूरोप के शेष भागों में सामंतवाद का अंत बहुत बाद में हुआ)।
- शहरों और कस्बों की संख्या में वृद्धि।
- व्यापार में वृद्धि।
- भूमि आधारित अर्थव्यवस्था (सामंतवाद) का मुद्रा आधारित अर्थव्यवस्था में संक्रमण।
- व्यापारी वर्ग और निरंकुश सम्राटों का उदय (*इंग्लैंड में आंशिक लोकतंत्र था और 1688 की गौरवपूर्ण क्रांति के बाद, राजशाही की बजाय संसद की सर्वोच्चता थी)। कैथोलिक चर्च की शक्ति में ह्रास हुआ।
- वाणिज्यिक पूंजीवाद का उदय।
- इंग्लैंड और फ्रांस की प्रतिद्वंद्विता चरम पर।

1. सामंतवाद (Feudalism)

1.1. भूमिका

- 600 ई. से 1500 ई. तक की अवधि को यूरोपीय इतिहास में मध्य युग या मध्यकाल की संज्ञा दी गयी है। विशेष रूप से पश्चिमी यूरोप में इस अवधि के दौरान कई सामाजिक और आर्थिक परिवर्तन हुए। मध्यकाल के दौरान पश्चिमी यूरोप में ऐसी सामाजिक व्यवस्था विकसित हुई जो शेष विश्व से बहुत भिन्न थी। इसे 'सामंतवाद' के नाम से जाना जाता है।
- सामंतवाद शब्द 'feud' शब्द से निकला है, जिसका अर्थ 'भूमि का सशर्त स्वामित्व' होता है। सामंतवाद ऐसी नई सामाजिक और आर्थिक व्यवस्था थी जो मध्यकाल (600-1500 ईस्वी) में पश्चिमी यूरोप में तथा आगे चलकर यूरोप के अन्य भागों में प्रचलित हुई।
- इसके अंतर्गत, समाज में वर्गों का विभाजन कठोर था, राजनीतिक रूप से देखें तो यहाँ कोई केंद्रीय शक्ति नहीं थी और ग्राम आधारित अर्थव्यवस्था का प्रचलन था। इस प्रकार ग्राम आधारित अर्थव्यवस्था वस्तुतः आत्मनिर्भर थी और अधिशेष उत्पादन बहुत कम था जिससे व्यापार की संभावना न्यून हो गयी थी। अतः व्यापार एवं शहरों के पतन को इसकी एक विशेषता के रूप में देखा गया है।
- सामंतवाद के अंतर्गत केंद्रीय राजनीतिक शक्ति के अभाव के कारण बहुत सारे सामंतों का राजनीतिक वर्चस्व कायम था जो राजनीतिक, सामाजिक एवं आर्थिक मामलों को नियंत्रित करते थे। इस समय राजा बहुत शक्तिशाली नहीं था। सामंत किसानों का शोषण करते थे और 'सर्फडम' सामंतवाद की महत्वपूर्ण विशेषता बन गई थी। इसके अतिरिक्त, यूरोप में चर्च का प्रभाव धार्मिक मामलों से परे भी विस्तृत था।

1.2. सामंतवाद का विकास क्यों हुआ?

- पश्चिमी यूरोप में केंद्रीय राजनीतिक शक्ति के अभाव के कारण सामंतवाद का विकास हुआ क्योंकि इस समय पश्चिमी यूरोप कई छोटे और बड़े राज्यों में बिखर गया था। ऐसी व्यवस्था में स्थानीय सामंत राजा की तुलना में अधिक शक्तिशाली हो गए और सामाजिक मामलों को नियंत्रित करने लगे।

1.3. सामंतवाद की विशेषताएं

- सामंती व्यवस्था में अर्थव्यवस्था ग्राम आधारित थी और ये ग्राम आत्मनिर्भर थे। इस अवधि के दौरान कस्बों के साथ व्यापार में गिरावट आई। शक्ति का मुख्य स्रोत भूमि थी, न कि मुद्रा।

VISION IAS

1.3.1. मैनर

- किसान सामंत की भूमि पर काम करते थे, जिसे कई जागीरों या मैनरों में संगठित किया गया था। प्रत्येक मैनर में एक गढ़ (सामंत का घर), किसानों के लिए काम करने हेतु खेत, किसानों के रहने के लिए घर, किसानों के लिए गैर-कृषि वस्तुओं का उत्पादन करने हेतु कार्यशालाएं और लकड़हारों हेतु लकड़ी काटने के लिए साझा जंगल होते थे। मैनर में जो भी उत्पादन होता था, उसका सामंत और निवासियों द्वारा उपभोग किया जाता था, जबकि इसमें से बहुत कम वस्तुओं का व्यापार किया जाता था।
- मैनर के श्रमिकों में **सर्फ** और **काश्तकार किसान** सम्मिलित थे। खेत छोटे छोटे भू-खंडों में विभाजित थे। हालांकि भूमि का कुछ भाग काश्तकारों को दिया गया था, जो सामंत को कर के रूप में उपज के एक हिस्से का भुगतान करते थे, शेष भूमि सामंत के अधीन होती थी।

सामाजिक और आर्थिक प्रणाली:

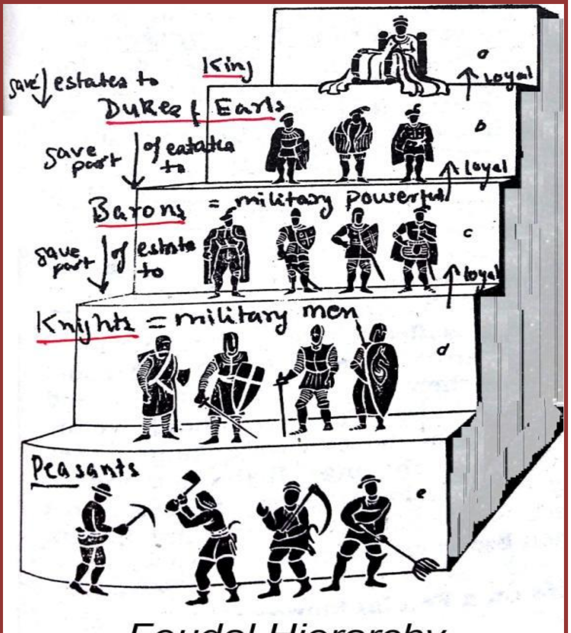

Feudal Hierarchy

1.3.2. किसान

इस काल में किसान निम्नलिखित में वर्गीकृत थे:

- **सर्फ (Serfs):** सर्फ सामन्त की भूमि पर नि:शुल्क काम करते थे और उसकी इच्छानुसार इन्हें सभी कार्य करने पड़ते थे। वे स्वतंत्र नहीं थे और भूमि से बंधे थे। इसका अर्थ यह था कि भूमि स्वामित्व में परिवर्तन होने के साथ ही सर्फ़ का स्वामी भी परिवर्तित होकर एक सामंत से दूसरा सामंत हो जाता था। इस प्रणाली को **सर्फडम** के नाम से जाना जाता था।
- **स्वतंत्र भू-धारक (Freeholders):** इन्हें सामंत से अपनी भूमि मिलती थी। ये स्वतंत्र होते थे और केवल सामंत द्वारा निर्धारित कर का भुगतान करते थे।
- **कृषिदास या छोटे पट्टेदार (Villeins):** इन्हें भी अपनी भूमि सामंत से मिलती थी। कुछ निश्चित दिन ये सामंत के लिए काम करते थे, अन्यथा ये स्वतंत्र होते थे और अपनी कृषि उपज के एक भाग के रूप में कर का भुगतान करते थे।
- **स्वतंत्र व्यक्ति (Freemen):** ये ऐसे सर्फ थे जिन्हें उनके सामंत द्वारा अपने विवेकाधिकार से मुक्त किया गया होता था।

1.3.3. राजा और सामंत

- सामंती पदानुक्रम में शीर्ष पर राजा होता था। राजा के नीचे सामंत लोग भी अधिपति सामंत और अधीनस्थ सामंतों के पदानुक्रम में व्यवस्थित होते थे। प्रत्येक सामंत केवल अपने अधिपति के मातहत भूमिधर होता था। मातहत होने का अर्थ निष्ठा रखना या निष्ठावान होना होता था, जिसके बदले में उसे कुछ औपचारिक अधिकार मिलते थे। यह पदानुक्रमित प्रणाली अलंघनीय थी क्योंकि अधीनस्थ सामंत केवल अपने तात्कालिक अधिपति के आदेशों का पालन करता था, न कि पदानुक्रम में और ऊँचे सामंतों का। इस प्रकार दोहरे कमान की एक ऐसी व्यवस्था विकसित हुई जिसमें केवल दो क्रमागत स्तरों के मध्य ही विभिन्न प्रकार के संबंध विकसित हुए। राजा केवल ड्यूक और अर्ल को आदेश दे सकता था, जो अपने अधीनस्थ सामंतों को आदेश देते थे। ड्यूक और अर्ल को बैरन से सैन्य सहायता मिलती थी, जो सैन्य जनरलों की भांति होते थे, जो आगे नाइट्स पर निर्भर होते थे जो वास्तविक योद्धा होते थे।
- इसके अतिरिक्त, स्वयं कोई भी सामंत अपने अधीन भूमि का प्रत्यक्ष स्वामी नहीं होता था। वह अपने अधिपति के नाम पर भूमि रखता था। इस प्रकार कानूनी रूप से, सभी प्रदेश राजा के अधीन थे। केवल राजा को सामंत के बेटे को नाइट की पदवी देने का अधिकार होता था, जो तब अपने नाम के साथ 'सर' जोड़ सकता था।
- प्रत्येक सामंत के पास अपने सैनिक होते थे और वह अपनी जागीर का एकमात्र अधिकारी होता था। इस प्रकार कार्यात्मक शब्दों में कोई केंद्रीय शक्ति नहीं थी और राजा केवल कानूनी अर्थों में केंद्रीय शक्ति था। परिणामस्वरूप इस समय राजनीतिक एकता की बहुत कमी थी।
- धीरे-धीरे, यह पदानुक्रम वंशानुगत हो गया। सामंत के पुत्र अगले सामंत बन जाते थे और उनके पिता की जागीर उनकी जागीर बन जाती थी।

1.4. निष्कर्ष

- यह बिल्कुल स्पष्ट है कि सामंती समाज में वर्गों का विभाजन कठोर था जिसमें सामाजिक गतिशीलता के लिए कोई गुंजाइश नहीं थी। राजा के पास कोई वास्तविक अधिकार नहीं था और शक्तिशाली सामंत जनता (जिनमें से अधिकांश लोग किसान थे) के कल्याण के लिए नहीं सोचते थे। अधिकांश उपज सामंतों द्वारा विलासितापूर्ण जीवन जीने में बर्बाद कर दी जाती थी, इस कारण समाज में आर्थिक जड़ता आ गई थी। किसानों के लिए गतिविधियों की कोई स्वतंत्रता नहीं थी क्योंकि वे भूमि से बंधे थे और व्यक्तिगत उद्यमिता की तो कोई सम्भावना ही नहीं थी।

VISION IAS

www.examdivision.com ExamDivision.com

2. चर्च (The Church)

- रोमन कैथोलिक चर्च भी सामंतवादी संस्था जितना ही शक्तिशाली था। जब यूरोप के शासकों ने ईसाई धर्म स्वीकार कर लिया तो चर्च का नेतृत्व करने वाला पोप, पश्चिमी यूरोप के ईसाई जगत का प्रमुख बन बैठा। छठी सदी से पोप प्राय: राजा की तुलना में अधिक शक्ति रखता था और उससे अपने आदेशों का पालन करवा सकता था। प्रारंभ में, ईसाई चर्च (वह स्थान जहां पादरी रहते थे) उच्च शिक्षा संस्थान थे। पादरी लोगों के नैतिक जीवन और गरीबों के कल्याण के लिए काम करते थे। लेकिन शीघ्र ही चर्च में भ्रष्टाचार फैल गया।

2.1. चर्च की बुराईयां

- शासनकला पर चीनी नियम पुस्तिका, *ताओ ते चिंग* में दो हज़ार चार सौ वर्ष पहले उपदेश दिया गया था: *"प्राचीन लोगों की परिपाटी ऐसी थी जिससे लोगों का ज्ञानवर्धन नहीं हुआ; इससे घृणा करने की बजाय वे इसका उपयोग करते थे; क्योंकि जनता पर शासन करना तब कठिन होता है जब उनके पास बहुत अधिक ज्ञान होता है। इसलिए, ज्ञान के माध्यम से राज्य पर शासन करना राज्य को दृढ़ बना देना है। अज्ञानता के माध्यम से राज्य पर शासन करने से राज्य में स्थिरता आती है।"* चर्च ने अपना शिकंजा बनाए रखने में इसी सिद्धांत का उपयोग किया। इसके साथ ही, जैसा कि हम बाद में देखेंगे, लोगों के प्रबोधन या ज्ञानवर्धन की यह शक्ति, अमेरिका और फ्रांस की क्रांतियों को विचारों की क्रांति बनाने में बहुत अधिक महत्वपूर्ण थी।

मध्य युग में (600 ईस्वी से 1500 ईस्वी) चर्च में निम्नलिखित बुराईयों का समावेश हुआ :

- चर्च के पदों के लिए धन।
- प्रत्येक अनुष्ठान के लिए धन।
- पाप धुलने के लिए धन। उदाहरण के लिए, चर्च ने "क्षमा पत्र" बेचना आरंभ कर दिया, जिसे खरीदने पर पाप धुलने के लिए तीर्थयात्रा करने की आवश्यकता नहीं रह जाती थी।
- पोप, नन, बिशप इत्यादि भ्रष्ट हो गए और राजाओं की तरह जीवन जीने लगे।
- चर्च के पास विशाल संपत्ति का स्वामित्व था।
- स्थिति में सुधार करने के लिए, चर्च से जुड़े कुछ लोगों ने घुमन्तू पादरियों को प्रचलित किया। इन पादरियों का घर-बार नहीं होता था और ये आत्म-त्याग और शुद्धता का उदाहरण स्थापित करते हुए आम जनता के बीच यात्रा करते थे। लेकिन शीघ्र ही, वे भी भ्रष्ट हो गए। उदाहरण के लिए, वे किसी भी विवाह को प्रमाणित कर देते थे और धन के लिए सभी पाप धो देते थे।
- मध्यकाल में शिक्षा प्रदान करने वाला एकमात्र संस्थान चर्च था। भविष्य में पादरी बनकर ही इस शिक्षा का उपयोग किया जा सकता था। शिक्षा का माध्यम लैटिन होता था जो आम-जन की भाषा नहीं थी।
- चर्च ने "वर्ष में एक बार" पादरी के सामने पापों की स्वीकृति को अनिवार्य बना दिया था और इस नियम के उल्लंघन पर दण्ड का प्रावधान था।
- तर्क, विवेक और विज्ञान को हतोत्साहित किया जाता था। विज्ञान और इतिहास के विषयों की कोई शिक्षा उपलब्ध नहीं थी। यही कारण है कि विज्ञान और प्रौद्योगिकी में आगे चलकर होने वाला विकास वैज्ञानिक क्रांति के रूप में संदर्भित किया जाता है।
- अंधविश्वास और जादू-टोने पर लोग बहुत अधिक विश्वास करते थे। चर्च हिंसक हो गया था। इसने उन लोगों को जलाने का आदेश दिया, जो परमेश्वर, धर्म और यहां तक कि भौतिक घटनाओं के संबंध में उसके विचारों का विरोध करते थे। ऐसा "अपधर्म" के आरोप पर किया जाता था। चर्च द्वारा प्रचारित परमेश्वर का महिमामंडन करने वाले सिद्धांतों (जैसे पृथ्वी सपाट है, या सम्पूर्ण ब्रह्मांड पृथ्वी के चारों ओर घूमता है) का खंडन करने वाले वैज्ञानिक सिद्धांतों को प्रतिपादित करने वाले कई वैज्ञानिकों को चर्च के कोप का शिकार होना पड़ा। डायन के रूप में और बुरी आत्माओं से ग्रस्त होने के रूप में पहचाने जाने के बाद उनमें से कइयों को जला दिया जाता था।

VISION IAS

3. परिवर्तनशील समय

3.1. व्यापार, कस्बों और शहरों का उद्भव

- 7वीं सदी में हुए धर्मयुद्धों से यूरोप अरब देशों के संपर्क में आया। इससे यूरोप का परिचय समृद्ध अरब सभ्यता और उसकी विलासितापूर्ण सामाग्रियों से हुआ। परिणामस्वरूप सामंत स्वामियों के मध्य पूर्व की विलासितापूर्ण वस्तुओं की मांग बढ़ने लगी। इसके साथ ही उत्पादन के तरीकों में सुधार के कारण कृषि उत्पादकता में वृद्धि से भी किसानों के लिए गैर-कृषि वस्तुओं का खरीदार बनना संभव हुआ। इन कारकों से पूर्व के साथ व्यापार में वृद्धि हुई है। शिल्प और कस्बों (जहां शिल्प सामाग्रियाँ तैयार की जाती थीं) का भी महत्व बढ़ने लगा। विशेषकर 11वीं शताब्दी के बाद की अवधि में शहरों, व्यापार और शिल्प का तेजी से उदय हुआ।
- धीरे-धीरे, किसानों ने कारीगरों (अर्थात शिल्पकारों) के रूप में काम करना आरंभ कर दिया और इन नए शहरों में व्यापारी आकर बसने लगे। जैसे-जैसे कस्बों में कारीगरों की संख्या में वृद्धि हुई वैसे-वैसे ये कस्बे विस्तृत होकर शहर बनने लगे। सम्पूर्ण यूरोप में, मुख्य रूप से भूमि आधारित व्यापारिक मार्गों या समुद्री बंदरगाहों के आसपास इन शहरों का विकास हुआ। बंदरगाहों से, एशिया से आयातित वस्तुएं भू-मार्गों के द्वारा यूरोप की मुख्य भूमि तक पहुँचाई जाने लगीं। अपनी अवस्थिति और अच्छे प्राकृतिक बंदरगाह होने के भौगोलिक लाभ के कारण इटली में शहरों का अधिकतम विकास हुआ (जैसे कि वेनिस और जेनोवा जैसे समुद्री-बंदरगाह शहर), जो पूर्व के साथ व्यापार की सुविधा देते थे। यूरोप में इस समय विकसित होने वाले समुद्री-बंदरगाह तथा व्यापार और वाणिज्य के अंतर्देशीय केंद्र अभी भी यहाँ के समृद्ध शहर हैं।

3.2. उत्पादन विधि में परिवर्तन: गिल्ड (संघ)

- बढ़ते व्यापार और कस्बों के साथ-साथ शिल्प में विशेषीकरण के कारण पैदा हुई मांग को पूरा करने के लिए, वस्तुओं के उत्पादन की पद्धति में परिवर्तन की आवश्यकता महसूस की गई। कस्बों के व्यापारियों और कारीगरों ने स्वयं को गिल्डों में संगठित करना आरंभ कर दिया, जो उत्पादित की जा रही वस्तुओं के लिए विशिष्ट होते थे, उदाहरण के लिए सुनार, नाई, चमड़ा श्रमिकों के गिल्ड आदि। गिल्ड प्रणाली के अंतर्गत एक प्रमुख शिल्पकार होता था, जिसके अंतर्गत तीन से चार कर्मचारी या प्रशिक्षु काम करते थे।

3.3. व्यापारी वर्ग के प्रभाव में वृद्धि

- व्यापार के पुनरुद्धार और शहरों के उद्भव के परिणामस्वरूप मध्यम वर्ग नामक एक नए वर्ग का उदय हुआ, जिसमें मुख्य रूप से व्यापारी सम्मिलित थे। धीरे-धीरे शहरों ने सामंती नियंत्रण से स्वयं को मुक्त कर लिया। उनकी अपनी सरकार, जनसेना और न्यायालय थे। ये लोग भूमि से नहीं बंधे थे, उनके पास व्यवसाय की स्वतंत्रता थी और ये स्वतंत्रतापूर्वक चारों ओर आ-जा सकते थे। इन शहरों द्वारा प्रदान की जाने वाली सामाजिक गतिशीलता ने गांवों से किसानों को भी आकर्षित किया।
- **सर्फ** शहरों में स्वतंत्र थे और वे व्यापारियों के लिए आवश्यक श्रमबल प्रदान करते थे। अधिक संख्या में किसानों के आगमन ने शहरों में उत्पादित वस्तुओं के लिए घरेलू बाजार प्रदान किया। शहरों की अर्थव्यवस्था मुद्रा-आधारित थी और भूमि सत्ता का मुख्य स्रोत नहीं थी। स्वामी सामंत को अब श्रम के बजाय नकद में भुगतान किया जाता था। व्यापार से होने वाले लाभ में वृद्धि के कारण व्यापारियों के प्रभाव में वृद्धि हुई। पूर्व के साथ व्यापार से ऐसी वस्तुएँ आईं, जो पूरी तरह से यूरोप के लोगों के लिए नई थीं। इसके अतिरिक्त, ऐसी वस्तुओं की मांग बढ़ी, क्योंकि वे जनता के बीच लोकप्रिय होने लगी थीं। धीरे-धीरे, व्यापारियों ने शहरों में न केवल सामाजिक और आर्थिक, बल्कि राजनीतिक जीवन को भी प्रभावित करना आरंभ कर दिया।

VISION IAS

www.examdivision.com ExamDivision.com

3.4. पूंजीवादी अर्थव्यवस्था की दिशा में संक्रमण

- शहरों में नकदी आधारित आर्थिक प्रणाली प्रचलित हुई। यहां जीवन भूमि की बजाय धन के चारों ओर घूमता था। भूमि का उपयोग नकदी फसलों के उत्पादन के लिए किया जाता था, जो गैर-कृषि वस्तुओं के निर्माण के लिए कच्चे माल के रूप में काम करती थी और कस्बों के किसानों को नकद में भुगतान मिलता था। सोने और चांदी के बजाय मुद्रा धनसंपत्ति का प्रतीक हो गई। सोने और चांदी के रूप में बेकार पड़ी धनसंपत्ति के विपरीत मुद्रा के रूप में मुनाफे का व्यापार होता था और इसे उद्योग में पुन: निवेश किया जा सकता था। ऐसी धनसंपत्ति या मुद्रा को 'पूँजी' कहा जाता है। गांवों के स्थान पर शहर उत्पादन का केंद्र बन गए।

3.5. राजा व्यापारी सांठ-गांठ और किसान विद्रोह

- राजा और व्यापारियों के बीच गठजोड़ में वृद्धि हुई क्योंकि दोनों ही राजनीतिक और आर्थिक शक्ति की आकांक्षा करते थे। जहां राजा सामंती स्वामियों पर निर्भरता से छुटकारा पाना चाहते थे और चर्च के कम हस्तक्षेप की आकांक्षा रखते थे, वहीं व्यापारी व्यापार और वाणिज्य के माध्यम से प्राप्त मौद्रिक लाभ द्वारा अपनी सामाजिक स्थिति की स्वतंत्रता का उपभोग करना चाहते थे।
- मध्य युग (600 ईस्वी से 1500 ईस्वी) के दौरान 14वीं शताब्दी में सामंती संस्थाओं के साथ ही चर्च के विरूद्ध भी कई किसान विद्रोह हुए। कई बार विद्रोही किसान नेताओं ने ऐसे धार्मिक सिद्धांतों का प्रचार किया, जो चर्च से भिन्न था। इस प्रकार, इन सभी घटनाक्रमों के कारण सामंती व्यवस्था का पतन होने लगा, हालांकि यह पूरी तरह से 19वीं शताब्दी तक ही समाप्त हो पाया।

4. आधुनिक युग (Modern Era)

- मध्य युग के अंत तक सामंतवादी व्यवस्था बिखरने लगी थी और आधुनिक युग में यह बिखराव और तीव्र हो गया। 14वीं से 17वीं शताब्दी तक पुनर्जागरण और सुधार जैसी कुछ महत्वपूर्ण घटनाएँ हुईं, जिसके परिणामस्वरूप सामंती व्यवस्था का अंत हो गया।

4.1. पुनर्जागरण और सुधार

4.1.1. पुनर्जागरण

पुनर्जागरण शब्द का अर्थ है 'फिर से जागना'। पुनर्जागरण लगभग 14वीं शताब्दी से आरंभ होकर 17वीं शताब्दी तक चला। इसका आरंभ इटली में हुआ क्योंकि व्यापार ने इटली के शहरों में समृद्धि लाई थी, जोकि सामंती नियंत्रण से स्वतंत्र थी (अपनी विशेष भौगोलिक स्थिति के कारण इटली विदेशी व्यापार का केंद्र था। 15वीं शताब्दी के अंत में खोजी समुद्री यात्राओं के बाद पुर्तगाल और स्पेन और बाद में हॉलैंड, फ्रांस और ब्रिटेन ने व्यापार पर हावी होना आरंभ किया)। बाद में, पुनर्जागरण का विचार इटली से बाकी यूरोप तक फैल गया।

- यह प्राचीन साहित्य के पुनः अध्ययन और प्राचीन ग्रीस और रोम के बारे में जानने के लिए एक आंदोलन के रूप में आरंभ हुआ। लेकिन जल्द ही यह कला, धर्म, साहित्य, दर्शन, विज्ञान और राजनीति में नए विचारों के आन्दोलन में बदल गया। इसके परिणामस्वरूप यूरोप के बौद्धिक और सांस्कृतिक जीवन में चर्च के प्रभाव में गिरावट आई। चर्च मृत्योपरांत जीवन में शांति के बारे में बात करता था, जबकि पुनर्जागरण के विचारकों ने इस धरती पर प्रसन्नता की बात की और चर्च के विचारों पर हमला किया।
- मानववाद पुनर्जागरण की प्रमुख विशेषता थी। मानववाद का अर्थ है - मानव जीवन में रूचि लेना, मानव की समस्याओं का अध्ययन करना, मानव का आदर करना, मानव जीवन के महत्त्व को स्वीकार करना तथा उसके जीवन को सुधारने और समृद्ध एवं उन्नत बनाने का प्रयास करना। इसका अर्थ है ईश्वरत्व के बजाय मानवता पर ध्यान केंद्रित करना। पुनर्जागरण ने धर्मशास्त्र के बजाय मनुष्य और प्रकृति को अध्ययन का केन्द्र बनाया। पार-लौकिक मामलों की चिंता का परित्याग कर दिया गया और उनका ध्यान जीवित व्यक्ति, उनके सुख-दुःख पर था। पुनर्जागरण एक नई मानवतावादी और तर्कसंगत सोच वाले विचार के रूप में आया जिसमें अंधविश्वास का कोई स्थान नहीं था। मनुष्य की क्षमता,

VISION IAS

उसकी गरिमा और उसके अधिकारों पर बल दिया गया। धीरे-धीरे, कला और संस्कृति की विषयवस्तु भी मनुष्य और प्रकृति से संबंधित हो गई। जैसे मेरी और यीशु को धार्मिक प्रतीकों के बजाय मनुष्य के रूप में चित्रित किया गया। दा विंसी, माइकल एंजेलो और राफेल जैसे कलाकार पुनर्जागरण आंदोलन के प्रमुख कलाकार थे। चर्चों में चित्रों का विषय स्वर्ग और नरक से मानवीय रूपों में स्थानांतरित हो गया।

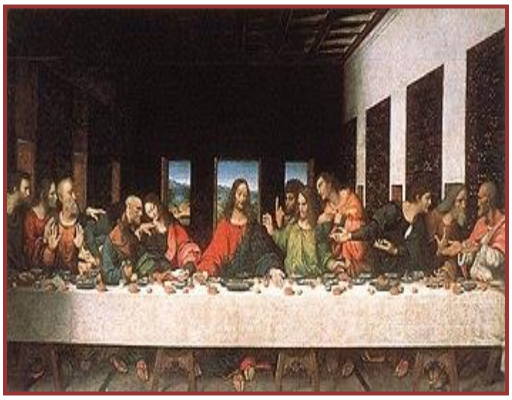

चित्र: द लास्ट सपर- विंची

- इस प्रकार, मानवतावाद नियतिवाद के विरुद्ध था। पुनर्जागरण के प्रभाव का पता पश्चिम के वर्तमान व्यक्तिवादी समाजों को देखकर लगाया जा सकता है, जिसके अंतर्गत अपने जीवन को स्वयं बदलने की क्षमता में विश्वास अभी भी किसी व्यक्ति के मूल्य प्रणाली का एक महत्वपूर्ण अंग है।
- पुनर्जागरण के कारण साहित्य में, लैटिन और यूनानी भाषाओं के स्थान पर स्थानीय यूरोपीय भाषाओं की प्रगति हुई। इस प्रकार पुनर्जागरण ने भाषाई विकास और इसके माध्यम से राष्ट्रीय चेतना के विकास में सहायता की। ***द प्रिंस*** में, **मैक्यावली** ने राज्य की एक नई अवधारणा दी जिसके अनुसार राज्य धर्म से ऊपर था और इसमें राजनीतिक मामलों के सर्वोच्च अधिकार निहित थे। राजनीतिक मामलों को धर्म से अलग माना जाने लगा। इस प्रकार **धर्मनिरपेक्षता को पुनर्जागरण से जोड़ा जा सकता है**।
- 15वीं शताब्दी के पहले 50 वर्षों में प्रिंटिंग प्रेस (छपाई खाना) के आविष्कार ने शिक्षा और नए विचारों का प्रसार किया। हालांकि, इसने अशिक्षित गरीबों को कम प्रभावित किया।

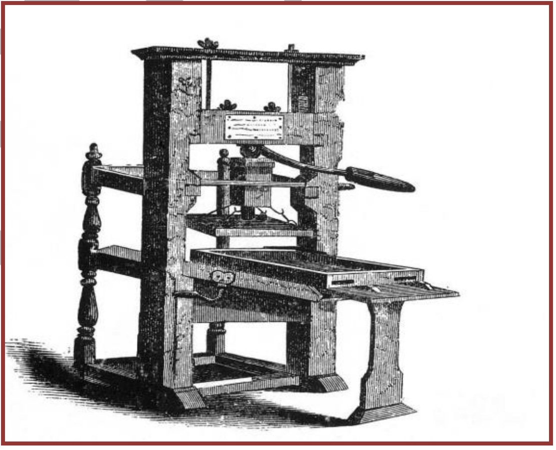

चित्र: प्रिंटिंग प्रेस - जोहांस गुटेनबर्ग

- वैज्ञानिक क्रांति भी इस परिवर्तन का एक उत्पाद था। इसका आरंभ पुनर्जागरण काल के अंत (यानी लगभग 17वीं सदी) में हुआ और 18वीं शताब्दी के अंत तक जारी रहा। भौतिक घटनाओं पर चर्च के दृष्टिकोण को त्याग दिया गया। केवल उन परिघटनाओं को स्वीकार किया गया जिन्हें वैज्ञानिक अवलोकन के तरीकों से समझाया और सत्यापित किया जा सकता था। इस प्रकार प्रयोगों के माध्यम से किसी परिकल्पना के परीक्षण पर ध्यान केंद्रित किया जाने लगा। कॉपरनिकस ने पाया कि पृथ्वी अपनी अक्ष पर घूमती है और साथ ही उसने पृथ्वी के परिक्रमण का हेलीओ-सेंट्रिक (सूर्य-केंद्रित) सिद्धांत प्रस्तुत किया अर्थात् पृथ्वी सूरज के चारों ओर घूमती है {यह चर्च के विचार कि पृथ्वी ब्रह्मांड का केंद्र थी, जिसे जियो-सेंट्रिक (पृथ्वी-केन्द्रित) सिद्धांत भी कहा जाता है, उसके विरुद्ध था}। चर्च ने उसे विधर्मी या धर्म विरुद्ध होने के लिए दंडित किया। उसका साथ देने वाले ब्रूनो को जला कर मार दिया गया। गैलीलियो

ने सन् 1554 में टेलीस्कोप का आविष्कार किया और आकाशीय पिंडों का अध्ययन करने के लिए इसका उपयोग किया। उसने कॉपरनिकस के अवलोकन की पुष्टि की और सिद्ध किया कि ब्रह्मांड एक खुली प्रणाली या व्यवस्था है (चर्च का कहना था कि ब्रह्मांड एक बंद प्रणाली है और इसे भगवान द्वारा गतिमान रखा गया है) और पृथ्वी इसका एक छोटा-सा हिस्सा है। गैलीलियो पर भी विधर्मी होने का आरोप लगाया गया और उसे आगे खगोल विज्ञान पर काम करने की अनुमति नहीं दी गई। जर्मनी के केप्लर ने गणित की मदद से यह समझाया कि ग्रह कैसे सूर्य के चारों ओर घूमते हैं। न्यूटन ने केप्लर के काम को जारी रखा और सिद्ध किया कि सभी आकाशीय पिंड गुरुत्वाकर्षण के नियम के अनुसार गति करते हैं।

मानव शरीर के विच्छेदन के अध्ययन के माध्यम से वेसेलियस ने मानव शरीर की शारीरिक रचना का पूरा विवरण प्रदान किया। 1628 में हार्वे ने रक्त परिसंचरण समझाया। इसने चिकित्सा विज्ञान में मदद की। यंत्रों एवं नए प्रकार के कम्पास के आविष्कार और उन्नत जहाजों के विकास ने 15वीं शताब्दी के अंत में नई भूमियों की खोज में सहायता की। ये जहाज चाहे हवा की दिशा कुछ भी हो, किसी भी दिशा में चल सकते थे। वैज्ञानिक क्रांति ने 17वीं शताब्दी के मध्य में आरंभ हुए एक नये आंदोलन "प्रबोधन" के लिए मार्ग प्रशस्त किया जोकि 18वीं शताब्दी के मध्य में अपने चरम पर पहुंच गया।

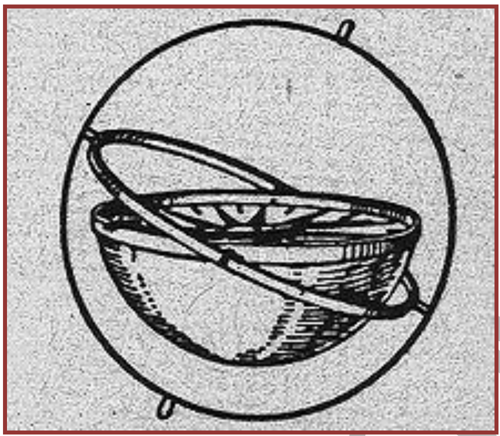

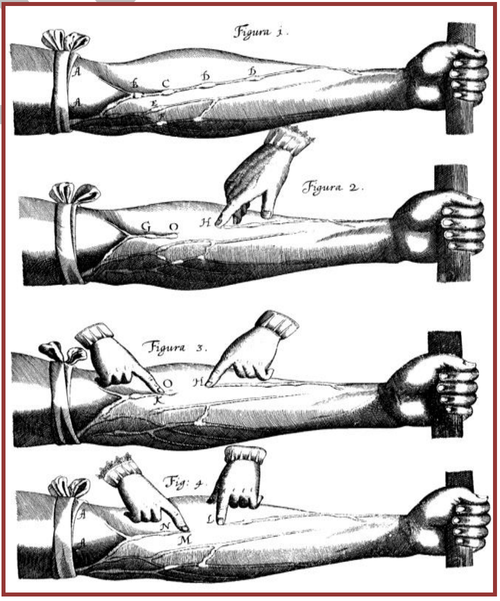

चित्र : 1- कम्पास, 2- गैलीलियो का टेलीस्कोप, 3- वेसेलियस द्वारा मानव शरीर की शारीरिक रचना एवं 4- हार्वे द्वारा रक्त परिसंचरण का प्रयोग

प्रबोधन ने आत्म-नियम, आधारभूत मानव अधिकार और लोकतांत्रिक विचारों पर बल दिया। यूरोप और अन्य स्थानों पर स्वशासन और लोकतंत्र की स्थापना के लिए आंदोलनों के पीछे प्रबोधन प्रेरणा शक्ति था। इस प्रकार, हम देखेंगे कि प्रबोधन ने अमेरिकी क्रांति (1776), फ्रांसीसी क्रांति (1789) और रूसी क्रांति (1905, 1917) में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

4.1.2. सुधार आन्दोलन (Reformation)

- 16वीं शताब्दी धार्मिक सुधारों की भी साक्षी रही, जिसे प्रोटेस्टेंट सुधार और कैथोलिक सुधार में वर्गीकृत किया जा सकता है।
- प्रोटेस्टेंट सुधार (आरंभिक 16वीं शताब्दी) कट्टरपंथी कैथोलिक चर्च की प्रथाओं और अधिकारों के विरुद्ध एक आंदोलन था। इसके परिणामस्वरूप प्रोटेस्टेंटिज़्म का उदय हुआ और कैथोलिक चर्च के विरोध में, प्रोटेस्टेंट नेताओं ने यूरोप के विभिन्न देशों में प्रोटेस्टेंट चर्च स्थापित करना आरंभ कर दिया। क्षमा पत्र और चर्च की अन्य बुराइयों का विरोध करने वाले एक पादरी मार्टिन लूथर के नेतृत्व में पहला प्रोटेस्टेंट चर्च राजा के समर्थन से जर्मनी में (1520-1545 से) स्थापित किया गया।
- राजनीतिक कारणों से भी जर्मन शासकों ने लूथर का समर्थन किया। वे पोप के अधिकार से स्वतंत्रता चाहते थे और चर्च के धन पर नियंत्रण रखना चाहते थे। इसके तुरंत बाद, प्रोटेस्टेंट सुधार यूरोप के बाकी भागों में फैल गया।
- यूरोप के विभिन्न भागों में राष्ट्रवाद के विकास के कारण रोम स्थित कैथोलिक चर्च और पोप के प्राधिकार के विरुद्ध लोगों के मन में घृणा की भावना विकसित हुई। इंग्लैंड में, राजा *हेनरी VIII* ने खुद को चर्च का प्रमुख घोषित कर दिया। इसके पश्चात् रानी एलिज़ाबेथ ने रोमन चर्च से अपनी स्वतंत्रता की घोषणा कर और कुछ सुधारवादी सिद्धांतों को अपना कर इंग्लैंड के चर्च को आधिकारिक चर्च बनाया।
- प्रोटेस्टेंट चर्चों ने संभ्रात लैटिन के बजाय लोगों द्वारा बोली जाने वाली भाषा को अंगीकार किया। बाइबल का स्थानीय भाषाओं में अनुवाद किया गया (यह भारतीय पुनर्जागरण के दौरान संस्कृत के स्थान पर स्थानीय भाषाओं के प्रयोग के समान था)। स्थानीय भाषाओं के उपयोग ने राष्ट्रीय चेतना को और बढ़ा दिया और इस प्रकार पुनर्जागरण और सुधार आंदोलनों को यूरोप में राष्ट्रवाद का प्रणेता कहा जा सकता है।
- तर्कशक्ति को धर्म की तुलना में अधिक महत्व दिया गया।
- 17वीं शताब्दी तक, आधे यूरोप ने अपने प्रोटेस्टेंट चर्चों की स्थापना कर ली थी।
- **कैथोलिक सुधार या प्रति सुधार (काउंटर रिफॉर्मेशन- 16 वीं शताब्दी के उत्तरार्ध में)**
    - यह प्रोटेस्टेंट चर्चों की बढ़ती हुई लोकप्रियता की प्रतिक्रिया में कैथोलिक चर्च द्वारा आरंभ की गई एक सुधार प्रक्रिया थी। स्पेन में, सुधारवादियों ने "यीशु के सैनिक" के रूप में काम करने के लिए पादरियों का एक संगठन बनाया। इस संगठन के सदस्यों को 'ईसाई' नाम से जाना जाने लगा और वे अनुयायियों की वापसी हेतु फ्रांस और जर्मनी गए। उन्होंने भारत, चीन, अफ्रीका और अमेरिका में भी मिशन स्थापित किया।
    - इन सुधारों के पश्चात्, दोनों संप्रदायों के अनुयायियों के बीच धार्मिक युद्ध आरंभ हुए, और दोनों पक्षों के कई अनुयायी मारे गए। इंग्लैंड में प्रोटेस्टेंट के विरुद्ध हिंसा के परिणामस्वरूप उत्तरी अमेरिका में उनका प्रवास हुआ, जहां उनके द्वारा स्थापित उपनिवेशों ने बाद में यू.एस.ए. की स्थापना की नींव रखी। इंग्लैंड में, *राजा चार्ल्स प्रथम* की कैथोलिक समर्थक धार्मिक नीतियों के कारण, यह धार्मिक हिंसा ब्रिटिश गृह युद्ध (1642-51) में परिवर्तित हो गई, जो संसद समर्थकों और राजशाही समर्थकों के मध्य सरकार के प्रारूप को लेकर लड़ा गया था।

4.2. अंतर्राष्ट्रीय व्यापार का आरंभ

- खोजी यात्राओं (15वीं शताब्दी के अंत में) ने यूरोप में आधुनिक युग के आरंभ को विशिष्ट बनाया था। इसके परिणामस्वरूप यूरोपीय लोगों ने एशिया और अमेरिका में नए देशों की खोज की।
- इटली दुनिया के शेष हिस्सों के साथ व्यापार में आभासी एकाधिकार स्थापित करने वाला प्रथम देश था। बाद में 15वीं शताब्दी के अंत में अमेरिका, एशिया और अफ्रीका के नए क्षेत्रों की खोज के कारण

VISION IAS

व्यापार को बढ़ावा मिला। इससे कई यूरोपीय देशों की अर्थव्यवस्था में परिवर्तन आया। इसके अतिरिक्त, इन नए क्षेत्रों की खोज के साथ, उपनिवेशवाद का आरम्भ हुआ। प्रारंभिक औपनिवेशिक शक्तियाँ पुर्तगाल और स्पेन थीं। ब्रिटेन, डच और फ्रांस शीघ्र ही इस होड़ में सम्मिलित हो गए, तथा पुर्तगाल और स्पेन को कई स्थानों पर उनके उपनिवेशों से प्रतिस्थापित कर दिया।

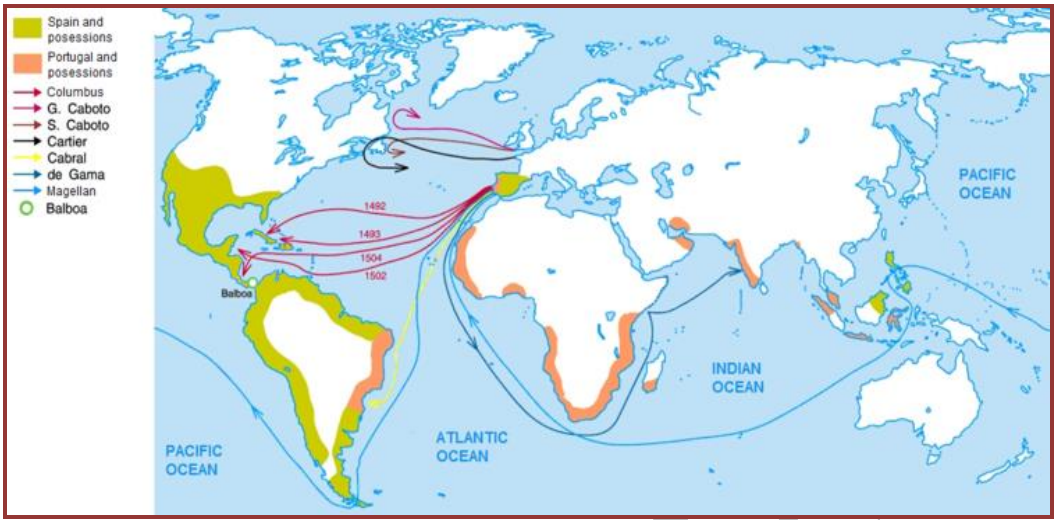

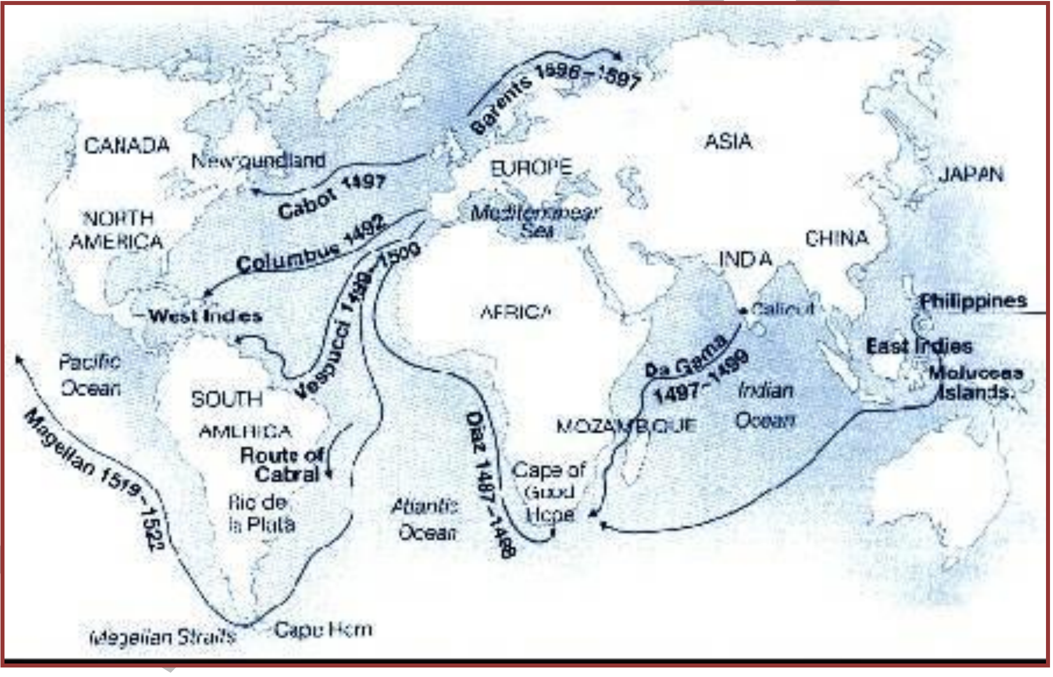

4.3. निरंकुश राजतंत्रों का उदय

- राजा और मध्य वर्ग (अधिकांशतः व्यापारी) के गठजोड़ और मध्य युग (600 ईस्वी से 1500 ईस्वी) के अंत तक सामंतवाद के पतन ने सत्ता पर अपनी पकड़ मजबूत करने में राजा की सहायता की। निरंकुश राजतंत्र के रूप में शक्तिशाली शासकों ने सामंतों को अपने अधीन कर लिया और चर्च के राजनीतिक हस्तक्षेप को खारिज कर दिया।
- सन् 1665 में निरंकुशता को एक लिखित संविधान में सम्मिलित करने वाला डेनमार्क प्रथम राष्ट्र बना। इसके अतिरिक्त, प्रशा (वर्तमान जर्मनी), इंग्लैंड, हॉलैंड, ऑस्ट्रिया, फ्रांस आदि में शक्तिशाली राजतंत्र थे। उदाहरण के लिए, लुई चौदहवें ने 17वीं शताब्दी में फ्रांसीसी साम्राज्य को संगठित किया और 18वीं सदी के पहले दशक तक फ्रांस की गणना एक शक्तिशाली देश के रूप में की जाने लगी।

www.examdivision.com
ExamDivision.com

4.4. इंग्लिश रिवोल्युशन (अंग्रेजी क्रांति)

- इंग्लैंड में निरंकुश राजतंत्र के स्थान पर लोकतांत्रिक शासन के लिए संघर्ष हुआ। अंग्रेजी गृह-युद्ध (1642-51) संसद समर्थकों और राजशाही समर्थक के मध्य लड़ा गया था। संसद समर्थक किंग चार्ल्स प्रथम के निरंकुश शासन के विरुद्ध थे। चार्ल्स प्रथम शासन करने के राजा के दैवीय अधिकार में विश्वास करता था। संसद समर्थकों ने राजा द्वारा संसद की सहमति के बिना करारोपण का विरोध किया। इस गृह-युद्ध के परिणाम स्वरुप:
    - राजा को प्राणदंड दे दिया गया,
    - इंग्लैंड में ईसाई पूजा (Christian worship) पर इंग्लैंड के चर्च (इंग्लैंड का चर्च कैथोलिक समर्थक था, इसने तलाक की इजाज़त जैसे कुछ ही सुधारवादी सिद्धांतों को अपनाया था) के एकाधिकार का अंत हो गया।
    - इस सिद्धांत की स्थापना हुई कि राजा संसद की सहमति के बिना शासन नहीं कर सकता है।
- इंग्लैंड में 1688 की गौरवपूर्ण क्रांति ने कानूनी रूप से संसद की सर्वोच्चता स्थापित की। इससे यह सुनिश्चित हुआ कि शासन-शक्ति की सर्वोच्च अधिकारिणी संसद है, न कि सम्राट। इस क्रांति के दौरान संसद ने पहली बार राजा को नियुक्त किया। राजा को हटा दिया गया और उसके दामाद, हॉलैंड से **विलियम ऑफ ऑरेंज** को राजा बनाया गया। विलियम और उसकी पत्नी मेरी दोनों को अधिकारों की घोषणा की रक्षा की शपथ लेनी पड़ी और अधिकारों की इस घोषणा को बिल ऑफ़ राइट्स (1689) के रूप में परिवर्तित किया गया। इस प्रकार, अंग्रेजी गृह युद्ध (1642-1651) द्वारा स्थापित एक सीमित संवैधानिक राजशाही के साथ, इंग्लैंड संसद के वर्चस्व वाला एक लोकतंत्र बन गया।

5. वैश्विक सप्त वर्षीय युद्ध (1756-63)

(Seven Year Global War)

5.1. भूमिका

- वैश्विक सप्त वर्षीय युद्ध 1756 से 1763 तक लड़ा गया था। वास्तव में यह फ्रांस और ब्रिटेन के बीच नौ वर्षों (1754-63) तक लड़ा गया एक युद्ध था। स्पेन, प्रशा और ऑस्ट्रिया जैसी अन्य यूरोपीय शक्तियाँ भी युद्ध में सम्मिलित थीं। इसे वैश्विक युद्ध कहा जाता है क्योंकि यह उत्तरी अमेरिका, कैरेबियाई देशों, भारत, अफ्रीका के पश्चिमी तट और यूरोप में विभिन्न युद्ध-क्षेत्रों में लड़ा गया था।

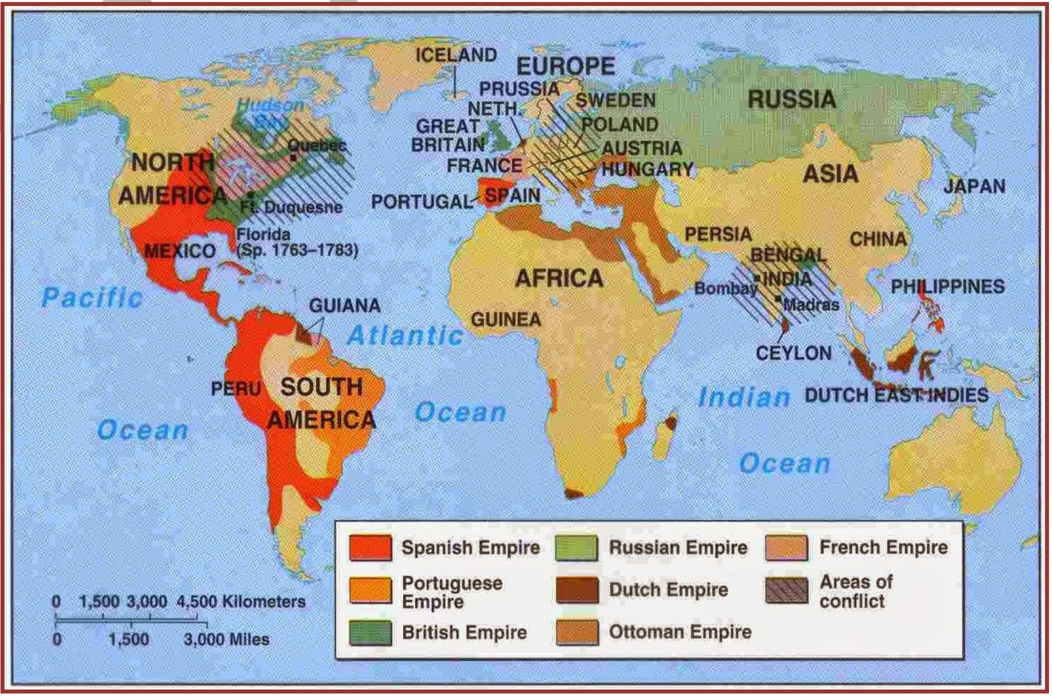

5.2. युद्ध के कारण

- युद्ध के पीछे का मुख्य कारण ब्रिटेन और फ्रांस के बीच उपनिवेशों पर आधिपत्य के लिए होड़ थी।
- उत्तरी अमेरिका में, अटलांटिक महासागर के पश्चिमी तट पर अंग्रेजों की 13 कॉलोनियाँ थीं। वे अधिक कच्चे माल की चाह में पश्चिम की ओर विस्तार करना चाहते थे और उत्तरी अमेरिका में निर्यात का बाजार बढ़ाना चाहते थे। परन्तु पश्चिमी हिस्सा फ्रांस के प्रभुत्व में था। राजनीतिक और आर्थिक मामलों में ब्रिटिश वर्चस्व को रोकने हेतु फ्रांसीसी उत्तरी अमेरिका के पश्चिमी हिस्से पर अपना प्रभुत्व बनाए रखना चाहते थे।
- ब्रिटेन उस समय औद्योगिक क्रांति (1750 के बाद) के दौर से गुजर रहा था। यह विश्व के बाजारों में ब्रिटिश माल को और अधिक प्रतिस्पर्धी बना रहा था। इसके अतिरिक्त, ब्रिटेन एक प्रभावी समुद्री शक्ति के रूप में उभर रहा था और इसके समुद्री व्यापार से होने वाला लाभ भी बढ़ रहा था। इस प्रकार, फ्रांस को डर था कि उत्तरी अमेरिका में मजबूत ब्रिटेन जल्द ही कैरेबियाई देशों में स्थापित फ्रांसीसी उपनिवेशों को चुनौती देगा। हालांकि उनका डर सही साबित हुआ और गन्ने की लाभदायक कृषि वाले उनके कैरेबियाई उपनिवेशों में अंग्रेजों ने स्पेन और फ्रांस के विरुद्ध युद्ध किया।
- पश्चिम अफ्रीकी देश सेनेगल गोंद के प्राकृतिक संसाधनों से समृद्ध था और यहां के फ्रांसीसी व्यापारिक बंदरगाह भी ब्रिटिश हमलों की चपेट में आए थे।
- भारत में 1757 में प्लासी का युद्ध बंगाल के नवाब सिराजुद्दौला और ईस्ट इंडिया कंपनी के बीच लड़ा गया था। इस युद्ध के परिणामस्वरूप ईस्ट इंडिया कंपनी को बंगाल में विशेष व्यापारिक अधिकार प्राप्त हुआ और इस क्षेत्र में अंग्रेजों द्वारा सम्पूर्ण व्यापार पर नियंत्रण ने भारत में फ्रांसीसियों के प्रभाव को कम कर दिया। इसके अतिरिक्त, 1760-61 में फ्रांसीसियों और अंग्रेजों के बीच वांडिवाश की लड़ाई ने दक्षिण एशिया में ब्रिटिश वर्चस्व स्थापित किया, जबकि फ्रांस पांडिचेरी तक ही सीमित हो गया।

5.3. परिणाम: 1763 की पेरिस संधि

- सप्त वर्षीय युद्ध के पश्चात् 1763 में पेरिस की संधि पर हस्ताक्षर किये गये थे जिसके परिणाम स्वरुप:
  - ब्रिटेन को फ्रांस से कनाडा और स्पेन से फ्लोरिडा प्राप्त हुए।
  - फ्रांस को कैरेबियन सुगर आइलैंड्स (गन्ने की कृषि से संपन्न क्षेत्र) अपने पास रखने की अनुमति मिली।
  - क्यूबा और फिलिपींस पर स्पेन के नियंत्रण को मान्यता मिल गई।
- विश्व राजनीति पर सप्त वर्षीय युद्ध का प्रभाव यह रहा कि फ्रांस का प्रभुत्व घट गया, वहीं ब्रिटेन ने अपनी औपनिवेशिक शक्ति को संगठित कर लिया। इसने अमेरिकी क्रांति (1765-83) और फ्रांसीसी क्रांति (1789) के लिए भूमि भी तैयार कर दी थी।

VISION IAS

6. अमेरिकी क्रांति (1765-1783)

6.1. भूमिका

- उत्तरी अमेरिका में, अटलांटिक महासागर के पश्चिमी तट पर अंग्रेजों ने 13 उपनिवेश स्थापित कर लिए थे। सप्त वर्षीय युद्ध के पश्चात्, शेष उत्तरी अमेरिका में फ़्रांस का प्रभुत्व समाप्त हो गया।

6.2. अंग्रेजों के प्रति अमेरिका वासियों के आक्रोश के कारण

- एक ओर जहाँ अंग्रेजों के वाणिज्यिक पूंजीवाद ने श्वेत अमेरिकियों में आक्रोश उत्पन्न किया, वहीं सप्त वर्षीय युद्ध से ऐसी स्थितियाँ उत्पन्न हुईं जिन्होंने अमेरिकी क्रांति के लिए तत्काल चिंगारी का कार्य किया।

6.2.1. वाणिज्यिक पूंजीवाद

- 18वीं शताब्दी में वाणिज्यिक पूंजीवाद अंग्रेजों की औपनिवेशिक नीति का एक प्रमुख हिस्सा था। यह इस विचार पर आधारित था कि सरकार को घरेलू अर्थव्यवस्था और उपनिवेशों को नियंत्रित करना चाहिए, ताकि राष्ट्रीय शक्ति में वृद्धि हो और एक सकारात्मक व्यापार संतुलन स्थापित किया जा सके। एक सकारात्मक व्यापार संतुलन तब प्राप्त होता है जब कोई देश वस्तुओं का शुद्ध निर्यातक (मूल्य के सन्दर्भ में) होता है। यह नीति उपनिवेशों पर व्यापार प्रतिबंध लगाने और इन उपनिवेशों में होने वाले व्यापार में अंग्रेजी कम्पनियों के एकाधिकार की स्थापना के रूप में प्रकट हुई। ये प्रतिबन्ध, अंग्रेजी औपनिवेशिक नीति के वाणिज्यिक पूंजीवाद के अंग थे और अमेरिकियों द्वारा अपने घरेलू उद्योग विकसित करने की राह में बाधक थे। अंग्रेजी कानून के अंतर्गत इन उपनिवेशों पर अपने व्यापार हेतु गैर-ब्रिटिश पोतों का उपयोग प्रतिबंधित था। अमेरिकी उपनिवेशों से कुछ कच्चे माल का निर्यात केवल ब्रिटेन को ही किया जा सकता था। इसके अतिरिक्त गैर-ब्रिटिश वस्तुओं के अमेरिका में आयात पर बहुत भारी शुल्क लगाया गया था। इस प्रकार के व्यापार प्रतिबन्ध वाणिज्यक पूंजीवाद के विशिष्ट लक्षण हैं।
- इसके अतिरिक्त, अमेरिकियों के ऊपर लौह और वस्त्र उद्योग की स्थापना पर कानूनी प्रतिबंध था। क्योंकि लौह और वस्त्र के तैयार माल का निर्यात अंग्रेज व्यवसायियों के लिए एक बहुत ही लाभप्रद व्यवसाय था।

चित्र: अमेरिकी क्रांति का एक दृश्य

©Vision IAS

6.2.2. 1763 की घोषणा

- अमेरिकी क्रांति का उद्देश्य उत्तरी अमेरिका में अंग्रेजी उपनिवेशवाद को समाप्त करना था। अंग्रेजी संसद ने सप्त वर्षीय के युद्ध की समाप्ति पर सशस्त्र विद्रोह प्रारम्भ करने वाले अमेरिकी मूल निवासियों अर्थात रेड इंडियंस, के साथ युद्धविराम के रूप में **"1763 की घोषणा"** (Proclamation of 1763) जारी की जिसमें अमेरिकी अधिवासियों पर अप्लेशियन पर्वत की ओर विस्तार करने पर प्रतिबन्ध लगा दिया गया क्योंकि यह क्षेत्र अब रेड इंडियंस के लिए आरक्षित था।
- इस घोषणा के पीछे का एक और कारण कुलीन अंग्रेजों द्वारा की गई पैरवी भी थी, जो पश्चिम की ओर विस्तार नहीं चाहते थे क्योंकि उन्होंने अमेरिकी उपनिवेशों में जो भूमि खरीदी थी उस पर बसने वाले श्वेत निवासियों से प्राप्त होने वाले किराये से लाभान्वित हो रहे थे। श्वेत अमेरिकी निवासी जिन्होंने पश्चिम की ओर विस्तार के लिए अंग्रेजों के साथ मिल कर सप्त वर्षीय युद्ध लड़ा था, अब अपने आप को ठगा अनुभव कर रहे थे, इसलिए उन्होंने इस घोषणा की अवहेलना की। उनकी स्थानीय सेनाओं ने पश्चिमी क्षेत्र को अपने नियंत्रण में लाना जारी रखा।

6.2.3. प्रबुद्ध विचारकों की भूमिका

- प्रबोधन या "तर्क का युग" एक आन्दोलन था। इसे 17वीं शताब्दी में **हॉब्स** और **लॉक** जैसे विचारकों ने सरकार के प्रारूप और लोगों के अधिकारों को लेकर प्रस्तुत किया था। 18वीं सदी के मध्य में यह अपने चरम पर था।
- **हॉब्स** निरपेक्ष राजशाही का समर्थक था और उसने सामाजिक अनुबंध की अवधारणा प्रस्तुत की, जिसका अर्थ यह था कि चूंकि सभी लोग स्व-हित में व्यवहार करते हैं अतः लोगों को अपने कुछ अधिकार सरकार के लिए छोड़ देने चाहिए, जिसके बदले में सरकार द्वारा समाज को कानून और व्यवस्था प्रदान करनी चाहिए।
- दूसरी ओर, **लॉक** ने मनुष्य के संबंध में सकारात्मक दृष्टिकोण प्रस्तुत किया और उसका मानना था कि मनुष्य अपने अनुभव से सीख सकता है। वह स्व-शासन की अवधारणा का समर्थक था। लॉक के अनुसार जन्म से सभी लोग स्वतंत्र और समान हैं और उनके पास **तीन प्राकृतिक अधिकार हैं – जीवन, स्वतंत्रता और सम्पत्ति**। लॉक का कथन था कि सरकार का कर्तव्य है कि वह इन अधिकारों की रक्षा करे। यदि सरकार ऐसा करने में विफल रहती है तो, नागरिकों को उसे उखाड़ फेंकने का अधिकार है। **(विद्रोह का यह अधिकार, फ्रांसिसी क्रांति में जैकोबियन संविधान का भाग भी था।)**
- इन आधुनिक विचारकों और दार्शनिकों ने अमेरिकी और फ़्रांसीसी क्रांतियों में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई थी। 1750 के आसपास, कई विचारक यथास्थिति को चुनौती दे रहे थे और लोगों के लिए स्वतंत्रता (freedom) और स्वाधीनता (liberty) की मांग कर रहे थे। इन आधुनिक विचारकों और दार्शनिकों ने लोगों के समक्ष शासन के लोकतान्त्रिक स्वरूप का विचार प्रस्तुत किया। उन्होंने गणतंत्रवाद और उदारवाद के विचारों को विकसित होने में सहायता की, जो उपनिवेशवाद के विरुद्ध प्रभावी थे। लॉक, हैरिंगटन और मिल्टन जैसे अंग्रेज दार्शनिकों की यह मान्यता थी कि मनुष्यों के कुछ मौलिक अधिकार होते हैं, जिनका कोई भी सरकार उल्लंघन नहीं कर सकती। 1690 में लॉक ने मनुष्यों के तीन प्राकृतिक अधिकारों को परिभाषित किया। मॉन्टेस्क्यू ने शक्तियों के पृथक्करण के सिद्धांत का वर्णन किया। फ्रांस के **टॉमस पेन** ने यह तर्क दिया कि यह हास्यापद है कि एक महाद्वीप (उत्तरी अमेरिका) पर एक द्वीप (ब्रिटेन) का शासन है।
- फ़्रांस में 18वीं शताब्दी के मध्य में प्रबुद्ध विचारकों ने निम्नलिखित विचार प्रस्तुत किए, जिन्होंने, अमेरिकी क्रांति और फ़्रांसीसी क्रांति दोनों ही को प्रभावित किया था:
  - **तर्क:** प्रबुद्ध विचारकों का विश्वास था कि सत्य की खोज तर्क या तर्कसंगत सोच के माध्यम से की जा सकती है। उन्होंने कहा, कि तर्क का अर्थ है किसी की विचारधारा में असहिष्णुता और पूर्वाग्रह का अभाव।

VISION IAS

www.examdivision.com ExamDivision.com

- **प्रकृति:** उनके लिए जो भी प्राकृतिक था वह अच्छा और उचित था। उनका विश्वास था कि जैसे गति के प्राकृतिक नियम हैं, उसी प्रकार से अर्थशास्त्र और राजनीति शास्त्र के भी प्राकृतिक नियम हैं।
- **प्रसन्नता:** प्रकृति के नियमों के अनुसार जीने वाला व्यक्ति प्रसन्नता प्राप्त कर ही लेगा। ये दार्शनिक चर्च की इस मध्ययुगीन धारणा को लेकर क्षुब्ध थे कि लोगों को मृत्यु के पश्चात् प्रसन्नता प्राप्त करने के लिए इस संसार में व्याप्त दु:खों को स्वीकार कर लेना चाहिए। ये पृथ्वी पर सबका कल्याण चाहते थे और उनका विश्वास था कि यह सम्भव है।
- **प्रगति:** समाज की प्रगति में इन यूरोपीय दार्शनिकों ने सर्वप्रथम विश्वास किया। एक वैज्ञानिक दृष्टिकोण के साथ उनका यह मानना था कि, समाज और मानवता को पूर्ण बनाया जा सकता है।
- **स्वाधीनता:** इन दार्शनिकों को उन स्वतंत्रताओं से ईर्ष्या थी जिसे ब्रिटिश जनता ने अपनी गौरवपूर्ण क्रांति (1688) में प्राप्त किया था। फ्रांस में भाषण, धर्म, व्यापार और व्यक्तिगत यात्रा पर कई प्रकार के प्रतिबन्ध थे। उनका मानना था की तर्क के द्वारा समाज को मुक्त किया जा सकता है।

6.2.4. युद्ध (सप्त वर्षीय) व्यय की पुनर्प्राप्ति

- सप्त वर्षीय युद्ध में ब्रिटेन का बहुत धन व्यय हुआ था। जब उसने युद्ध के व्यय को उत्तरी अमेरिका के उपनिवेशों पर टैक्स थोप कर वसूलने का निर्णय किया तो वहाँ के निवासियों ने इसका विरोध किया।

6.2.5. ब्रिटिश संसद में कोई प्रतिनिधित्व नहीं

- ब्रिटिश संसद ने 1765 में स्टाम्प अधिनियम पारित किया, जिसमें अमेरिका के सभी ब्रिटिश उपनिवेशों में सभी प्रकार के व्यवसायिक लेन-देन पर **स्टाम्प कर** लगा दिया गया। उदाहरण के लिए कुछ राशि की टिकट सभी कानून दस्तावेजों किए लिए अनिवार्य बनाई गयी। अमेरिकियों ने इसके प्रतिक्रिया स्वरूप ब्रिटिश वस्तुओं का बहिष्कार किया और जल्द ही कई शहरों में विद्रोह शुरू हो गए जहाँ से कर अधिकारियों को भगा दिया गया।
- चूंकि, ब्रिटिश संसद में कोई अमेरिकी प्रतिनिधित्व नहीं था, इसलिए अमेरिकी नेताओं ने ब्रिटेन द्वारा उन पर किसी भी प्रकार का कर लगाने के अधिकार का विरोध किया। इसके अतिरिक्त अमेरिकियों ने यह अनुभव किया कि इस प्रकार एकत्र किये गये धन को अंग्रेजों के हितों के लिए उपयोग किया गया था, न कि अमेरिकी लोगों के विकास के लिए। **मैसाचुसेट्स सभा** में सभी 13 उपनिवेशों के नेता एकत्र हुए और उन्होंने, **प्रतिनिधित्व नहीं तो कर नहीं (No Taxation without Representation)** के नारे को अपनाया।
- अमेरिकी नेताओं द्वारा ब्रिटिश वस्तुओं के आयात को रोकने की धमकी ने अंग्रेजों को स्टाम्प अधिनियम निरस्त करने के लिए विवश कर दिया।
- पुनः, अमेरिकियों ने उपनिवेशों में उपभोक्ता वस्तुओं के आयात पर शुल्क के विरोधस्वरूप ब्रिटिश वस्तुओं के आयात को घटा कर आधा कर दिया, जिसने अंग्रेजों को चाय पर कर के अतिरिक्त सभी करों को वापस लेने के लिए विवश कर दिया। चाय पर कर बहुत अधिक नहीं था, फिर भी ब्रिटिश सरकार ने इसे वापस नहीं लिया, क्योंकि वे अमेरिकी उपनिवेशों पर अपने कराधान के अधिकार को बनाए रखना चाहते थे। ***1773 की बोस्टन टी पार्टी*** वस्तुतः चाय पर कर लगाए जाने के विरोधस्वरुप घटित हुई थी। बोस्टन बन्दरगाह पर चाय से भरे एक पोत ने लंगर डाला था। प्रारम्भ में तो अमेरिकियों ने पोत को खाली करने की अनुमति नहीं दी, परिणामस्वरूप कई दिन तक अनिश्चय की स्थिति बनी रही। अंत में जब बोस्टन के ब्रिटेन समर्थक गवर्नर ने पोत को खाली करने का आदेश दिया तो श्वेत प्रवासियों ने अमेरिकी इंडियंस जैसे परिधान पहन कर चाय के सभी डिब्बों को समुद्र में फेंक कर नष्ट कर दिया। कुपित ब्रिटिश सरकार ने इसके प्रतिक्रिया स्वरूप बोस्टन के सभी बन्दरगाहों को व्यापार के लिए बंद कर दिया और **1774 का कोएर्सिव एक्ट (Coercive Acts)** पारित कर दिया। (अमेरिकियों ने इन्हें ब्रिटिश सरकार द्वारा पारित **इनटॉलरेबल एक्ट** का नाम दिया था।)

VISION IAS

चित्र: बोस्टन टी पार्टी

6.2.6. 1774 का कोएर्सिव एक्ट और फिलाडेल्फिया कांग्रेस

- बोस्टन टी पार्टी की घटना के लिए ब्रिटेन ने मैसाचुसेट्स को दंडित करने एवं उसके स्वशासन के अधिकार को समाप्त करने के लिए **कोएर्सिव एक्ट** पारित किया था, जिसकी प्रतिक्रिया स्वरुप 12 उपनिवेशों (जार्जिया ने इसमें भाग नहीं लिया था क्योंकि यह अमेरिकी इंडियन्स के आतंक से निबटने में अंग्रेजों की सहायता पाना चाहता था) ने मिलकर पहले **महाद्वीपीय कांग्रेस या फिलाडेल्फिया कांग्रेस (1774)** का आयोजन किया था। अमेरिकियों ने सम्राट जार्ज तृतीय से घरेलू उद्योगों पर से प्रतिबन्ध हटाने, सभी देशों के साथ कम दरों पर व्यापार करने और अमेरिकी उपनिवेशों पर उनकी सहमति के बिना कर न लगाने की अपील भी की थी। ब्रिटेन ने इन मांगों का अर्थ एक विद्रोह के रूप में लिया और उपनिवेशों पर 1775 में हमला कर दिया। इसके कारण अमेरिकी प्रतिनिधियों ने **1776 में स्वतंत्रता का घोषणापत्र** बनाया (जिसका प्रारूप **थॉमस जेफरसन** द्वारा बनाया गया था), इसके निम्नलिखित बिंदु थे:
    - ईश्वर ने सभी मनुष्यों को समान बनाया है।
    - ईश्वर ने उन्हें कुछ ऐसे अधिकार दिए हैं, जिन्हें उनसे कोई छीन नहीं सकता। इन अधिकारों में जीवन, स्वतंत्रता और सुख के लिए प्रयत्न शामिल हैं।
    - गणतंत्रवाद, अर्थात सत्ता का स्रोत जनता है और दृढ़तापूर्वक यह कहा गया कि जनता को अपनी सरकार बनाने का पूर्ण अधिकार है।
    - स्वतंत्रता अर्थात अमेरिकी उपनिवेशों का ब्रिटिश सरकार ने दमन किया था और इन उपनिवेशों को मुक्त और स्वतंत्र राज्य होना चाहिए (*ध्यान दें यहाँ उपनिवेशों ने स्वयं को "स्वतंत्र राज्य" घोषित किया था। संयुक्त राज्य संघ बनाने के लिए राज्यों के साथ आने का सिद्धांत इन पंक्तियों में स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है)।
- स्वतंत्रता के घोषणापत्र ने दो कार्य किए – इसने "स्व-प्रमाणित सत्य (self evident truths)" के रूप में लॉक जैसे प्रबुद्ध विचारकों के राजनीतिक दर्शन का सार उपलब्ध कराया और उपनिवेशों और मातृ-देश से संबंध विच्छेद के औचित्य को सिद्ध करने के लिए शिकायतों को सूचीबद्ध किया।

VISION IAS

चित्र: महाद्वीपीय कांग्रेस या फिलाडेल्फिया कांग्रेस (1774)

6.3. अमेरिकी क्रांति युद्ध या अमेरिकी स्वतंत्रता संग्राम (1775)

- इसके पश्चात् की घटना को अमेरिकी स्वतंत्रता संग्राम कहा गया। राजभक्त ऐसे ब्रिटिश प्रवासी थे जो ब्रिटेन के प्रति निष्ठावान रहे और उनकी ओर से लड़े। फ्रांस, स्पेन और डच गणराज्य ने गुप्त रूप से अमेरिकियों की सहायता की। 1777 में ब्रिटेन ने कनाडा की ओर से हमला कर के अमेरिका को घेरने का प्रयास किया। इस युद्ध में उनकी विफलता अमेरिकियों के पक्ष में एक महत्त्वपूर्ण मोड़ सिद्ध हुई। स्पेन की सेना ने ब्रिटिश सेना को फ्लोरिडा से खदेड़ दिया। (फ्लोरिडा सप्त वर्षीय युद्ध से अंग्रेजों के पास था। बाद में फ्लोरिडा को अमेरिका ने स्पेन से खरीद लिया था)।
- 1783 में ब्रिटिश कमांडर कार्नवालिस ने जार्ज वाशिंगटन के नेतृत्व वाली सेना के समक्ष आत्मसमर्पण कर दिया।

6.3.1. 1783 की द्वितीय पेरिस संधि

- अमेरिकी स्वतंत्रता संग्राम इस संधि के साथ समाप्त हुआ। इस संधि के कुछ महत्त्वपूर्ण अनुच्छेद इस प्रकार थे:
  - संयुक्त राज्य अमेरिका और ब्रिटेन के मध्य सतत शांति।
  - सभी अमेरिकी उपनिवेशों को स्वतंत्र, सार्वभौम और स्वतंत्र राज्यों के रूप में मान्यता दी गई, इसके साथ ही ब्रिटेन ने सरकार, सम्पत्ति और क्षेत्र पर सभी दावों को छोड़ दिया।
  - अमेरिका ने सभी राजभक्त लोगों की जब्त की गई भूमियों को वापस कर दिया।
  - स्पेन ने ब्रिटेन के साथ एक अलग संधि पर हस्ताक्षर किए और फ्लोरिडा को वापस ले लिया (जिसे 1763 की पेरिस की संधि के पश्चात् ब्रिटेन को दे दिया था)।

www.examdivision.com ExamDivision.com

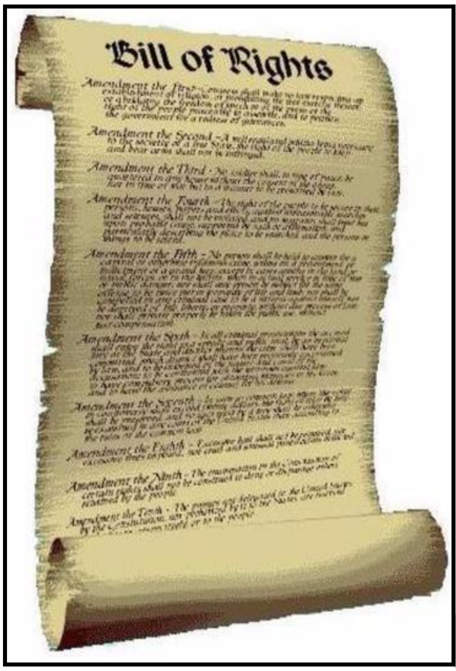

6.3.2. अमेरिकी क्रांति की समालोचना

- 1789 में संयुक्त राज्य का संविधान प्रभावी हो गया। यह पहला लिखित गणराज्यिक संविधान था। **बिल ऑफ़ राइट्स** संयुक्त राज्य अमेरिका के संविधान के पहले दस संशोधनों का समूह है और इसमें अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता, प्रेस, धर्म और न्याय की स्वतंत्रता सम्मिलित है।
- अमेरिकी क्रांति ने विश्व के पहले लोकतान्त्रिक गणराज्य की स्थापना की। जल्द ही अमेरिका औद्योगिक क्रांति के युग में प्रवेश कर गया। इसके साथ ही इसने उत्तरी अमेरिका में पश्चिमी की ओर अपने क्षेत्र का विस्तार किया और फ़्रांस से लुइसियाना जैसे क्षेत्र को 1803 में और स्पेन से फ्लोरिडा को 1819 में खरीद लिया।
- संयुक्त राज्य अमेरिका का गणतन्त्र भी पूर्वाग्रहों से मुक्त नहीं था। गणराज्य वास्तव में लोकतान्त्रिक नहीं था, क्योंकि महिलाओं, अश्वेतों और रेड इंडियन्स को मतदान का अधिकार नहीं था। समानता के सिद्धांत पर **दासता** एक धब्बा थी और अंततः दासता का उन्मूलन अमेरिका के उत्तरी और दक्षिणी राज्यों के बीच 1861-65 के गृहयुद्ध के पश्चात् ही किया जा सका। दक्षिणी राज्य दासता उन्मूलन के विरुद्ध थे, क्योंकि उनकी अर्थव्यस्था कृषि आधारित थी और उसके लिए उन्हें सस्ते अश्वेत श्रमिकों की आवश्यकता थी। उन्होंने दास व्यापार से लाभ भी अर्जित किया था और वे चाहते थे कि दास प्रथा का विस्तार नए अधिग्रहीत क्षेत्रों में भी किया जाए।
- यह तर्क दिया जा सकता है कि अमेरिकी संविधान में जिस मनुष्य को संदर्भित किया गया है वह सम्पत्तिवान मनुष्य है, क्योंकि अधिकार केवल उन्हीं लोगों को दिए गये थे जिनके पास सम्पत्ति थी।
- फिर भी, अमेरिकी क्रांति का सबसे महत्त्वपूर्ण योगदान यह रहा कि इसने स्वाधीनता, समानता, मौलिक अधिकार, राष्ट्रवाद और उपनिवेशवाद विरोधी विचारों को आगे बढ़ाया। उस समय में कुलीन वर्ग को बिना किसी विशेषाधिकार के सभी के लिए समानता एक क्रन्तिकारी विचार था, जबकि समूचा विश्व सामन्तवाद के अधीन था, जहाँ कुलीन वर्ग प्रमुख वर्ग था। सम्पत्ति पर कोई भी कर न लगाने का विचार, जो सम्पत्ति के अधिकार से प्रभावी हुआ था अपने समय में एक अनूठा विचार था। इस प्रकार से अमेरिकी क्रांति विचारों और राजनीतिक व्यवस्था की क्रांति थी और भविष्य की घटनाओं पर इसका बहुत प्रभाव पड़ा, उनमें सबसे प्रमुख 1789 की फ़्रांस की क्रांति थी।

VISION IAS

www.examdivision.com ExamDivision.com

7. फ्रांसीसी क्रांति और नेपोलियन के युद्ध

- क्रान्ति से पूर्व फ्रांस में जो राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक परिस्थितियाँ मौजूद थीं उनके लिए 'पुरातन व्यवस्था' शब्द का प्रयोग किया जाता है। फ्रांसीसी क्रांति निरंकुश शासन, विशेषाधिकार प्राप्त समाज एवं संकटग्रस्त अर्थव्यवस्था का उत्पाद थी।

7.1. फ्रांसीसी क्रांति के पीछे निहित कारण

7.1.1. तीन एस्टेट्स

- 18वीं सदी के फ्रांस का समाज विशेषाधिकार एवं विशेषाधिकार विहीन वर्गों में विभक्त था। फ़्रांसीसी समाज तीन वर्गों या एस्टेट्स में विभाजित था। **पादरी** लोग प्रथम स्टेट्स में आते थे, **कुलीन वर्ग** द्वितीय एस्टेट्स में और तृतीय एस्टेट्स के लोग **जनसाधारण** वर्ग से सम्बंधित थे, जिसमें मध्यम वर्ग, कृषक, दस्तकार, शहरी श्रमिक, व्यापारी और बुद्धिजीवी लोग सम्मिलित थे। इस वर्ग में ही अधिकांश आबादी सम्मिलित थी।

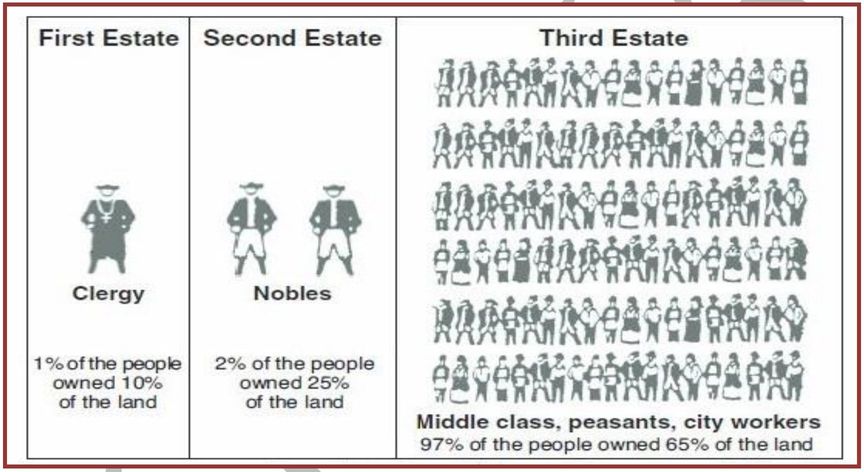

चित्र: थ्री एस्टेट्स

- पादरी लोग भी दो वर्गों में विभाजित थे- उच्च एवं निम्न। उच्च पादरी वर्ग के पास अपार धन था तथा ये सबसे बड़े भूस्वामी थे तो दूसरी ओर निम्न वर्ग के पादरी चर्च के सभी धार्मिक कार्यों को संपादित करते थे तथा सामान्य जीवन जीते थे। यह वर्ग जनसाधारण से सहानुभूति रखता था तथा क्रान्ति के समय इन लोगों ने क्रांतिकारियों का साथ दिया। कुलीन वर्ग का सरकारी सेवा, सेना और अन्य सार्वजनिक पदों के सभी महत्वपूर्ण आधिकारिक पदों पर एकाधिकार था। हालांकि, पादरी और कुलीन वर्ग के लोग किसी कर का भुगतान नहीं करते थे और कोई उत्पादक काम नहीं करते थे।
- किसान आबादी का 80 प्रतिशत थे। किसानों में भी, भू-स्वामी किसान, काश्तकार और भूमिहीन श्रमिक आदि रूपों में कई स्तरों पर उप-विभाजन था। भू-स्वामी किसानों का प्रतिशत बहुत कम था। काश्तकारों को अपनी उपज का 2/3 भाग लगान के रूप में भुगतान करना पड़ता था। वहीं दूसरी ओर, भूमिहीन श्रमिक, बहुत ही तुच्छ मजदूरी पर जीवन निर्वाह करते थे। हालांकि, तकनीकी रूप से कोई भी सर्फ नहीं था, लेकिन अभी भी सामंत के सामंती विशेषाधिकार के रूप में बेगार अस्तित्व में था और प्रायः यह सार्वजनिक कार्यों के लिए लिया जाता था।
- मध्यम वर्ग में लेखक, चिकित्सक, सिविल सेवक जैसे शिक्षित लोग और व्यापारियों जैसे संपन्न लोग थे। हालांकि आर्थिक रूप से मध्यम वर्ग महत्वपूर्ण था, लेकिन उन्हें समाज में बहुत कम सामाजिक प्रतिष्ठा

VISION IAS

©Vision IAS

और राजनीतिक अधिकार प्राप्त थे। दस्तकार और शहरी श्रमिक भी गरीबी में दुःखमय जीवन जी रहे थे। उन्हें कार्यस्थल पर कोई अधिकार नहीं प्राप्त था और नियोक्ता द्वारा अच्छे आचरण के प्रमाण पत्र के बिना वे नौकरी नहीं बदल सकते थे। मध्य वर्ग की कुछ आर्थिक शिकायतें भी थीं। इस वर्ग ने व्यापार-वाणिज्य से संपत्ति तो अर्जित कर ली थी, परन्तु उनके व्यापार पर कई तरह के प्रतिबन्ध लगे थे और इन्हें जगह-जगह चुंगी देनी पड़ती थी। व्यापार के लिए उन्मुक्त वातावरण की चाह में ही इन लोगों ने क्रान्ति को नेतृत्व प्रदान किया।

- तृतीय एस्टेट्स के पास मताधिकार नहीं था। वहीं दूसरी ओर, पादरी लोग और कुलीन वर्ग के लोग किसी भी तरह के कर का भुगतान नहीं करते थे और कर का बोझ पूरी तरह से तृतीय एस्टेट्स द्वारा वहन किया जाता था। यही लोगों की शिकायतों का प्रमुख कारण था। इस प्रकार 1789 ई. की फ्रांसीसी क्रान्ति कई मायनों में फ्रांसीसी समाज में व्याप्त असमानता के विरुद्ध संघर्ष थी।

7.1.2. अलोकप्रिय राजतंत्र और वित्तीय कठिनाइयाँ

- राजा लुई XIVवें (1643-1715) ने 'मैं ही राज्य हूँ' (I am the state) की संकल्पना के आधार पर निरंकुश राज्य की स्थापना की और शक्ति का अतिशय केन्द्रीकरण राजतंत्र के पक्ष में कर दिया। इसके उत्तराधिकारी राजा लुई XVवां (1715-1774) व लुई XVIवां (1774-1793) विलासी, अदूरदर्शी और निष्क्रिय शासक थे। लुई XVIवां निकृष्ट बुद्धिमत्ता वाला अकुशल, अयोग्य तथा अकर्मण्य शासक था। लोग उसकी पत्नी मैरी एंटोनिएट से घृणा करते थे। वह अधिकारियों की नियुक्ति में हस्तक्षेप किया करती थी। राजा भी अधिकारियों को नियुक्त करने में पक्षपात (भाई-भतीजावाद) करता था। देश की शासन पद्धति पूरी तरह नौकरशाही पर निर्भर थी, जो वंशानुगत थी।
- औद्योगिक क्रान्ति के उभरते लक्षणों का लाभ ये राजा अपने उद्योग-धंधों के लिए नहीं ले पाए और इसे मात्र अपने व्यक्तिगत हितों के लिए ही प्रयोग करते रहे। उद्योगों पर राज्य के कड़े नियंत्रण के कारण बेरोजगारी बढ़ी और इसने तस्करी और लूट-पाट की घटनाओं को भी बढ़ाया। राजा लुई XVवें के अधीन, आस्ट्रिया के उत्तराधिकार युद्ध एवं सप्तवर्षीय युद्ध जैसे महंगे युद्धों के कारण फ्रांस में वित्तीय संकट व्याप्त था। अमेरिकी क्रांति में ब्रिटेन के विरूद्ध फ्रांस द्वारा किये गए अमरीकियों की सहायता ने फ्रांस को दिवालिएपन के कगार पर पहुँचा दिया था। जहां एक ओर फ्रांस अमेरिकी क्रांति का समर्थक था (जिसका उद्देश्य लोगों के लिए स्वशासन, स्वतंत्रता, समानता और लोकतंत्र था), वहीं दूसरी ओर फ्रांस में निरंकुश राजतंत्र था। इस प्रकार यहाँ की शासन व्यवस्था अमेरिकी क्रांति की नींव रखने वाले विचारों के साथ फिट नहीं बैठती थी।

7.1.3. प्रबुद्ध विचारकों की भूमिका

- फ्रांस के मध्यवर्ग में परिवर्तन की संभावना और उसके लिए आकांक्षा पैदा करने में फ्रांसीसी विचारकों ने महत्वपूर्ण योगदान दिया। 18वीं शताब्दी में यूरोप में वैचारिक स्तर पर एक नया दृष्टिकोण अपनाया जा रहा था। उनका नारा **'तर्क, सहिष्णुता और मानवता'** था। इस प्रकार क्रांतिकारी प्रबुद्ध विचारकों ने फ्रांसीसी क्रांति को सिर्फ हिंसात्मक होने से बचाया ही नहीं अपितु इसे एक बौद्धिक स्तर भी प्रदान किया। इन विचारकों में वाल्टेयर, मॉन्टेस्क्यू, रूसो आदि का नाम लिया जा सकता है। तार्किकता के आधार पर इन विचारकों ने तर्क दिया कि मनुष्य प्रसन्न रहने के लिए पैदा हुआ है, न कि पीड़ा भोगने के लिए; जैसा कि चर्च का कहना है। समाज में प्रचलित पूर्वाग्रहों को समाप्त करके यह प्रसन्नता प्राप्त की जा सकती है।
- इसके अतिरिक्त, उन्होंने धर्मनिरपेक्षता पर ध्यान केंद्रित किया क्योंकि या तो वे ईश्वर को मानते ही नहीं थे या फिर अपनी चर्चाओं में उसकी उपेक्षा करते थे। प्रकृति के सिद्धांत ने पादरियों को विचारकों के हमले के दायरे में ला दिया। उन्होंने बल दिया कि प्रकृति के नियमों का अध्ययन करने की आवश्यकता है और धर्म इसमें कोई सहायता नहीं कर सकता है बल्कि तर्क की शक्ति प्रकृति की समझ की कुंजी है।

VISION IAS

- **वाल्टेयर** ने अपनी पुस्तक के माध्यम से ब्रिटेन की उदार राजनीति, धर्म और विचार की स्वतंत्रता का वर्णन कर फ्रांस की पुरातन व्यवस्था में व्याप्त बुराईयों को उजागर किया। उसका मानना था कि सभी धर्म व्यर्थ हैं क्योंकि वे विवेक व तर्क के विरूद्ध थे। नास्तिक और भौतिकवादी लोकप्रियता प्राप्त कर रहे थे क्योंकि इसमें दिखाया जाता था कि मनुष्य की नियति उसके अपने हाथों में है।
- **मॉन्टेस्क्यू** ने 'दैवीय अधिकारों के सिद्धांतों' का खण्डन करते हुए **'शक्ति के पृथक्करण'** का सिद्धांत प्रतिपादित कर मात्र फ्रांसीसी राजनीतिक संस्थाओं की आलोचना ही नहीं की अपितु एक विकल्प भी प्रस्तुत किया। उसने न तो क्रान्ति की बात की और न ही राजतंत्र को समाप्त करने की वकालत की बल्कि उसने केवल निरंकुश राजतंत्र के दोषों को उजागर किया और संवैधानिक राजतंत्र की बात की।
- **रूसो** ने भी क्रान्ति की बात नहीं की लेकिन उसने मनुष्य की स्वतंत्रता और समानता का पक्ष लिया। उसने घोषित किया कि जनता की इच्छा ही किसी सरकार को वैध बनाती है। फ्रांसीसी क्रान्ति के नारे स्वतंत्रता, समानता और बंधुत्व उसी के विचारों से प्रभावित थे। **नेपोलियन** ने उसके महत्व को स्वीकार करते हुए कहा कि **यदि रूसो नहीं होता तो फ्रांस में क्रान्ति नहीं होती**।
- **दिदरो** ने विश्वकोष (इनसाइक्लोपीडिया) के माध्यम से धार्मिक असहिष्णुता, दोषपूर्ण कर व्यवस्था, गुलामों के व्यापार और निर्मम फौज़दारी कानून जैसी व्यवस्थाओं पर प्रहार किया। विचारकों का एक वर्ग इस समय फ्रांस की आर्थिक अव्यवस्था और उसके विश्लेषण पर भी केन्द्रित था। इनमें **तूर्जो, क्वेसने और मिराबों** प्रमुख हैं। क्वेसने मुक्त व्यापार, व्यापारिक उत्पादन एवं वितरण की पूर्ण स्वतंत्रता का समर्थक था तथा चुंगी कर एवं अन्य करों का विरोधी था। इस प्रकार स्पष्ट रूप से दार्शनिकों और विचारकों ने फ्रांसीसी क्रांति की पृष्ठभूमि तैयार की।

7.2. 1789 की फ्रांसीसी क्रांति की घटनाएँ

- 1789 में, राजा लुई XVIवें ने अतिरिक्त कोष के लिए सहमति प्राप्त करने हेतु एस्टेट्स जनरल की बैठक बुलाई। एस्टेट्स जनरल तीनों एस्टेट्स की पुरानी सामंती सभा थी। तृतीय एस्टेट्स के प्रतिनिधियों ने अतिरिक्त कोष का विरोध किया क्योंकि वही एकमात्र करदाता थे और ऐसे किसी भी अतिरिक्त वित्त से पड़ने वाले कर का बोझ उन्हें ही उठाना पड़ता। हालांकि उन्होंने सभा के लिए दोगुने प्रतिनिधित्व की मांग की थी और प्राप्त भी कर लिया था, लेकिन जब उन्हें पता चला कि प्रतिनिधियों की संख्या से निरपेक्ष सभी तीनों एस्टेट्स को बराबर मत प्राप्त होगा तो वे क्रुद्ध हो गए। जब वाद-विवाद में गतिरोध पैदा हो गया, तो तृतीय एस्टेट्स के प्रतिनिधियों ने अपने आपको **नेशनल असेंबली** घोषित कर दिया, जो एस्टेट्स की सभा (जैसे एस्टेट्स जनरल) की बजाय लोगों की सभा थी। शीघ्र ही वे अपनी बैठक निकट के शाही टेनिस कोर्ट में लेकर चले गए। उन्होंने घोषणा की कि वे केवल तृतीय वर्ग के नहीं सारे राष्ट्र के प्रतिनिधि हैं। उनका लक्ष्य फ्रांस के लिए संविधान तैयार करना था जिसमें तृतीय एस्टेट्स का भी मताधिकार होता। द्वितीय एस्टेट्स ने इसे पुरातन व्यवस्था समाप्त करने के प्रयास के रूप में देखा और राजा को नेशनल असेंबली को कुचलने के लिए विवश किया। जब राजा ने तृतीय एस्टेट्स के नेताओं को तितर-बितर करने के लिए सैनिकों को भेजा, तो लोग क्रुद्ध हो गए और बास्तील किले (यहां प्रायः राजनीतिक बन्दी रखे जाते थे) को तोड़ने चल पड़े (14 जुलाई 1789)। उन्होंने कैदियों को मुक्त करा लिया और जेल में संग्रहीत हथियारों और गोला-बारूद पर नियंत्रण प्राप्त कर लिया। यह राजा के विरूद्ध प्रतीकात्मक विद्रोह था और वस्तुत: इसने उसके अधिकार के अंत को प्रदर्शित किया। बास्तील की घटना के बाद, नेशनल असेंबली ने कानून बनाना आरंभ किया और **मनुष्य और नागरिकों के अधिकार** (Rights of Man and Citizen) नामक फ्रांसीसी क्रांति के प्रसिद्ध प्रलेख को अंगीकृत किया। नेशनल असेंबली ने सामंतवाद का उन्मूलन कर दिया, फ्रांसीसी चर्च पर से रोमन नियंत्रण को समाप्त कर दिया और राजव्यवस्था में चर्च का प्रभाव कम करने के लिए चर्च की शक्तियाँ कम कर दीं।

VISION IAS

चित्र: बास्तील किले का पतन

- मनुष्य और नागरिकों के अधिकारों की घोषणा (27 अगस्त 1789) में निम्नलिखित बिंदु निहित थे:
  - सभी मनुष्य स्वतंत्र और समान हैं।
  - कानून के समक्ष समानता।
  - दोषसिद्धि तक निर्दोषता का सिद्धांत।
  - सभी लोग सार्वजनिक पदों के लिए योग्य हैं।
  - भाषण और प्रेस की स्वतंत्रता।
  - निजी संपत्ति का अधिकार, जब तक कि सार्वजनिक कल्याण इस अधिकार का उल्लंघन करना आवश्यक न बनाए।
  - समाज के पास प्रत्येक सिविल सेवक से उत्तरदायित्व की मांग करने का अधिकार है।
- इस प्रलेख ने राष्ट्र शब्द को उसका आधुनिक अर्थ दिया, अर्थात् राष्ट्र एक प्रदेश में रहने वाले लोगों का कुल योग है, न कि स्वयं प्रदेश। राष्ट्र के विचार के बाद लोगों की संप्रभुता का विचार आया। इस प्रकार लोग सभी शक्तियों और प्राधिकारों का स्रोत थे और लोगों से ऊपर कोई भी शासक नहीं हो सकता था, सिवाय गणतंत्र के।
- फ्रांसीसी क्रांतिकारी युद्ध (The French Revolutionary War) 1792 से 1802 तक लड़े गए कई युद्धों की एक श्रृंखला थी। फ्रांस ने ये युद्ध ऑस्ट्रिया, प्रशा और सेवाय (इटालियन राज्य) के निरंकुश राजतंत्रों के विरूद्ध लड़े। इसके पीछे प्रमुख कारण यह था कि ये निरंकुश राजतंत्र क्रांति से व्युत्पन्न स्वतंत्रता और समानता के विचारों के विरुद्ध सत्ता पर अपनी पकड़ ढ़ीली होने से खुद को बचाने की इच्छा रखते थे। इन्हें क्रांतिकारी युद्धों के रूप में जाना जाता है क्योंकि फ्रांस 1789 की क्रांति की रक्षा करने का प्रयास कर रहा था, जिसे पड़ोसी राजतंत्रों से खतरा था। पड़ोसी राजतंत्रों को अपने देशों में फ्रांसीसी क्रांति फैलने का डर था। इसलिए वे फ्रांस में राजतंत्र पुनर्स्थापित करना चाहते थे। फ्रांसीसी बलों ने सहायता प्रदान करके और स्वतंत्रता, समानता तथा बंधुत्व के विचारों का प्रसार करके उन क्षेत्रों के लोगों का भी समर्थन जुटाने का प्रयास किया जो उनके नियंत्रण में आए। 1793 में राजा और फ्रांस की रानी को मृत्यु के घाट उतार दिया गया और फिर फ्रांस ने ब्रिटेन, हॉलैंड, स्पेन और हंगरी के विरूद्ध पूर्व-रक्षात्मक (pre-emptive) युद्ध घोषित कर दिया।

VISION IAS

7.2.1. जैकोबियन और नेपोलियन

- मतदाता के रूप में योग्य होने के लिए, व्यक्ति की एक निश्चित सीमा से अधिक आय होनी चाहिए थी। इस सशर्त मताधिकार के कारण तृतीय एस्टेट्स का बहुमत अभी भी मतदाता नहीं बन सका था। अभिजात्य वर्ग का स्थान बुर्जुआ वर्ग ने ले लिया था और किसानों और शहरी श्रमिकों की स्थिति में उस तरह का सुधार नहीं आया था जैसी उन्होंने आशा की थी। इसके तुरंत बाद, 1793 में कट्टरपंथी, उग्र और संगठित जैकोबियन फ्रांस में सत्ता में आए। उन्होंने आय खंड हटाकर मताधिकार को शर्तरहित बना दिया।
- जैकोबियन के अधीन, फ्रांसीसी क्रांति क्रांतिकारी चरण में पहुंच गया। **जैकोबियन दल का नेता रॉब्सपीयर** था, इसे **आतंक के शासन** (Reign of Terror) के प्रतीक रूप में जाना गया। यह **गिलोटिन** के माध्यम से उन सभी को मृत्यु के घाट उतार देना चाहता था जो क्रांति के विरोधी थे। राजा और रानी को 1793 में मृत्यु के घाट उतार दिया गया। सीधा सा विचार यह था कि सभी आलोचकों के विरूद्ध गिलोटिन का प्रयोग करके एक नई शुरुआत की जा सकती थी। शीघ्र ही असहमति व्यक्त करने वाले किसी भी व्यक्ति को दण्डित करने के लिए गिलोटिन का उपयोग किया जाने लगा। जैकोबियन के अधीन फ्रांस ने अराजकता के दौर में प्रवेश किया जहां कानून के शासन के लिए बहुत कम गुंजाइश थी।

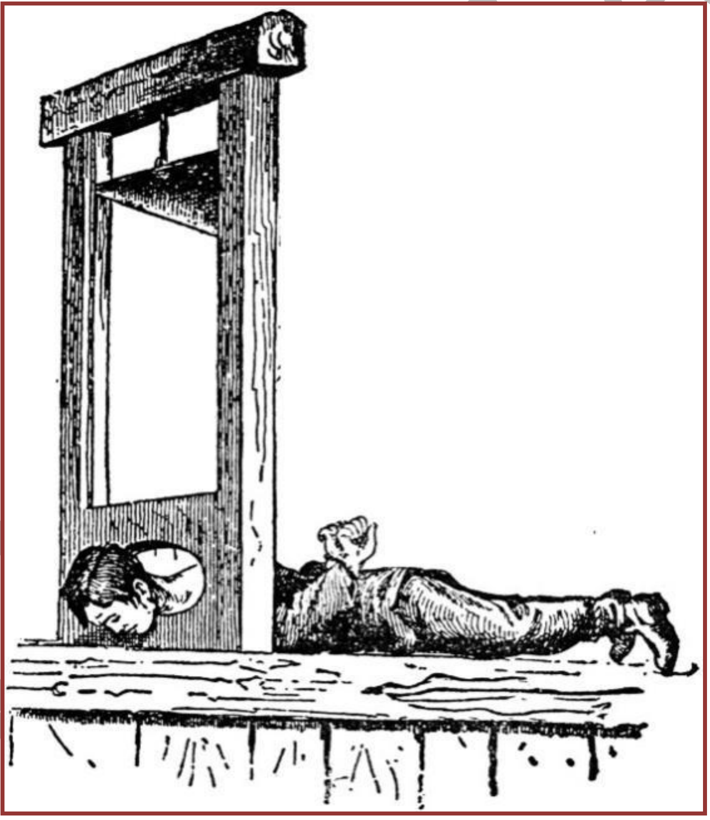

चित्र: गिलोटिन

- कई जैकोबियन्स को भी मृत्यु के घाट उतार दिया गया। शीघ्र ही स्वयं जैकोबियन दल भी **रॉब्सपीयर** के विरूद्ध खड़े हो गए और गिलोटिन के माध्यम से उसका अंत कर दिया और इस प्रकार **आतंक का शासन** समाप्त हो गया। बुर्जुआ वर्ग फिर सत्ता में आ गया और उनकी सरकार को **डाइरेक्टरी** कहा गया। 1795 में उन्होंने सशर्त मताधिकार पुनर्स्थापित करते हुए फिर से संविधान तैयार किया। इसके साथ ही फ्रांसीसी सेना की शक्ति और प्रतिष्ठा भी बढ़ रही थी। 1799 में, तख्तापलट के माध्यम से नेपोलियन फ्रांस को सैन्य शासन के अधीन लाया। कुछ वर्ष बाद उसने स्वयं को सम्राट घोषित कर दिया और फ्रांस में राजतंत्र पुन: स्थापित हो गया।

 ©Vision IAS

रॉब्सपीयर

नेपोलियन

- 1803 और 1815 के बीच के वर्ष नेपोलियन के युद्धों के लिए जाने जाते हैं। इस काल में फ्रांस शेष यूरोप के विरूद्ध लड़ा और फ्रांस की क्रांति के विचारों को इसने अपने विजित क्षेत्रों तक फैलाया। नेपोलियन की सेना ने सर्फडम को समाप्त कर दिया और यूरोप में विजित क्षेत्रों के प्रशासन का आधुनिकीकरण किया। 1815 में वाटरलू (यूनाइटेड किंगडम ऑफ़ नीदरलैंड-वर्तमान बेल्जियम) में नेपोलियन की पराजय के बाद, शेष यूरोप के राजतंत्रों ने पुराने राजवंश की सत्ता में आने में सहायता की। लेकिन फ़्रांस का यह राजतंत्र कभी भी 1789 की क्रांति से पूर्व के स्तर पर अपना नियंत्रण पुनर्स्थापित नहीं कर पाया और शीघ्र ही फ्रांस क्रांतियों की चार लहरों का साक्षी बना और अंततः 1871 में गणराज्य बन गया।

7.3. फ्रांसीसी क्रांति के प्रभाव/रचनात्मक आलोचना

7.3.1. पक्ष

- फ्रांसीसी क्रांति का न केवल फ्रांस पर बल्कि शेष विश्व पर महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ा। फ्रांस के साथ युद्धों ने स्पेन और पुर्तगाल जैसी यूरोपीय औपनिवेशिक शक्तियों को दुर्बल बना दिया और दक्षिण और मध्य अमेरिका में उनके उपनिवेशों ने अपने आप को स्वतंत्र गणराज्य घोषित कर दिया। मध्य अमेरिका में फ्रांसीसी क्रांति से प्रेरित होकर हैती ने सशस्त्र विद्रोह के माध्यम से 1804 में स्वयं फ़्रांस से स्वतंत्रता प्राप्त कर ली। यह विद्रोह 1792 में आरंभ हुआ था। 1813 से लेकर 1824 के दौरान **साइमन बोलीवर** ने कई दक्षिण अमेरिकी देशों को स्वतंत्र कराया और आगे चलकर उन्हें कोलंबिया (Gran Columbia) के नेतृत्व में संयुक्त राज्य अमेरिका के जैसे एक संघ के रूप में संगठित करने का प्रयास किया। उसने सशस्त्र विद्रोह के माध्यम से स्पेनिश शासन से वेनेजुएला, कोलंबिया, इक्वाडोर, पेरू और बोलीविया को मुक्त कराया।
- फ्रांसीसी क्रांति के बाद दासता का उन्मूलन इस दमनकारी व्यवस्था के विरूद्ध पहला कदम था। ब्रिटेन ने 1833 में इस ओर कदम बढ़ाया जबकि संयुक्त राज्य अमेरिका ने 1865 में इस पर प्रतिबंध लगाया।

VISION IAS

- इसके चलते फ्रांस में सामंतवाद का विनाश हो गया क्योंकि पुरातन सामंती व्यवस्था के सभी कानूनों को निरस्त कर दिया गया था और चर्च की भूमि जब्त कर ली गई थी और उसका पुनर्वितरण कर दिया गया था। विशेषाधिकार प्राप्त वर्ग, अर्थात् प्रथम और द्वितीय एस्टेट्स का उन्मूलन कर दिया गया। 19वीं सदी में यूरोप में फैलने वाली सामंतवाद विरोधी लहर अपनी उत्पत्ति के लिए फ्रांस में होने वाली घटनाओं की ऋणी थी। इसके साथ ही, फ्रांसीसी क्रांति ने प्रचलित सामंतवाद के विरूद्ध पूंजीवाद की नवीन आर्थिक व्यवस्था में प्रवेशक का कार्य किया।
- जैकोबियन संविधान पहला वास्तविक लोकतांत्रिक संविधान था, हालाँकि यह कभी भी प्रभावी नहीं हो पाया था। इसने सभी को मत देने का अधिकार और यहां तक कि विद्रोह करने का अधिकार दिया, जिसका तात्पर्य सरकार के विरूद्ध विद्रोह करने या उठ खड़े होने का अधिकार है। जैकोबियन संविधान के अधीन सरकार पर सभी को काम देने का भी उत्तरदायित्व था और लोगों की 'प्रसन्नता' राज्य की अति महत्वूपर्ण नीति बनने वाली थी।
- नेपोलियन के शासन के अधीन, फ्रांस के लिए नागरिक संहिता के रूप में नेपोलियन संहिता प्रचलित की गई। सरकारी नौकरियों के लिए योग्यता आधारित भर्ती और स्पष्ट रूप से लिखित कानून जैसे इसके कुछ प्रावधान फ्रांस और अन्य राष्ट्रों की वर्तमान कानूनी प्रणाली पर अभी भी अपना प्रभाव डाल रहे हैं।
- फ्रांसीसी क्रांति ने पूरे विश्व के उपनिवेशों में उपनिवेशवाद के विरुद्ध आंदोलनों को प्रेरित किया, जबकि लोकतंत्र और स्वशासन का आंदोलन पूरे यूरोप में उठ खड़ा हुआ। फ्रांसीसी क्रांति में, श्रमिक वर्ग ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी। क्रांति लाने के लिए उन्होंने गुप्त समाजों का गठन किया था। आगे चलकर पूरे यूरोप, विशेषकर औद्योगिक ब्रिटेन में श्रमिकों की एकता में वृद्धि देखी गई (जैसा कि 1830 और 1840 के दशक के चार्टिस्ट आंदोलन में परिलक्षित हुआ)। इसने श्रमिकों को मताधिकार और अन्य कल्याणकारी उपाय प्राप्त करने में सहायता की। फ्रांसीसी क्रांति के समानता और स्वतंत्रता के विचारों ने 19वीं सदी में ब्रिटेन को और अधिक लोकतांत्रिक देश बनाने में सहायता की।

7.3.2. विपक्ष

- इन सब के बावजूद अपने उद्देश्यों को प्राप्त करने में **फ्रांसीसी क्रांति को सीमित सफलता मिली**। वास्तव में, क्रांति के बाद आने वाला शासन श्रमिकों की शिकायतें दूर करने में विफल रहा जो कि 1789 के विद्रोह के दौरान महत्वपूर्ण थे। इससे केवल किसानों को लाभ पहुँचा था (क्योंकि वे विशेषाधिकार प्राप्त वर्गों से जब्त भूमि के स्वामी बन बैठे थे)। क्रांति लोकतांत्रिक शासन लाने में विफल रही थी और जैकोबियन के अधीन **आतंक के शासन** के दौरान बड़े पैमाने पर आम लोगों को मौत के घाट उतार दिया गया था।
- अपने निरंतर युद्धों के कारण **नेपोलियन** मुक्तिदाता के रूप में नहीं, बल्कि एक विजेता के रूप में देखा गया जिसकी परिणति आक्रांत क्षेत्रों में राष्ट्रवाद के उदय के रूप में हुई। यह राष्ट्रवाद 1870 के दशक में जर्मनी और इटली के एकीकरण के लिए लाभप्रद सिद्ध होने वाला था।

VISION IAS

www.examdivision.com ExamDivision.com

8. राष्ट्रवाद - उदय और प्रभाव

- फ्रांसीसी क्रांति से राष्ट्रीयता का उदय हुआ और राष्ट्रीय सीमाओं के पुनर्निर्माण सहित विश्व पर इसका महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ा।
- ब्रिटेन और फ्रांस पहले राष्ट्र-राज्य थे जहाँ राष्ट्रवाद उदित हुआ।

8.1. राष्ट्र की संकल्पना

- फ्रांसीसी क्रांति तक ब्रिटेन के अतिरिक्त समस्त यूरोप सामंती व्यवस्था के अधीन था और राष्ट्र की कोई अवधारणा नहीं थी। लगभग पूरे यूरोप में राजाओं द्वारा शासित बिखरे हुए प्रदेशों वाले साम्राज्य थे, जहां सामंत अपनी जागीर के स्वामी थे और कस्बे और शहर शासन की इकाई थे। इस प्रकार राष्ट्र-राज्य जैसी कोई अवधारणा विद्यमान नहीं थी, जैसा कि इसे आज हम समझते हैं। फ्रांसीसी क्रांति ने राष्ट्र की अवधारणा प्रदान की जिसमें सम्पूर्ण जनता सम्मिलित थी और इसी में संप्रभुता निहित थी। इस प्रकार, फ्रांसीसी और अमेरिकी क्रांतियों के कारण राष्ट्रवाद का निरूपण स्वशासन के रूप में किया जाने लगा।

8.2. निरंकुश राजाओं द्वारा दुरुपयोग

- इसके अतिरिक्त, जब नेपोलियन ने यूरोप के कुछ क्षेत्रों पर आक्रमण किया तो वहां के निरंकुश राजाओं ने इस आक्रमण का विरोध किया और इस आक्रमण के विरूद्ध अपने प्रदेश की रक्षा करने की इच्छा के रूप में राष्ट्रवाद का उदय हुआ। इस प्रकार, राजाओं ने सत्ता पर अपनी पकड़ मजबूत करने के लिए राष्ट्रवाद का उपयोग किया और 19वीं सदी का यूरोप आक्रामक निरंकुश राज्यों का साक्षी बना जिनका उद्देश्य क्षेत्रीय और औपनिवेशिक साम्राज्य का विस्तार था। नेपोलियन के युद्धों के बाद, यूरोप लोकतांत्रिक क्रांति की लहरों का साक्षी बना, लेकिन यूरोप के राजतंत्र फ्रांसीसी क्रांति के लोकतांत्रिक विचारों के विरूद्ध थे और उन्होंने राष्ट्रवाद का उपयोग अपने साम्राज्य की रक्षा करने हेतु ही नहीं अपितु साम्राज्य विस्तार करने के लिए ढाल के रूप में किया। युद्ध में विजयों (उदाहरण के लिए, बिस्मार्क ने फ्रांसीसी-प्रशा युद्ध के माध्यम से 1870 में जर्मनी पर अपनी पकड़ मजबूत की) और अधिक उपनिवेशों के अधिग्रहण (उदाहरण के लिए, गृहदेश में राजनीतिक लाभ के लिए इटली ने अफ्रीका में औपनिवेशिक दौड़ में प्रवेश किया) का उपयोग सत्ता पर पकड़ बनाए रखने के लिए किया गया।

8.3. क्रांतिकारी विचारकों की भूमिका

- आधुनिक विचारकों ने राष्ट्रवाद की अवधारणा में बहुत योगदान दिया। स्व-शासन और राष्ट्रवाद का विचार राष्ट्रीय सीमाओं में भी परिवर्तन ला रहा था। 1832 में यूनान ऑटोमन साम्राज्य से स्वतंत्र हो गया जबकि 1839 में अपनी लोकतांत्रिक क्रांति की सहायता से बेल्जियम, यूनाइटेड किंगडम ऑफ़ नीदरलैंड से स्वतंत्र हो गया।
- जर्मनी और इटली के एकीकरण आंदोलनों ने अपनी काफी ऊर्जा इन विचारकों के विचारों से प्राप्त की थी। उदाहरण के लिए, गैरीबाल्डी और मैज़िनी ने इटली के एकीकरण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी, जबकि अंग्रेज कवि बैरन ने ग्रीक (यूनान) की स्वतंत्रता के पक्ष में लिखा और इसके संघर्ष में भाग लिया।
- इन विचारकों ने उस समय की साहित्यिक सामग्रियों में रोमांसवाद (Romanticism) डाला, जिसने लोगों को राष्ट्र की महिमा के निमित्त अपनी सेनाओं, स्वतंत्रता सेनानियों और राजशाहियों को अपना समर्थन देने के लिए उत्साहित किया।

8.4. औद्योगिक क्रांति और राष्ट्रवाद

- 19वीं सदी के दौरान यूरोप में औद्योगिक क्रांति ने आर्थिक क्षेत्र में राष्ट्रीय प्रतिस्पर्धा में वृद्धि की और उपनिवेशों के अधिग्रहण के लिए राष्ट्र-राज्यों को एक दूसरे के साथ संघर्ष में उलझा दिया।

VISION IAS

9. जर्मनी और इटली का एकीकरण

- 19वीं सदी के यूरोप की प्रमुख विशेषता राष्ट्रीय एकीकरण और स्वतंत्रता के लिए संघर्ष था। यूनान और बेल्जियम इस सदी में स्वतंत्र हो गए और जर्मनी और इटली का संगठित स्वतंत्र राज्यों के रूप में उदय हुआ।

9.1. जर्मनी का एकीकरण

9.1.1. सामाजिक और आर्थिक स्थिति

- जर्मनी की सामाजिक स्थिति किसी भी सामंती समाज में दिखाई देने वाली सामाजिक स्थिति की भांति ही थी। जर्मनी में जमींदारों को **जंकर** (Junkers) कहा जाता था। उनका राज्य के मामलों पर प्रभुत्व था। जर्मनी के विभाजन के परिणामस्वरूप कई राज्यों में आर्थिक विकास निम्नतम स्तर पर था क्योंकि ये राज्य वस्तुओं के मुक्त आवागमन पर प्रतिबंध आरोपित करते थे। पिछड़ी सामाजिक-राजनीतिक व्यवस्था ने भी निम्न आर्थिक स्थिति में योगदान दिया।

9.1.2. नेपोलियन के युद्धों और फ्रांसीसी क्रांति की भूमिका

- 18वीं सदी में, जर्मनी कई राज्यों में विभाजित था। नेपोलियन के युद्धों ने कई राज्यों की कृत्रिम सीमाएं समाप्त कर दी और उन्हें संयुक्त कर दिया लेकिन अभी भी 39 राज्य बने रहे। प्रशा इनमें सबसे बड़ा और सबसे शक्तिशाली था। फ्रांसीसी क्रांति के बाद, जर्मन लोग सरकार के लोकतांत्रिक स्वरूप और आर्थिक सुधारों की मांग करने लगे। राष्ट्रवाद की लहर ने जर्मनों को इन राज्यों के एकीकरण के लिए उत्साहित किया। इन सभी वैचारिक अंतर्प्रवाहों का परिणाम 1815 में जर्मन परिसंघ के गठन के रूप में सामने आया। इसमें ऑस्ट्रिया और प्रशा साम्राज्य के कुछ हिस्से तथा कुछ जर्मन राज्य सम्मिलित थे। प्रशा और ऑस्ट्रिया का बड़ा हिस्सा इस परिसंघ में सम्मिलित नहीं था। परिसंघ का उद्देश्य संघटक सदस्यों की आर्थिक नीतियों का समन्वय करना था। लेकिन निम्नलिखित कारणों से यह विफल हो गया:

- प्रत्येक घटक राज्य ने अपनी स्वतंत्रता का दावा किया और लोगों की सामंतवाद विरोधी आकांक्षाओं को पूरा करने के लिए कुछ नहीं किया।
- एकीकृत जर्मनी में लोकतंत्र की स्थापना के लिए 1848 का विद्रोह।
- जर्मन परिसंघ के मामलों पर वर्चस्व के लिए ऑस्ट्रिया और प्रशा के बीच प्रतिद्वंद्विता।

9.1.3. लोकतंत्र के अधीन एकजुट करने में विफलता

- 1848 में लोकतंत्र की स्थापना के लिए अधिकांश यूरोप में विद्रोह हुए। इनमें से अधिकांश विद्रोहों का नेतृत्व श्रमिकों ने किया। 1848 में, सभी जर्मन राज्यों में राजतंत्रात्मक शासन की वर्तमान राजनीतिक व्यवस्था को उखाड़ फेंकने के लिए विद्रोह आरंभ हो गए और शासकों को शासन का लोकतांत्रिक स्वरूप प्रदान करने के लिए विवश होना पड़ा। तत्पश्चात संविधान सभा का गठन किया गया और इसकी बैठक सभी जर्मन राज्यों को एकजुट करने और नए संविधान का प्रारूप तैयार करने के लक्ष्य के साथ फ्रैंकफर्ट में हुई। प्रशा के राजा ने संयुक्त जर्मनी के लिए संवैधानिक राजशाही का प्रस्ताव ठुकरा दिया। इसी बीच, शासकों की स्थिति में सुधार हुआ और उन्होंने राष्ट्रवादियों का दमन आरंभ कर दिया। फलस्वरूप राष्ट्रवादियों को संतुष्ट करने के लिए अभी तक दिए गए अधिकार वापस ले लिए गए और प्रशा की राजशाही सबसे मजबूत बनकर उभरी।

9.1.4. बिस्मार्क के नेतृत्व में एकीकरण: रक्त और लौह की नीति

- जर्मनी का एकीकरण होना अभी भी बाकी था, लेकिन लोकतांत्रिक सरकार के अधीन नहीं बल्कि प्रशा के सैन्य कमांडर बिस्मार्क के अधीन सैन्य शक्ति के माध्यम से अर्थात् बिस्मार्क की **रक्त और लौह की नीति** के अधीन। उसकी नीति राज्य के मामलों में भूस्वामी अभिजात्य वर्ग के हितों और सेना का वर्चस्व सुरक्षित करने की थी। बिस्मार्क ने रक्त और लौह की नीति का अनुसरण किया। इसके अंतर्गत उसने राज्यों को बल प्रयोग द्वारा एकजुट किया। यह नीति द्रुत गति से और महान रणनीतिक विशेषज्ञता के साथ कार्यान्वित की गई। इस नीति का उद्देश्य प्रशा की राजशाही के अधीन जर्मनी का एकीकरण करना था और इसके लिए जर्मन परिसंघ को नष्ट करना आवश्यक था।

चित्र: बिस्मार्क

- अपनी नीति कार्यान्वित करने के लिए बिस्मार्क एवं उसके नेतृत्व में प्रशा ने निम्नलिखित कदम उठाए:
  - जर्मन परिसंघ के अधिकांश प्रदेशों पर कब्जा करने के लिए बिस्मार्क के नेतृत्व में प्रशा ने सर्वप्रथम 1864 में डेनमार्क के विरूद्ध ऑस्ट्रिया के साथ गठजोड़ बनाकर युद्ध किया।
  - फिर उसने ऑस्ट्रिया को हराने के लिए 1866 में इटली के साथ गठजोड़ किया और उसे जर्मन परिसंघ से बाहर निकाल फेंका। फलस्वरूप परिसंघ स्वतः समाप्त हो गया।

 ©Vision IAS

- 1867 में, बिस्मार्क ने उत्तरी जर्मन परिसंघ का गठन किया। उसने 22 जर्मन राज्यों को संयुक्त किया लेकिन बवेरिया जैसे दक्षिणी जर्मन राज्यों को छोड़ दिया, जो स्वतंत्र बने रहे। इस परिसंघ के संविधान ने प्रशा के राजा को राज्य का वंशानुगत प्रमुख बनाया। दक्षिणी राज्यों ने ऑस्ट्रिया समर्थक नीति का अनुसरण किया लेकिन 1870 के फ्रांसीसी-प्रशियाई युद्ध में जर्मन विजय के बाद उन्हें संयुक्त होने के लिए विवश किया गया।
- 1870 में हुए फ्रांसीसी-प्रशियाई युद्ध ने जर्मनी के अंतिम एकीकरण का मार्ग प्रशस्त किया। 1870 में, फ्रांसीसी राजशाही लड़खड़ा रही थी और लोकतांत्रिक गणराज्य की स्थापना के लिए एक और क्रांति की परिस्थितियाँ तैयार हो गईं थी। फ्रांसीसी राजा लुई बोनापार्ट ने 1870 में जर्मनी के विरूद्ध युद्ध की घोषणा कर दी। वह आतंरिक समस्याओं से जनता का ध्यान हटाने के लिए युद्ध-विजय का उपयोग करना चाहता था और अपने शासन के प्रति विश्वसनीयता बढ़ाने के लिए युद्ध के लाभों का उपयोग करना चाहता था। वहीं दूसरी ओर, युद्ध के लिए फ्रांसीसियों को उत्तेजित करने के लिए बिस्मार्क भी आंशिक रूप से उत्तरदायी था। परिणाम यह निकला कि फ्रांस हार गया और उसने 1871 में स्वयं को गणतंत्र घोषित कर दिया। इस युद्ध में जर्मनी की जीत ने बिस्मार्क को जर्मनी के बाकी हिस्सों को संयुक्त जर्मनी (1871) में मिलाने का सुअवसर प्रदान किया।

9.2. इटली का एकीकरण

- इटली का एकीकरण दो-चरणों की प्रक्रिया थी। पहले चरण में, उसे ऑस्ट्रिया से स्वतंत्रता प्राप्त करनी पड़ी और दूसरे चरण में, इटली के स्वतंत्र राज्यों को एक इकाई में एकजुट करना पड़ा। मैज़िनी और गैरीबाल्डी क्रांतिकारी थे जिन्होंने इस प्रक्रिया में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। मैज़िनी ने इटली के एकीकरण के लिए 1831 में यंग इटली नामक संगठन का गठन किया। 1831 के बाद से, यंग इटली ने बार-बार राजशाही के विरूद्ध विद्रोह का प्रयास किया लेकिन ये सभी प्रयास लोकतांत्रिक और संयुक्त इटली की स्थापना करने में विफल रहे। फिर भी, यंग इटली ने लोगों को उदार सरकार के अधीन संयुक्त इटली के लिए प्रोत्साहित किया।

9.2.1. 1848 के विद्रोहों की भूमिका

- 1848 के विद्रोहों का नेतृत्व बुद्धिजीवियों और उदारवादियों ने किया। वे प्रतिक्रियावादी ऑस्ट्रियाई नियंत्रण के विरूद्ध थे और उदार शासन चाहते थे। इन विद्रोहों ने भी लोकतांत्रिक सुधारों का मार्ग प्रशस्त किया, लेकिन इनके परिणामस्वरुप न तो ऑस्ट्रिया से स्वतंत्रता प्राप्त हुयी और न ही संयुक्त इटली के रूप में इन राज्यों का समेकन हो सका।

9.2.2. प्रधान मंत्री कावूर की बिस्मार्क सदृश नीति के माध्यम से एकीकरण

चित्र: कावूर

VISION IAS

- 1848 के विद्रोह के बाद, सार्डीनिया के प्रधान मंत्री कावूर ने इटली के एकीकरण का प्रयास किया। उसकी नीति बिस्मार्क की नीति जैसी ही थी। 1859 में, सार्डीनिया ने ऑस्ट्रिया के विरूद्ध युद्ध में फ्रांस के साथ गठजोड़ बनाया, जिससे इटली के कई राज्य ऑस्ट्रियाई शासन से मुक्त हो गए और उनमें से अधिकांश को सार्डीनिया के राजा के अधीन संयुक्त कर दिया गया, सिवाय:
    - वेनेशिया के जो अभी भी ऑस्ट्रियाई शासन के अधीन था,
    - दो सिसलियों का राज्य (The Kingdom of two Sicilies) (दक्षिणी इटली में), जो सिसली के राज्य और नेपल्स के राज्य का सामूहिक नाम था; और
    - रोम में अपनी राजधानी सहित पोप के अधीन राज्य, जो सीधे पोप के शासन के अधीन था, जिसे फ्रांसीसी सेनाओं की सहायता प्राप्त थी।

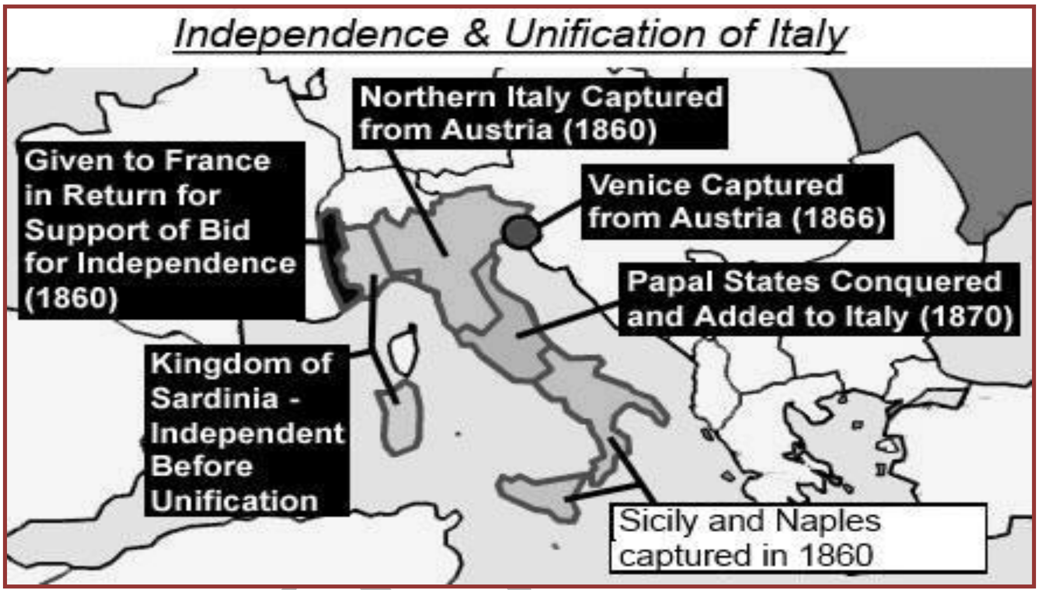

- गैरिबाल्डी के नेतृत्व में क्रांतिकारी सेनानियों ने फर्डिनेंड द्वितीय के निरंकुश शासन से सिसली और नेपल्स को मुक्त करा लिया और परिणामस्वरूप 1860 में ये राज्य सार्डीनिया के राजतंत्र के अधीन हो गए और इटली का साम्राज्य स्थापित हो गया। 1866 के ऑस्ट्रियाई-प्रशियाई युद्ध का लाभ उठाते हुए वेनिस पर भी इटली ने कब्जा कर लिया। अब केवल रोम बचा था। पोप को फ्रांसीसी सेनाओं की सुरक्षा मिली थी। 1870 के फ्रांसीसी-प्रशियाई युद्ध के चलते कमजोर हो जाने के कारण, फ्रांस अब पोप की सहायता नहीं कर सकता था परिणामस्वरूप 1871 में रोम पर कब्जा कर लिया गया और इसे इटली की राजधानी बना दिया गया। इस प्रकार एकीकरण की प्रक्रिया पूरी हो गई। एकीकरण के बाद, इटली और जर्मनी का औद्योगिकीकरण आरंभ हुआ और इन राज्यों में भी औद्योगिक क्रांति का आगमन हुआ।

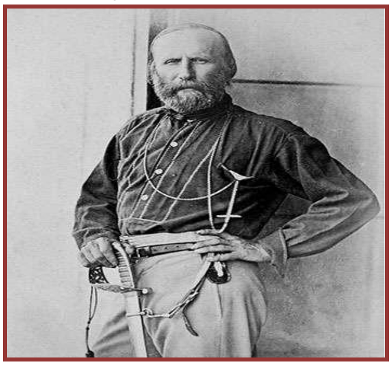

चित्र: गैरिबाल्डी

 ©Vision IAS

10. औद्योगिक क्रांति

10.1. औद्योगिक क्रांति से पहले वस्तुओं के उत्पादन की विधि

- वस्तुओं के उत्पादन की विधि का विकास क्रम इस प्रकार रहा है- गिल्ड प्रणाली से लेकर पुटिंग आउट प्रणाली या घरेलू पद्धति से लेकर कारखाना प्रणाली तक। जब व्यापार की मात्रा में और वृद्धि हुई और गिल्ड मांग का मुकाबला नहीं कर पाए तो गिल्ड प्रणाली में गिरावट आई क्योंकि वे बड़े पैमाने पर उत्पादन के लिए अनुपयुक्त थे।

10.1.1. पुटिंग-आउट प्रणाली

- गिल्ड प्रणाली में गिरावट के परिणामस्वरुप पुटिंग-आउट प्रणाली का आगमन हुआ। इस प्रणाली के अंतर्गत पूंजीपति व्यापारी, कारीगरों को कच्चा माल उपलब्ध करवाता था तथा कारीगर अपने निवास पर ही अपने औजारों से निर्माण करते थे। इस प्रकार कच्चे माल और अंतिम उत्पाद का स्वामी व्यापारी होता था और श्रमिक केवल मजदूरी कमाने वाले होते थे। मशीनों के आविष्कार ने सब कुछ बदलकर रख दिया और इस प्रणाली का स्थान कारखाना प्रणाली ने ग्रहण कर लिया।

10.1.2. कारखाना प्रणाली

- इस प्रणाली के अंतर्गत, उत्पादन का केंद्र घर से कारखाने में स्थानांतरित हो गया। पहली बार, श्रमिक दैनंदिन आधार पर घर से कार्यस्थल तक यात्रा करने लगे। पहली बार वे मशीनों पर काम करते हुए एक छत के नीचे बड़ी संख्या में एकत्रित हुए। पूँजी पर पूँजीपति का स्वामित्व होता था और कामगार मात्र उत्पादन का एक और पहलू थे और उत्पादन का स्वामी पूँजीपति होता था।

10.2. औद्योगिक क्रांति क्या है?

- इंग्लैंड के आर्थिक इतिहासकार **टायनबी** ने सर्वप्रथम 'औद्योगिक क्रांति' शब्द का प्रयोग किया। यह सर्वप्रथम **18वीं सदी के मध्य** में इंग्लैंड में घटित हुई।
- वस्तुतः औद्योगिक क्रांति उत्पादन प्रणाली में परिवर्तन थी, जिसमें शिल्प के स्थान पर मशीनों का भारी मात्रा में प्रयोग प्रारम्भ हुआ। यह मूलतः तकनीकी नवोन्मेषों की सहायता और उनके प्रसार से अर्थव्यवस्था में वस्तुओं के उत्पादन की आर्थिक प्रक्रियाओं में क्रांति है, जिसने वस्तुओं के उत्पादन की गति को बढ़ावा दिया। मशीनीकृत उत्पादन में परिणत होने वाले नवाचार, इन मशीनों को शक्ति देने के नए स्रोतों का विकास, संचार और परिवहन के क्षेत्र में तकनीकी प्रयत्न वे कुछ प्रक्रियाएं हैं, जिन्हें एक साथ मिलाकर **'औद्योगिक क्रांति'** कहा जाता है। यह क्रांति इसलिए थी क्योंकि इसने न केवल पूरी तरह से आर्थिक क्षेत्र में बल्कि सामाजिक और राजनीतिक क्षेत्र में भी सुधार किया।

10.3. इंग्लैंड में ही सर्वप्रथम औद्योगिक क्रांति क्यों?

1750 से पहले इंग्लैंड में होने वाली घटनाओं ने ऐसी स्थिति तैयार की, जो औद्योगिक क्रांति के अनुकूल थी।

- सामंतवाद के अंत के बाद पूंजीवाद का उदय औद्योगिक क्रांति के लिए महत्वपूर्ण था। ऐसा इसलिए था क्योंकि पूंजीवाद के साथ अधिक मौद्रिक लाभ कमाने की इच्छा पैदा हुई, जिसे कम लागत पर अधिक वस्तुएँ उत्पादित करने के नए तरीकों का विकास करके प्राप्त किया जा सकता था।
- विकासशील कस्बों और शहरों में जीवन के नए तरीकों के कारण निर्मित वस्तुओं की भारी मांग थी।
- गांव के लोग औद्योगिक उत्पादन के लिए श्रमिकों के रूप में शहरों में पलायन कर रहे थे। इससे ऐसे नए विचारों की खोज को बल मिला जिनसे औद्योगिक दक्षता में वृद्धि की जा सकती थी। तर्क पर आधारित पुनर्जागरण और रिफॉर्मेशन (सुधार आन्दोलन) ने पहले ही लोगों पर नए विचारों की खोज का बीड़ा उठाने का मनोवैज्ञानिक प्रभाव डाला था।

VISION IAS

www.examdivision.com
ExamDivision.com

- इसके अतिरिक्त इंग्लैंड का समाज लोकतंत्र (**गौरवपूर्ण क्रांति, 1688**) की दिशा में बढ़ चला था, जिससे विचारों की अधिक स्वतंत्रता की गुंजाइश पैदा हुई और इसके बाद ब्रिटेन में संसदीय प्रजातंत्र मजबूती के साथ स्थापित हुआ।
- शेष विश्व के साथ व्यापार से होने वाले आर्थिक लाभ ने पूंजी निर्माण के लिए, पुनर्निवेश के लिए और नवाचारी गतिविधियों के वित्तपोषण के लिए धन की उपलब्धता सुनिश्चित की।
- इंग्लैंड की भौगोलिक अवस्थिति ने भी इसमें महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। एक द्वीपीय देश होने के नाते इंग्लैंड बाह्य आक्रमणों से सुरक्षित था। फ्रांस और जर्मनी के विपरीत इंग्लैंड की प्राकृतिक सीमाएँ उसे सुरक्षित बनाती थीं, जिसने उसके लिए शांति पूर्ण परिस्थितियों में रहना संभव बनाया। इसने शासकों को अधिक लोकतंत्र समर्थक बनाया क्योंकि उन्होंने बल प्रयोग की कम आवश्यकता महसूस की क्योंकि वे बाह्य आक्रमण के खतरों से सुरक्षित थे।
- ब्रिटेन में बहुत अच्छे प्राकृतिक बंदरगाह थे। इससे उसके लिए समुद्री पत्तनों का विकास करना संभव हुआ। इस प्रकार इंग्लैंड समुद्री व्यापार से होने वाले मुनाफे से लाभान्वित हुआ।
- इंग्लैंड कोयला और लोहे जैसे प्राकृतिक संसाधनों में भी समृद्ध था।
- इंग्लैंड में सहायक नदियों का बहुत अच्छा प्राकृतिक नेटवर्क था। ये नदियाँ आसानी से नौवहनयोग्य थीं, जिससे वस्तुओं और कच्चे माल का सस्ता परिवहन संभव हुआ।

10.4. औद्योगिक क्रांति के घटक

10.4.1. वस्त्र क्षेत्रक में क्रांति

- औद्योगिक क्रांति वस्त्र उद्योग में हुई क्रान्ति के साथ आरंभ हुई। 17वीं शताब्दी में, ईस्ट इंडिया कंपनी भारत में तैयार सूती कपड़े ब्रिटेन को निर्यात करके बहुत लाभ कमा रही थी और इससे ब्रिटिश व्यापारियों को ईर्ष्या हो रही थी। इसने अंग्रेज व्यापारियों को भारत से कच्चा कपास आयात करने और ब्रिटेन में कपास के कपड़े बनाने के लिए प्रेरित किया ताकि वे कपास की तेज मांग से कुछ लाभ कमा सकें। जब कताई के पहिए और हथकरघा जैसी पुरानी मशीनरी मांग को पूरा नहीं कर सकी तो कई नवोन्मेष हुए। वस्त्र उद्योग में नई मशीनें कच्चे कपास की तेज कताई कर धागा बनाने में सहायता करने लगीं।
- **हर्ग्रीव्स** ऐसी मशीन विकसित करने वाले पहले शख्स थे, जिन्होंने **'स्पिनिंग जेनी'** नामक चरखे का आविष्कार किया।

चित्र: स्पिनिंग जेनी

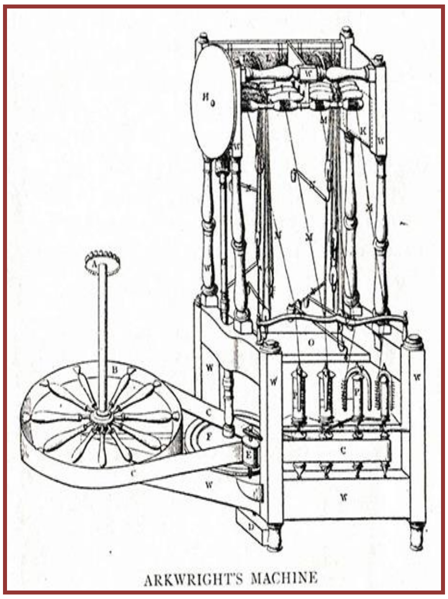

वाटरफ्रेम

VISION IAS

- **आर्कराइट** ने **'वाटरफ्रेम'** का आविष्कार किया जिसका संचालन जलशक्ति से किया जाता था। शीघ्र ही, **क्रॉम्प्टन** ने दोनों मशीनों की विशेषताओं को मिलाकर अपनी अलग मशीन विकसित कर ली। तेज कताई वाली मशीनों का प्रभाव यह था कि उन्होंने वस्त्र कारखानों को वैसे धागे का उत्पादन करने में सक्षम कर दिया जो महीन और सस्ते थे। उत्पादन लागत में हुई कमी ने लाभ को बढ़ा दिया और शीघ्र ही मशीनें इंग्लैंड में बहुत लोकप्रिय हो गईं।
- इसके अतिरिक्त 1785 में, **कार्टराइट** ने **'पावरलूम'** विकसित किया जिसने वास्तव में धागे से कपड़ा उत्पादन में क्रांति ला दी।

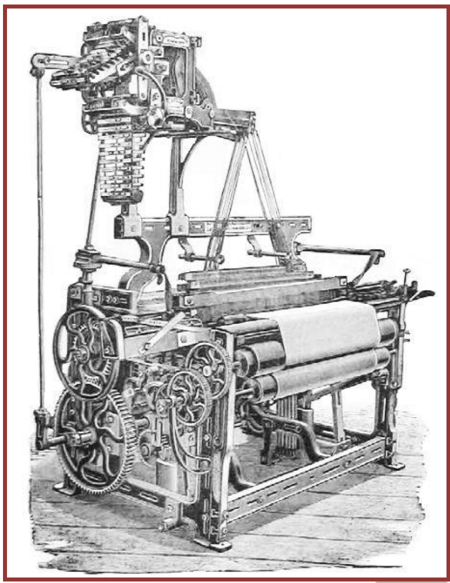

चित्र: पावरलूम

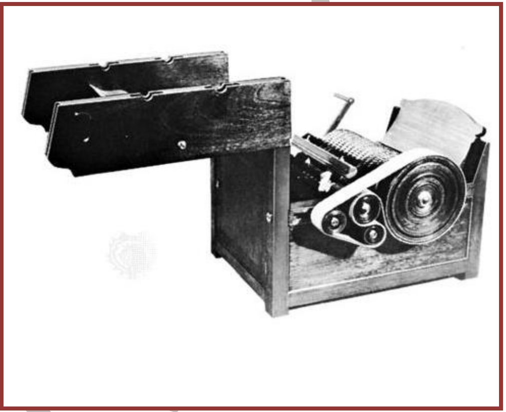

कॉटन जिन

- **हॉर्स पावर** शब्द का उद्गम कार्टराईट के पावरलूम से ही हुआ है क्योंकि यह मशीन गोलाकार या वृतीय पथ पर दौड़ने वाले घोड़ों द्वारा संचालित होती थी। बाद में, पावरलूम को पानी की शक्ति से चलने हेतु संशोधित किया गया। जल विद्युत के उपयोग के लिए कारखानों को नदियों और नहरों के पास स्थापित किया गया था। **कॉटन जिन** एक अन्य आविष्कार था, जिसने हाथों की तुलना में 300 गुना तेजी से कपास के बीज और फाइबर या धागे को अलग करने की प्रक्रिया विकसित की। 1793 में **एली व्हिटनी** द्वारा इस मशीन का आविष्कार किया गया था। इसने कपास की गांठों से कपास के तंतु (फाइबर) को अलग करने की हाथ-आधारित धीमी प्रक्रिया के कारण कच्चे कपास के तंतु की आपूर्ति की कमी की समस्या को हल कर दिया।

10.4.2. वाष्प शक्ति/स्टीम पावर

- दूसरा और सबसे महत्वपूर्ण आविष्कार 1769 में **जेम्स वाट** द्वारा स्टीम या **भाप के इंजन** का विकास रहा। स्टीम इंजन ने माल के उत्पादन को बढ़ावा दिया और परिणामस्वरूप कच्चे माल की मांग में भारी वृद्धि हुई। ये वास्तविक चीजें थीं, जिससे बड़े पैमाने पर उत्पादन हो सका क्योंकि मानवीय श्रम आधारित या पनबिजली आधारित मशीनें कम कुशल थीं। शीघ्र ही, कताई मशीन और पावरलूम चलाने के लिए भाप इंजन उपयोग किए गए। इसके परिणामस्वरूप इंग्लैंड ने 1840 तक पांच गुना अधिक कच्चे कपास आयात किए। स्टीम इंजन को कोयला खानों से पानी निकालने लायक बनाया गया, जिससे कोयले की आपूर्ति में वृद्धि हुई।

www.examdivision.com ExamDivision.com

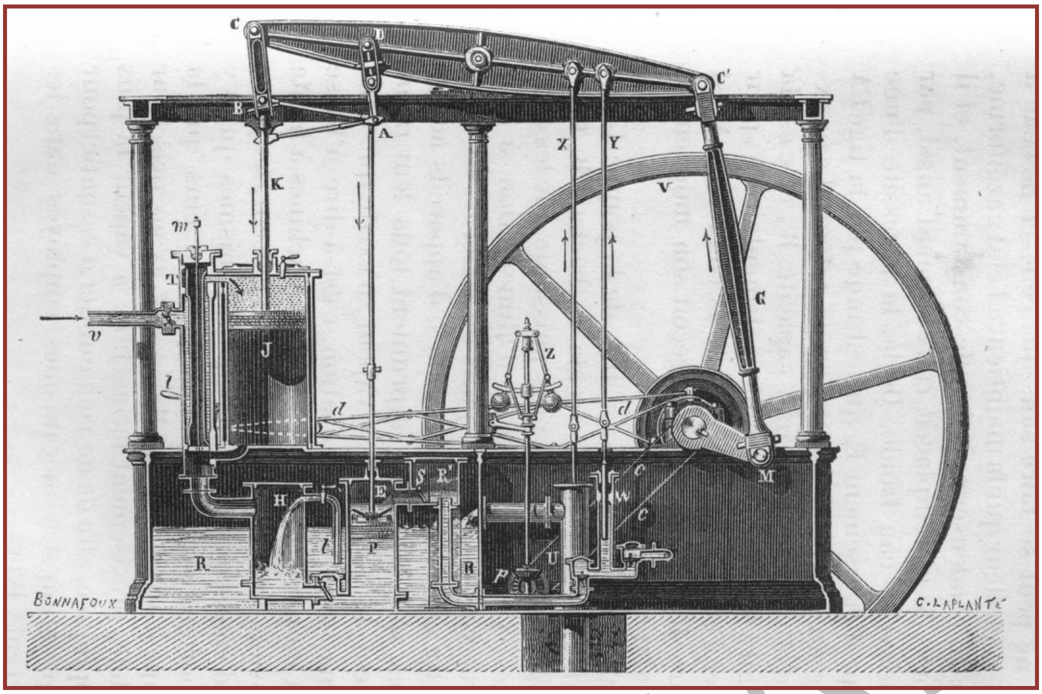

चित्र: जेम्स वाट का भाप-इंजन

10.4.3. लोहे के उत्पादन में क्रांति

- एक अन्य क्रांति लोहे के उत्पादन में हुई, जिसके परिणामस्वरूप अंततः सभी औद्योगिक प्रक्रियाओं में वृद्धि हुई और मशीनीकरण सस्ता एवं सुलभ हुआ। स्टीम पावर ने अधिक मशीनरी की मांग की थी और इस्पात (स्टील) बनाने के लिए इंग्लैंड में लौह अयस्क और कोयले के भारी भंडार थे। लेकिन जहां इंग्लैंड पीछे था वह था **कच्चे लोहे का सस्ता प्रसंस्करण** कर पाने की क्षमता। इस समस्या को **'ब्लास्ट फर्नेस'** के विकास से हल किया गया, जिसमें **चारकोल** (काठकोयला) के स्थान पर **कोक** (पत्थर कोयला) का उपयोग किया जाता था। इसने ब्रिटिश स्टील उद्योग को केवल ***पिग आयरन*** के स्थान पर उच्च-श्रेणी वाले ***कास्ट आयरन*** (ढलवा लोहा) का उत्पादन करने में भी सक्षम बनाया।

10.4.4. परिवहन एवं संचार में क्रांति

- अर्थव्यवस्था न केवल उत्पादन की प्रक्रियाओं से सम्बंधित है, बल्कि भूगोल भी इसका एक महत्वपूर्ण भाग है। सम्पूर्ण इंग्लैंड और साथ ही साथ इसके उपनिवेशों में रेल-सड़क नेटवर्क के रूप में परिवहन गलियारों के विकास ने ब्रिटिश उद्योगों को कच्चे माल और तैयार माल की आपूर्ति को तीव्र करने की अनुमति दी। 1814 में जॉर्ज स्टीफेन्सन द्वारा रेलवे में उपयोग के लिए स्टीम इंजन को संशोधित किया गया। अब कोयले को रेलवे के माध्यम से खानों से बंदरगाहों तक पहुंचाया जा सकता था। 1830 में, स्टीम पावर पर चलने वाली पहली यात्री ट्रेन ने अपनी यात्रा आरंभ की। इस आविष्कार ने व्यापारियों और भीतरी प्रदेशों से शहरों तक श्रमिकों के बेहतर आवागमन और वास्तव में एक जुडी हुई अर्थव्यवस्था का विकास करने में मदद की। भारत में रेलवे की शुरुआत 1853 में हुई। मैकएडमाइज्ड रोड या पक्की सड़कें मैकएडम के इंजीनियरिंग कौशल का परिणाम थीं। बेहतर सड़कों ने माल की तेज ढुलाई संभव की। रेल-सड़क अवसंरचना को कैनाल नेटवर्क बिल्डिंग द्वारा पूरित किया गया था। भाप चालित जहाजों के उपयोग के कारण जल परिवहन, भू-परिवहन की तुलना में बहुत सस्ता था। डाक सेवाओं के आगमन ने दूर-दराज के स्थानों से व्यापारिक लेन-देन को सकारात्मक रूप से प्रभावित किया।

VISION IAS

10.4.5. कृषि क्रांति

- औद्योगिक क्रांति का एक अन्य पहलू भी है जिसे आम तौर पर भुला दिया जाता है, वह है कृषि क्रांति जो औद्योगिक क्रांति के पहले आरंभ हुई थी। इसमें ब्रिटिश उद्योगों की मांगों को पूरा करने के लिए नगदी फसलों का अधिक उत्पादन सम्मिलित था। जमीन की जुताई के लिए इस्पात के हल और हैरो (पटेले) जैसी नई मशीनरी, मशीनीकृत सीड ड्रिल, घोड़े द्वारा खींचे जाने वाले कल्टिवेटर (जमीन जोतने वाले यंत्र) जिसने **हो** (फावड़ा या कुदाली) तथा कटाई और मंजाई के लिए प्रयुक्त हो रही मशीनों का स्थान ले लिया और कृषि क्षेत्र में मानव श्रम की आवश्यकता को कम कर दिया। **बाड़बंदी आंदोलन** (The Encloser Movement) का नेतृत्व बड़े जमींदारों ने किया था, जिन्होंने संसद में सांसदों के साथ मिलकर सीमांत किसानों और गांवों के छोटे-छोटे भूखंडों पर कब्जा कर अपने कृषि क्षेत्र के दायरे में वृद्धि की। इस प्रकार कस्बों में स्थित उद्योगों के लिए श्रम की उपलब्धता में वृद्धि हुई और श्रम अधिशेष ने श्रम लागत को सस्ता बना दिया जिससे व्यापारियों का लाभ बढ़ गया। इसी प्रकार उर्वरकों का गहन उपयोग और सस्य आवर्तन जैसी खेती की नई परिपाटियों ने मिट्टी की उर्वरता बढ़ा कर ब्रिटेन की खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित की।

10.5. औद्योगिक क्रांति का प्रभाव

"कहा जाता है कि पहली क्रांति वह थी जब पाषाण काल में मनुष्य ने शिकार के स्थान पर कृषि और पशुपालन को अपनाया था और यह दूसरी क्रांति है जब कृषि के स्थान पर व्यवसाय को प्रधानता दी गई है।"

- औद्योगिक क्रांति का विभिन्न क्षेत्रों पर महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ा। ब्रिटेन की अर्थव्यवस्था पर कृषि क्षेत्र की बजाय औद्योगिक क्षेत्रक का वर्चस्व रहा, जिससे सकल घरेलू उत्पाद में कृषि के हिस्से में कमी आई। उच्च सकल घरेलू उत्पाद ने ब्रिटिश व्यवसायों द्वारा वस्त्र के निर्यात और कच्चे माल के आयात को बढ़ाया। अब ब्रिटेन ने स्व-उपभोग और निर्यात के लिए पर्याप्त कोयला और पिग आयरन का उत्पादन किया। औद्योगिक क्रांति ने शीर्ष स्तर की औद्योगिक अर्थव्यवस्था के रूप में ब्रिटेन के उदय का नेतृत्व किया। परंतु लोगों पर इसका प्रभाव बहुत सकारात्मक नहीं था। रोजगार की तलाश में गांवों से शहरों की ओर प्रवास में वृद्धि हुई। अब शहरी क्षेत्र उत्पादन के केंद्र बन गए, वे व्यापार तथा प्रशासन के केंद्र बनने तक सीमित नहीं रहे।
- इस प्रक्रिया के परिणामस्वरुप शहरी भीड़भाड़ में वृद्धि हुई, जिससे आवास और स्वच्छता की समस्याएं बढ़ गईं। शहरी क्षेत्र अब दो असमान हिस्सों में बंट गए थे। एक ओर व्यापारियों और मैनेजर वर्ग के लोगों के शानदार आवास थे तो दूसरी ओर स्लम (मलिन बस्तियां)। प्रवास ने सामाजिक जुड़ाव और नैतिक संयम के विघटन के रूप में सामाजिक तनाव की स्थिति उत्पन्न की। इसके कारण गरीबी के साथ-साथ शहरों में अपराधों में भी वृद्धि हुई। उद्योगपतियों ने मजदूरों को मशीनों के कलपुर्जे और उत्पादन के एक अन्य पहलू के रूप में देखा। उनका उद्देश्य लाभ को अधिकतम करना था और इसलिए मजदूरों को बहुत कम मजदूरी दी जाती थी। श्रमिकों की सामाजिक सुरक्षा और कारखानों में काम करने की स्थिति को बेहतर बनाने हेतु बहुत कम काम किया गया। असुरक्षित मशीनों से बहुत-से लोग घायल हुए। सस्ते वेतन पर उपलब्ध होने के कारण श्रम बल में बाल श्रम और महिलाओं की भागीदारी में वृद्धि हुई। काम के घंटे प्रति दिन लगभग 15 से 18 घंटे थे।

VISION IAS

©Vision IAS

चित्र: ब्रिटिश औद्योगिक क्रांति के दौरान बाल मज़दूर

- पर्यावरण प्रदूषण के स्तर में भी वृद्धि हो रही थी परिणामस्वरूप श्रमिकों को कई स्वास्थ्य समस्याओं का सामना करना पड़ा। औद्योगिक लॉबी ने लंबे समय तक यह सुनिश्चित किया कि मजदूरों के कल्याण के लिए संसद सदस्य कुछ न करें, जिसके कारण मजदूरों में असंतोष उत्पन्न हुआ और इंग्लैंड में औद्योगिक क्रांति के बाद विकसित हुए लुडिट्स और चार्टिस्ट जैसे कई कामगार आंदोलन अस्तित्व में आए। यहाँ यह याद रखना उचित है कि यह औद्योगिक क्रांति के बाद आए पूंजीवाद का एक नकारात्मक पक्ष था, जिसने समाजवाद के आगमन को गति प्रदान की। इंग्लैंड में श्रमिकों की दयनीय स्थितियों ने **कार्ल मार्क्स** के विचारों को प्रभावित किया। मजदूर वर्ग के बीच व्यापारिक संघवाद में वृद्धि हुई और एकता में वृद्धि हुई।
- एक प्रकार से औद्योगिक क्रांति ने इंग्लैंड में लोकतंत्र के विकास को तीव्र किया। श्रमिकों के बीच बढ़ते असंतोष और परिणामी आंदोलनों ने सरकार को सचेत किया कि लेसेज़ फेयर (अहस्तक्षेप की नीति) का सिद्धांत सही नहीं है और यदि पूंजीवादी व्यवस्था को श्रमिक क्रांति से सुरक्षित रखना है तो राज्य को कमजोर वर्गों की रक्षा करने की जिम्मेदारी उठानी पड़ेगी।
- धीरे-धीरे, चार अधिनियमों के पारित होने के साथ, मतदान का अधिकार कामगारों सहित समाज के कई वर्गों तक बढ़ा दिया गया और 1929 तक ब्रिटेन ने सार्वभौमिक वयस्क मताधिकार को अपना लिया। व्यापार संघों को 1824 में वैध कर दिया गया और कारखाना अधिनियमों की एक श्रृंखला पारित की गई, जैसे 1802 और 1819 में, जिसने आयु और काम के घंटे पर प्रतिबंध लगाया और रोजगार की स्थिति (विशेष रूप से महिलाओं और बच्चों की) को विनियमित किया।
- औद्योगिक क्रांति के परिणामस्वरूप औद्योगिक और गैर-औद्योगिकीकृत दुनिया के बीच संपर्क बढ़ा। लेकिन यह संपर्क समानता पर आधारित नहीं था। कच्चे माल की आवश्यकता तथा तैयार माल के निर्यात हेतु बाजार की खोज ने कई यूरोपीय देशों को औपनिवेशिक देश बनने के लिए प्रेरित किया।

19वीं सदी में जब शेष यूरोप में औद्योगिक क्रांति का आरम्भ हुआ, तो वहीं दूसरी ओर अन्य कई यूरोपीय राष्ट्रों के बीच उपनिवेशों के लिए होड़ लगी थी। इस प्रकार औद्योगिक क्रांति ने साम्राज्यवाद के उभरने में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाई जिसके कारण औपनिवेशिक शक्तियों ने मध्यस्थों द्वारा सैन्य शक्ति, प्रत्यक्ष नियम और शासन के उपयोग से उपनिवेशों पर अधिक मजबूत नियंत्रण स्थापित करने की कोशिश की। कई उपनिवेशों को औपनिवेशिक शक्तियों द्वारा अपने क्षेत्र का विस्तार माना जाता था।

10.6. इंग्लैंड के बाहर औद्योगिक क्रांति का प्रसार

- 1815 में नेपोलियन के युद्धों के अंत के पश्चात् यूरोप में एक ऐसा वातावरण उत्पन्न हुआ जिसमें राष्ट्र औद्योगिक विकास पर ध्यान केंद्रित कर सकते थे। 1815 के बाद कई यूरोपीय राष्ट्रों में मशीनों का आगमन हुआ, लेकिन लोकतंत्र, स्वतंत्रता और प्रदेशों के एकीकरण के लिए आंदोलन ने 1871 तक औद्योगिक क्रांति को जड़ जमाने की इज़ाजत नहीं दी। फ्रांस में 1850 तक लौह-इस्पात के उद्योग विकसित होना आरंभ हो चुके थे, लेकिन कोयला और लौह अयस्क के रूप में कच्चे माल की कमी ने इसकी प्रगति को बाधित किया।
- जर्मनी, इस्पात के उत्पादन में ब्रिटेन के बाद दूसरे स्थान पर था, लेकिन अब भी ब्रिटेन से काफी पीछे था। बिस्मार्क के नेतृत्व में जर्मन एकीकरण के बाद, जर्मन उद्योग कई गुना विकसित हुए और शीघ्र ही पिग आयरन और कोयले के उत्पादन में अंग्रेजों के प्रतिद्वंद्वी बन गए। 1871 में इटली के एकीकरण के उपरांत इटली में औद्योगिक क्रांति का आरंभ हुआ। रूस में औद्योगिकीकरण सबसे अंत में हुआ।
- रूस प्राकृतिक संसाधनों में समृद्ध था, लेकिन पूंजी की कमी और दासता एवं निःशुल्क श्रम के कारण इसके औद्योगिकीकरण की प्रक्रिया धीमी थी। जब दासता को 1861 में समाप्त कर दिया गया तब रूसी औद्योगिक उत्पादन को बढ़ावा मिला। इसने विदेश से पूंजी उधार ली, लेकिन 1917 की अक्टूबर क्रांति के बाद ही रूस में वास्तविक औद्योगिक क्रांति आ पाई।
- यूरोप के बाहर, 1783 में ब्रिटेन से स्वतंत्रता के बाद अमेरिका में उद्योग विकसित हो रहे थे। लेकिन वणिकवाद या वाणिज्यवाद (मर्केंटलिज़्म) की ब्रिटिश नीति ने स्वदेशी उद्योग के विकास को बाधित किया था और अमेरिका क्षेत्रीय विस्तार की अपनी राजनीतिक उथल-पुथल के साथ-साथ राष्ट्रपति लिंकन द्वारा दासता पर प्रतिबंध लगाने के कारण गृह युद्ध में फंसा हुआ था। अतः यहां 1870 के पश्चात् ही औद्योगिक उत्पादन को बढ़ावा मिला। अमेरिका तब एक औद्योगिक शक्ति के रूप में उभरा और द्वितीय विश्व युद्ध तक शेष विश्व के लिए तैयार वस्तुओं का एक प्रमुख आपूर्तिकर्ता बना रहा।
- **जापान** एशिया का पहला देश था जहां सर्वप्रथम औद्योगिकीकरण हुआ। यहां औद्योगिक क्रांति बहुत देर से लगभग 19वीं शताब्दी में हुई। द्वितीय विश्व युद्ध के बाद इसने 'Little is the Best' को अपना मूलमंत्र बना लिया। यह रेशम, खिलौने और चीनी मिट्टी के बर्तन के पारंपरिक निर्यातक से इस्पात मशीनरी, धातु की वस्तुएं और रसायनों का प्रमुख निर्यातक बन गया।

इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि राजनीतिक व्यवस्था, राजनीतिक स्वतंत्रता, आक्रमण से सुरक्षा, श्रम और कानून व्यवस्था के साथ पूंजी की उपलब्धता आदि औद्योगिक क्रांति के प्रमुख निर्धारक थे। ब्रिटेन में सबसे पहले औद्योगिकीकरण इसलिए नहीं हुआ कि इसके पास बेहतर बुद्धिजीवी थे बल्कि उपर्युक्त तथ्यों के अनुकूल परिस्थितियों के विद्यमान होने के कारण ऐसा संभव हुआ। जब ये परिस्थितियां अन्य देशों में भी आईं तो उन्होंने भी शीघ्र ही औद्योगिकीकरण की प्रक्रिया आरंभ कर दी।

VISION IAS

11. उपनिवेशवाद की परिभाषा

- किसी एक क्षेत्र के लोगों द्वारा किसी अन्य क्षेत्र में उपनिवेशों की स्थापना, उनका शोषण, रख-रखाव, दूसरे क्षेत्रों का अधिग्रहण और विस्तार उपनिवेशवाद कहलाता है। यह सामान्यतः औपनिवेशिकों एवं मूलनिवासियों तथा उपनिवेश एवं औपनिवेशिक शक्ति के मध्य असमान संबंधों का एक समुच्चय है।

12. उपनिवेशवाद का इतिहास

12.1 भौगोलिक खोज या अन्वेषण की भूमिका

- सामंतवाद की समाप्ति के साथ-साथ 15वीं सदी के अंत में हुए अन्वेषणों या खोजी यात्राओं ने उपनिवेशवाद के उदय में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। 13वीं सदी के आरंभ में इटली के मार्को पोलो ने चीन की यात्रा की।

- व्यापारिक लाभ ने यूरोपीय बंदरगाहों के महत्त्व को बढ़ा दिया और व्यापारियों ने इसे अपनी गतिविधियों का केंद्र बनाया। शीघ्र ही भू-मध्य सागर के तटीय इलाकों में नए शहरों का विकास हुआ और वेनिस तथा जेनोवा जैसे शहरों की समृद्धि में वृद्धि हुई। ये तटीय शहर सामंतवाद आधारित ग्रामीण प्रणाली से स्वतंत्र थे। इन कस्बों में कृषिदास स्वतंत्र थे और इसलिए गांवों से शहरों की तरफ़ प्रवास तीव्र हो गया। इन तटीय शहरों का आधार पैसा था न कि भूमि। राजा, जो सामंत प्रणाली में अधीनस्थ सामंतों या सरदारों पर सैन्य सहायता के लिए निर्भर थे, उन्होंने सामंतों और चर्च की शक्तियों का तिरस्कार किया और व्यापारियों की यात्राओं का वित्त पोषण कर उन्हें संरक्षण प्रदान किया। इसके बदले सामंती नियंत्रण से बचने हेतु व्यापारियों ने राजा को सहायता प्रदान की और व्यापारियों की स्थिति (दर्जा) समाज में थोड़ी बेहतर हुई और इन्हें राजनीतिक अधिकार प्राप्त हुए।
- मौद्रिक लाभ अन्वेषण का सबसे महत्वपूर्ण कारण बन गया क्योंकि खोजी यात्री अपने शहर/देश में बहुत अधिक लाभ पर बेची जा सकने वाली वस्तुएँ लेकर लौटते थे। उदाहरण के लिए **वास्को-डी-गामा** (1498) ने वेनिस की अपेक्षा भारत में काली मिर्च का मूल्य 1/20 गुना तक कम पाया। मसालों का व्यापार सबसे आकर्षक था। 13वीं शताब्दी के मध्य तक मसालों के प्राथमिक व्यापारिक बंदरगाह के रूप में वेनिस का उदय हुआ। मसालों को वेनिस से पश्चिमी और उत्तरी यूरोप में ले जाया गया। वेनिस (*उल्लेखनीय है कि 14वीं सदी का पुनर्जागरण सर्वप्रथम इटली में ही आरंभ हुआ) उच्च प्रशुल्क लेकर अत्यंत समृद्ध बन गया।

- मध्य-पूर्व तक प्रत्यक्ष पहुंच न होने के कारण यूरोपियों को वेनिस द्वारा आरोपित उच्च मुल्य का भुगतान करने के लिए मजबूर किया गया। यहां तक कि अमीरों को भी मसालों के उच्च मूल्य का भुगतान करने में परेशानी होती थी। पूर्व के मार्गों को ***सिल्क रूट्स*** के नाम से जाना जाता था। वेनिस के अतिरिक्त बैजेन्टाइन साम्राज्य की राजधानी कांस्टेंटिनोपल (कुस्तुन्तुनिया) ने भी पूर्व के साथ व्यापार में मध्यस्थ की भूमिका निभाई। ये दोनों शहर व्यापार मार्गों पर स्थित थे और अपनी इच्छानुसार इस व्यापार को रोकने की शक्ति इनमें थी। 1453 में ऑटोमन साम्राज्य ने बैजेन्टाइन साम्राज्य को हरा दिया और समुद्री मार्गों को अवरुद्ध कर दिया।

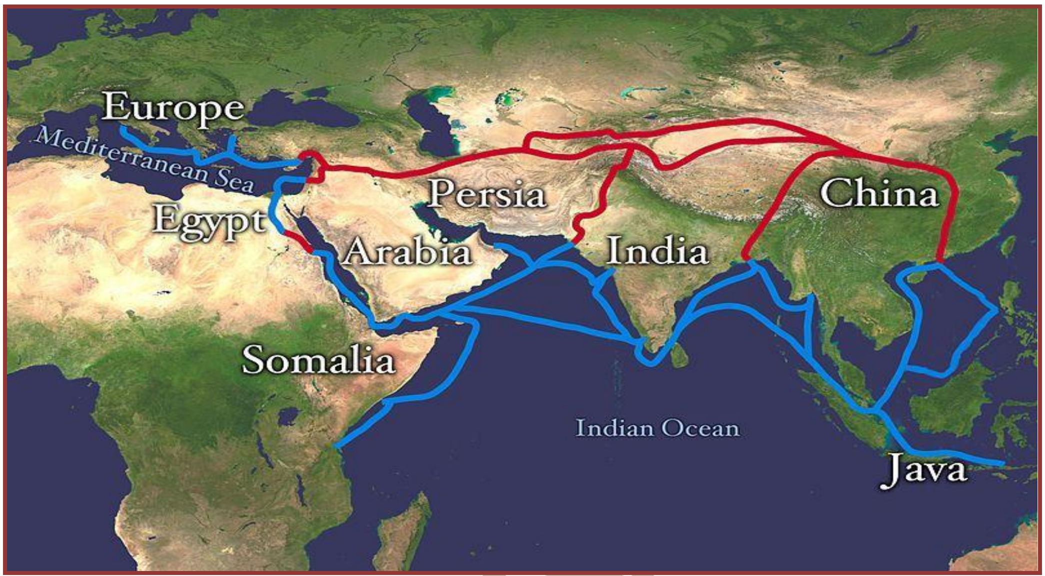

अन्वेषण युग से पूर्व के मार्ग: वर्ष 1453 में बैजेन्टाइन साम्राज्य के पतन के बाद ऑटोमन साम्राज्य द्वारा आर्थिक रूप से महत्वपूर्ण सिल्क रोड (भू-मार्ग) और मसाला मार्ग (जल-मार्ग) बंद किए जाने के पश्चात् अफ्रीका के आस-पास से हो कर जाने वाले समुद्री मार्गों का अन्वेषण प्रोत्साहित हुआ और इसने अन्वेषण युग को सक्रिय किया।

अन्वेषण युग से पश्चात् के मार्ग: 16वीं शताब्दी में अन्वेषण युग के दौरान की जाने वाली खोजों के कारण पुर्तगाल (गहरा) और स्पेन (ग्रे) समुद्री व्यापारिक मार्गों को दर्शाता मानचित्र।

- इसने 15वीं सदी के अंत में यूरोपीय यात्रियों की खोजी यात्राओं का मार्ग प्रशस्त किया। इस प्रकार 16वीं सदी से पहले ही इटली ने वैश्विक व्यापार पर अपना प्रभुत्व जमा लिया। इसका कारण उसकी

©Vision IAS

भौगोलिक अवस्थिति और वाणिज्यिक समुद्री मार्गों के संबंध में ज्ञान पर एकाधिकार था। लेकिन शीघ्र ही समृद्ध इतालवी व्यापारिक शहरों के प्रति ईर्ष्या और ऑटोमन साम्राज्य द्वारा की गई नाकेबंदी के कारण नाविकों ने पूर्व के लिए एक वैकल्पिक मार्ग खोजने के उद्देश्य से यात्राएँ आरंभ कीं। **उत्तर-पश्चिम में मार्ग** खोजने के लिए की गई एक यात्रा से कनाडा की खोज हुई। यह खोज ब्रिटेन के **जॉन काबोट** द्वारा की गई थी। अन्वेषण के साथ धीरे-धीरे दुनिया का भौगोलिक मानचित्र उभरा।

12.2. तकनीकी नवोन्मेष

- तकनीकी नवाचारों ने नई भूमि की ख़ोज करने में खोजकर्ताओं की सफलता में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। 15वीं सदी के अंत तक कम्पास, एस्ट्रेलेब (एक यंत्र जो जहाज के स्थान का निर्धारण करने में मदद करता है), **मानचित्रण की कला** और लंबे समय तक यात्रा कर सकने में सक्षम **बेहतर जहाज आदि** का विकास हुआ। इन नवोन्मेषों ने किसी भी अन्वेषक के समुद्र संबंधी भौगोलिक ज्ञान को बढ़ाया। वे समुद्री मार्गों के सटीक मानचित्रों को विकसित करने में सक्षम थे और मौसम प्रणाली से परिचित थे जिसने उन्हें नई भूमि तक सुरक्षित रूप से पहुंचने में सक्षम बनाया।
- इस प्रकार 15वीं सदी के अंत के आसपास की अवधि को अन्वेषण युग के रूप में जाना जाने लगा। स्पेन द्वारा वित्त पोषित क्रिस्टोफर कोलंबस भारत की खोज में निकला था, लेकिन 1492 में वह मध्य अमरीका में हैती के तट पर उतरा। उसने इसे भारत समझ लिया और यही कारण है कि उसने यहाँ के निवासियों को इंडियन और इस द्वीप को इंडीज नाम दिया।

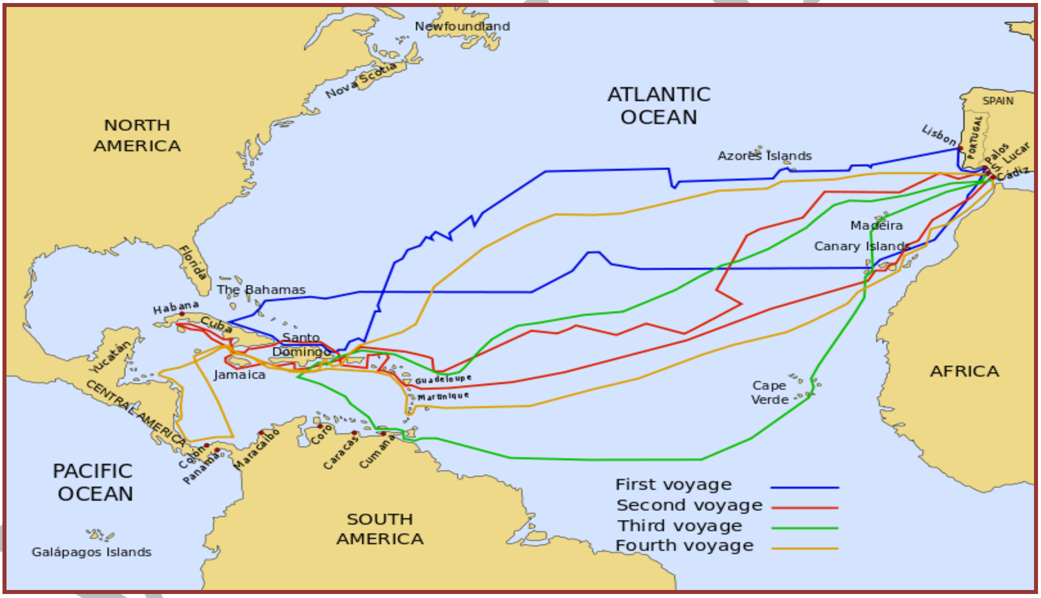

1498 में **पुर्तगाल द्वारा वित्तपोषित वास्को डी गामा ने भारत की खोज की।** वह *केप ऑफ गुड होप* (दक्षिण अफ्रीका) के रास्ते यूरोप से भारत आया।

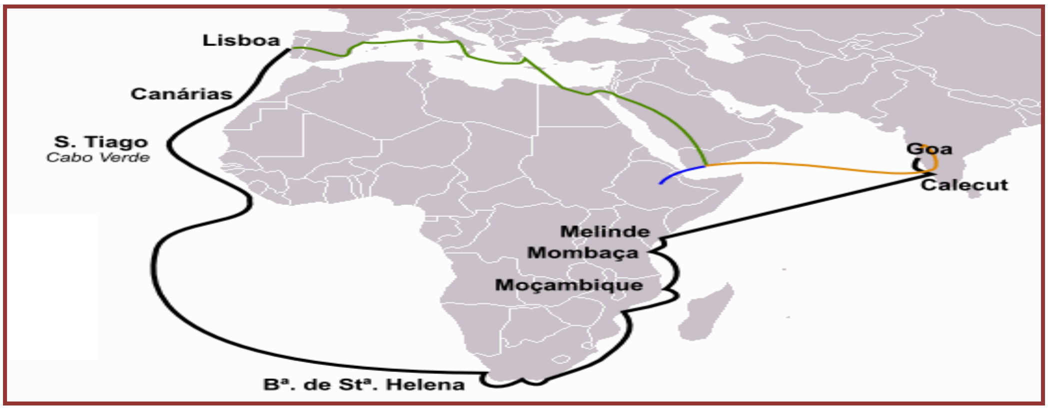

©Vision IAS

- 1500 ई. के आसपास **अमेरिगो** वेस्पुसी (कोलंबस नहीं) ने अमेरिका की खोज की थी। पुर्तगालियों ने भी दक्षिण-पूर्व एशिया में **फिलीपींस** की खोज की।
- **इन खोजों से औपनिवेशीकरण का आरंभ हुआ।** खोजी गई नई भूमियाँ खनिज संसाधनों से समृद्ध थीं और यहाँ कई उत्कृष्ट प्राकृतिक बंदरगाह थे, जिन्हें पत्तनों के रूप में विकसित किया जा सकता था। इस प्रकार ये व्यापार के नोडल बिंदु के रूप में कार्य कर सकते थे। यूरोपीय व्यापारियों ने यहाँ अपने प्रतिष्ठानों की स्थापना का प्रयास किया और इन खोजी गई नई भूमियों में उपनिवेश बनाने लगे।
- अमेरिका, एशिया और अफ्रीका की नई भूमियों से आयात की गई वस्तुओं से प्राप्त लाभ ने अन्वेषण हेतु एक होड़ आरम्भ की और शीघ्र ही डच, फ्रेंच और ब्रिटिश भी स्पेन और पुर्तगाल के साथ इस होड़ में शामिल हो गए।

13. औपनिवेशीकरण (Colonization)

- एशिया, अफ्रीका और अमेरिका का औपनिवेशीकरण तीन बातों को ध्यान में रख कर आरंभ हुआ- **गोल्ड, ग्लोरी** और **गॉड** (3G)। **गोल्ड** अर्थात सोना व्यापार से होने वाला लाभ ग्लोरी अर्थात प्रतिष्ठा जो उस मान्यता की प्रतिनिधि थी जो एक यूरोपीय शक्ति विश्व की सर्वोच्च शक्ति के रूप में प्राप्त करती थी। किंगडम के झंडे के साथ मिशनरी भी आए जिनका कार्य ईसाई धर्म (गॉड) को बढ़ावा देना था।
- यहां यह ध्यातव्य है कि जिस देश का प्रभुत्व समुद्र पर था उसी ने औपनिवेशिक युग में सर्वाधिक लाभ प्राप्त किया। व्यापारिक जहाजों का बड़ा बेड़ा व्यापार की मात्रा और बाहरी बाजारों में फैलाव का परिचायक था, जबकि एक मजबूत नौसेना उसकी रक्षा कर सकती थी, प्रतियोगियों के जहाजों पर हमला कर सकती थी और वाणिज्यिक समुद्री मार्गों को अवरुद्ध कर सकती थी। वे देश जो *पोर्ट्स ऑफ कॉल* के रूप में मैत्रीपूर्ण बंदरगाह पाने में समर्थ थे वे व्यापारिक प्रतियोगिता में लाभपूर्ण स्थिति में होते थे। यहां उनके जहाज ईंधन भर सकते थे और चालक दल आराम कर सकते थे। इस प्रकार वाणिज्यिक पूँजीवाद, उपनिवेशवाद के साथ-साथ बढ़ा और उपनिवेशवाद ने वाणिज्यिक पूंजीवाद को फलने-फूलने हेतु एक सुरक्षित क्षेत्र प्रदान किया। उल्लेखनीय है कि उपनिवेशवाद के साथ कई नई वस्तुएँ व्यापार टोकरी (ट्रेड बास्केट) में आईं। आलू, तम्बाकू, मक्का तथा मसाले जैसे उत्पादों का व्यापार शुरू हुआ जिनके बारे में यूरोपीय अभी तक अनभिज्ञ थे। यूरोपीय कारखानों के लिए उपनिवेशों ने कच्चे माल के स्रोत के रूप में कार्य किया। उदाहरण के लिए अमेरिका में गन्ने के बागानों की स्थापना ने चीनी उद्योग को बढ़ावा दिया। इसी प्रकार चावल, कॉफी और कपास जैसे संसाधनों का भी दोहन किया गया।
- यूरोपीय देशों ने नई खोजी गई भूमि के तटीय क्षेत्रों में व्यापारिक पोस्ट्स की स्थापना की। वाणिज्यिक पूंजीवाद की नीति में अन्य राज्यों के व्यापारिक जहाजों पर हमला, व्यापारिक मार्गों में अवरोध, उपनिवेशों की स्थापना, व्यापारिक बाधाएं पैदा करना, उपनिवेशों के साथ व्यापार एकाधिकार शामिल था। यदि उपनिवेश स्थापित करने में असमर्थ हों तो नई खोजी गई भूमि के साथ विशेष व्यापार अधिकारों को सुरक्षित करना था ताकि व्यापारिक एकाधिकार पाया जा सके। पुर्तगालियों ने 1498 में केप ऑफ़ गुड होप के माध्यम से भारत के लिए व्यापार मार्ग की खोज के बाद एशिया के साथ व्यापारिक एकाधिकार स्थापित कर लिया और इसने पूर्व के व्यापार पर इतालवी एकाधिकार को प्रतिस्थापित कर दिया। बाद में, पुर्तगालियों को इंडोनेशिया में डच और भारत में अंग्रेजों ने प्रतिस्थापित किया। इसके बाद, सैन्य शक्ति और समुद्री शक्ति में वृद्धि ने फ्रांस और ब्रिटेन को बड़ी औपनिवेशिक शक्तियों के रूप में उभरने में सहायता की।

VISION IAS

14. उपनिवेशवाद का प्रभाव

- एक तरफ यूरोपीय देशों ने व्यापार की मात्रा और विविधता में बहुत तीव्र वृद्धि देखी तो वहीं दूसरी ओर उपनिवेशों को उनके संसाधनों से दूर कर दिया गया। यूरोप ने मसालों जैसे उत्पादों का आयात करना आरंभ कर दिया, जो कि इसके बाजार के लिए नए थे और बहुत ही शीघ्र ये लोकप्रिय हो गए। इसी प्रकार पूर्व से सूती कपड़े आयातित किये गये।
- स्पेन ने मध्य अमेरिकी उपनिवेशों में गन्ने के बागान स्थापित किए जबकि पुर्तगाल ने ब्राजील में बागानी प्रणाली को स्थापित किया। हॉलैंड जैसा देश जिसकी आतंरिक भूमि बंजर थी, उसने ब्रिटेन और अन्य यूरोपीय देशों को व्यापार के लिए जहाज प्रदान कर उपनिवेशों से भारी लाभ कमाया। दूसरी ओर उपनिवेशों पर उपनिवेशवाद का प्रभाव भयावह था। अमेरिगो की यात्रा के बाद दक्षिण अमेरिका को स्पेन ने उपनिवेश बना लिया, जिसने इस यात्रा को वित्त पोषित किया था। एज़्टेक और इंका सभ्यता को नष्ट कर दिया गया और उनके सोने-चांदी को लूट लिया गया। वहां के मूल निवासियों को उपनिवेशवादियों के हित में खानों और खेतों में काम करने के लिए मजबूर किया गया। पेरू, बोलिविया और मैक्सिको की खानों का दोहन किया गया और प्राप्त सारा धन स्पेन भेज दिया गया।
- बाद में डच, ब्रिटिश और फ्रेंच भी अमेरिका के कुछ हिस्सों को नियंत्रित करने आए। एशिया में उपनिवेशवाद का उद्देश्य व्यापारिक लाभ कमाना था, जबकि अफ्रीका के मामले में दास व्यापार उपनिवेशवाद का मुख्य कारण था। **अफ्रीका में,** औपनिवेशीकरण जल्द आरंभ हुआ लेकिन भौगोलिक बाधाओं के कारण यह तटीय क्षेत्रों तक ही सीमित रहा और इसका विस्तार अफ्रीका की मुख्य भूमि तक नहीं हो सका।
- **दास व्यापार पुर्तगाल द्वारा आरंभ किया गया था** क्योंकि बागानों में लगे इसके कामगार ब्राजील की गर्म और आर्द्र जलवायु सहन करने में सक्षम नहीं थे। इसने काले अफ्रीकियों को ढूंढा जो शारीरिक रूप से मजबूत और भूमध्यरेखीय जलवायु में रहने के अभ्यस्त थे। उन्हें बागानों में काम करने के लिए लाया जाता था। अफ्रीकी, गुलामों के रूप में बागानों में काम करते थे तथा मूल अमेरिकी उपनिवेशवादियों के कृषि क्षेत्रों पर कृषि दासों की भांति कार्य करते थे। औपनिवेशीकरण के बाद शीघ्र ही उत्तरी अमेरिका, वेस्टइंडीज और अमेरिका के अन्य भागों में यूरोपीय शक्तियों द्वारा दास व्यापार आरंभ हो गया। स्पेन ने सर्वप्रथम कैरेबियाई क्षेत्र के हैती में दास व्यापार आरंभ किया और फिर फ्लोरिडा, मैक्सिको, चिली और तटीय दक्षिण अमेरिका के अन्य भागों में बागानी प्रणाली का उपयोग मुख्य रूप से गन्ना, तम्बाकू और कपास के उत्पादन के लिए किया गया। दास व्यापार को ट्रांस-अटलांटिक दास व्यापार के रूप में जाना गया। अमेरिका, अफ्रीका, और यूरोप के त्रिकोण के रूप में त्रिभुजीय दास व्यापार की शुरुआत हुई और अफ्रीकियों को अटलांटिक पार अमेरिका भेजा गया। 15वीं सदी के अंत में जब दास व्यापार की शुरुआत हुई तब यह व्यापार मुख्यतः निजी व्यापारियों, नाविकों और समुद्री डाकुओं द्वारा किया जाता था। परन्तु 16वीं सदी के अंत तक इस व्यापार के लिए दास व्यापार कंपनियों की स्थापना हो गई। आरंभ में काले अफ्रीकियों को तटीय अफ्रीका से पकड़ा जाता था क्योंकि अंदरूनी भाग पहुंच से बाहर थे, लेकिन 19वीं सदी में मुख्य भूमि के अन्वेषणों के पश्चात् सम्पूर्ण अफ्रीका से दास पकड़े जाने लगे। अटलांटिक पार करने की यात्रा काफी अमानवीय थी। भीड़ और स्वच्छता की कमी के कारण इन यात्राओं के दौरान कई अफ्रीकियों की मृत्यु हो जाती थी।
- 1750 के बाद औद्योगिक क्रांति ने इंग्लैंड में कच्चे माल की मांग में वृद्धि की। उपनिवेशों से कच्चे माल की आपूर्ति बढ़ाने और ब्रिटेन के बढ़ते औपनिवेशिक साम्राज्य के कारण दास व्यापार में खरीद-फरोख्त किए जाने वाले अफ्रीकियों की संख्या में भी वृद्धि हुई। ब्रिटेन के उपनिवेश वेस्टइंडीज़ में 100 वर्षों में लगभग 2 मिलियन गुलाम आयात किए गए। अमेरिका का वर्तमान जनसांख्यिकीय संघटन 16वीं सदी से 19वीं सदी के मध्य किए गए अत्यधिक दास व्यापार का सूचक है।

VISION IAS

- 1789 में फ्रांसीसी क्रांति के बाद फ्रांस में दास प्रथा समाप्त हो गई क्योंकि क्रांति मुख्यतः स्वतंत्रता, समानता और बंधुत्व के विचारों पर आधारित थी। ब्रिटेन ने 1833 में अपने सभी उपनिवेशों में दासता समाप्त करने के लिए दासता उन्मूलन अधिनियम पारित किया। संयुक्त राज्य अमेरिका में गृह युद्ध (1861-65) के बाद इसे प्रतिबंधित कर दिया गया। दासता पर प्रतिबंध का कई धड़ों द्वारा विरोध किया गया। दक्षिण अफ्रीका के डच औपनिवेशकों ने प्रतिबंध का विरोध किया। इसके अतिरिक दासता के मुद्दे पर संयुक्त राज्य अमेरिका की संघीय सरकार और दक्षिणी राज्यों के बीच अमेरिका में भी गृहयुद्ध लड़ा गया। दक्षिणी राज्यों ने दासता पर प्रतिबंध का विरोध ही नहीं किया अपितु USA द्वारा अधिग्रहीत नए क्षेत्रों में भी दासता के विस्तार का प्रयास किया।

15. उपनिवेशवाद और वाणिज्यिक पूंजीवाद में संबंध

(Relation between Colonialism and Mercantile Capitalism)

- वाणिज्यिक पूंजीवाद 18वीं सदी में ब्रिटेन की एक प्रमुख नीति थी। इसके पीछे विचार यह था कि राष्ट्रीय शक्ति में वृद्धि के लिए सरकार को घरेलू अर्थव्यवस्था और उपनिवेशों को विनियमित करना चाहिए। इस विनियमन का उद्देश्य व्यापार अवरोध उत्पन्न करना एवं उपनिवेशों पर व्यापारिक एकाधिकार स्थापित करना था ताकि भुगतान संतुलन को सकारात्मक बनाए रखा जा सके। व्यापारी यूरोप के बाहर के देशों के साथ मुक्त व्यापार समझौता और व्यापारिक एकाधिकार चाहते थे। वहां के स्थानीय प्रमुखों और शासकों द्वारा विरोध करने पर इन देशों को उपनिवेश बना लिया गया।
- 19वीं सदी में, एक नया विकास हुआ। एडम स्मिथ जैसे विचारकों के कारण, ***लेसेज़ फेयर*** नीति का कार्यान्वयन आरंभ कर दिया गया। इस नीति के अंतर्गत आर्थिक क्षेत्र में राज्य का हस्तक्षेप कम करने और एक मुक्त बाजार अर्थव्यवस्था का निर्माण करने की संकल्पना निहित थी। यह केवल घरेलू अर्थव्यवस्था में मुक्त बाज़ार के लिए थी। संपूर्ण विश्व को मुक्त बाजार में परिवर्तित नहीं किया जा रहा था (जैसा कि आज, बहुराष्ट्रीय कंपनियों और वैश्वीकरण के युग में है)। साम्राज्यिक शक्तियों को उनके अधिकांश उपनिवेशों पर व्यापार और निवेश के क्षेत्रों में विशेषाधिकार प्राप्त थे। अन्य देशों की कंपनियों को इन उपनिवेशों में समान अधिकार नहीं प्राप्त थे और साम्राज्यिक देश से संबंधित कंपनियों के लिए आर्थिक परियोजनाओं के अनुबंध सुरक्षित थे। 19वीं सदी के अंत तक *लेसेज़ फेयर* को अस्वीकार कर दिया गया। ब्रिटिश अर्थशास्त्री **कीन्स** ने 1929 में ***द एंड ऑफ़ लेसेज़ फेयर*** प्रकाशित किया। *लेसेज़ फेयर* की समाप्ति इसकी कमियों के कारण ही हुई, जैसे कर्मचारियों का अत्यधिक शोषण और अकाल जैसी विभत्स आपदाओं में भी सरकार द्वारा कोई हस्तक्षेप न किया जाना (भारत में 1880 के अकाल में भी सरकार ने हस्तक्षेप नहीं किया था)। यह अनुभव किया गया कि *लेसेज़ फेयर* का पालन आंख बंद कर नहीं किया जा सकता है और राज्य को बुनियादी मानवाधिकारों को सुनिश्चित करने के लिए हस्तक्षेप करना होगा।

16. उपनिवेशवाद और साम्राज्यवाद के बीच अंतर

(Difference between Colonialism and Imperialism)

- उपनिवेशवाद साम्राज्यवाद का ही एक अंग है। औद्योगिक क्रांति के युग में साम्राज्यवाद वस्तुतः उपनिवेशवाद का एक स्वाभाविक विस्तार था। विदेशी क्षेत्र का राजनीतिक अधिग्रहण साम्राज्यवाद की एक आधारभूत विशेषता थी। कुछ लेखकों के अनुसार, सैन्यवाद (जिसका तात्पर्य एक क्षेत्र पर कब्जा करने के लिए आक्रमण करना है) साम्राज्यवाद के लिए आवश्यक है या यह साम्राज्यवाद का ही एक रूप है (क्योंकि राजनीतिक अधिग्रहण एक क्षेत्र पर विजय प्राप्त करने या किसी पर हमले के बिना हो सकता है, लेकिन क्षेत्र पर कब्ज़ा करने के लिए सैन्यशक्ति का प्रयोग किया जाता है)। इसके विपरीत उपनिवेशवाद का अर्थ है लोगों के जीवन और संस्कृति पर अधिकार।

VISION IAS

www.examdivision.com ExamDivision.com

- उपनिवेशवाद का मुख्य लक्ष्य उपनिवेशों का आर्थिक दोहन करना था जबकि साम्राज्यवाद के अंतर्गत राजनीतिक नियंत्रण शामिल होता है। इस प्रकार उपनिवेशवाद उन कंपनियों द्वारा किया जा सकता है जो विशेष व्यापारिक विशेषाधिकार रखती हैं और व्यापारिक केन्द्रों की स्थापना करती हैं, जबकि साम्राज्यवाद राज्य द्वारा सरकार की कूटनीति के माध्यम से प्रदेशों, संरक्षित क्षेत्रों और प्रभाव क्षेत्रों को प्राप्त करने और औद्योगिक व्यापार और निवेश को बढ़ावा देने के लिए किया जाता है।
- उपनिवेशवाद का परिणाम राजनीतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक और सामाजिक क्षेत्रों में मूलनिवासियों के जीवन पर नियंत्रण होता है, जबकि साम्राज्यवाद अधिक औपचारिक और आक्रामक होता है।
- उपनिवेशवाद एवं साम्राज्यवाद के बीच के अन्तर को कई इतिहासकार औद्योगिक क्रांति से जोड़ कर देखते हैं तथा औद्योगिक क्रांति को दोनों के बीच एक विभाजन रेखा मानते हैं। औद्योगिक क्रांति के बाद औपनिवेशिक साम्राज्य निर्माण की घटनाओं को **नव साम्राज्यवाद** का नाम दिया जाता है। अब प्रश्न उठता है कि **इसमें नया क्या था?** यूरोप में औद्योगिक क्रांति के बाद आरंभ हुए नव साम्राज्यवाद में होड़ या रेस का घटक नई बात थी। औपनिवेशिक प्रक्रिया के प्रत्येक पहलू में भी वृद्धि हुई। इस होड़ ने यूरोपीय शक्तियों द्वारा जितना संभव हो सके, उतने उपनिवेशों को अधिग्रहीत करने की आर्थिक प्रतिस्पर्धा को दर्शाया। यह कच्चे माल के स्रोतों और निर्यात बाजारों के लिए होड़ थी, जिसे उपनिवेशों द्वारा प्रदान किया जाना था। यह व्यापार के लिए अन्य राष्ट्रों के साथ संधि के द्वारा या *पोर्ट ऑफ कॉल्स* को उपनिवेश बना कर समुद्री गलियारे सुरक्षित कर वाणिज्यिक जहाजों को सुरक्षित बंदरगाह उपलब्ध कराने की भी होड़ थी। होड़ के इस घटक में नौसैनिक वर्चस्व और स्थलीय सैन्य बलों को स्थापित करने की होड़ भी सम्मिलित थी। **लेकिन होड़ की यह परिघटना पहले इतने स्पष्ट रूप में क्यों नहीं हुई?** इसका उत्तर औद्योगिक क्रांति जैसे कारकों में है, जो 19वीं सदी में शेष यूरोप, अमेरिका और जापान में फैली।
- राष्ट्रवाद का उदय भी एक अन्य कारक है जिसने आर्थिक और सैन्य वर्चस्व की तलाश हेतु राष्ट्रीय प्रतिद्वंद्विता को बढ़ावा दिया और साथ ही घटता हुआ भू-क्षेत्र भी इसका कारण था।
- अंतिम कारक दिलचस्प है और वैश्विक शांति पर महत्वपूर्ण प्रभाव डालता है। पहले यूरोपीय शक्तियों द्वारा उपनिवेश स्थापित करने के लिए पर्याप्त भू-भाग थे, लेकिन 19वीं सदी में अफ्रीका के अंदरुनी भू-भाग को छोड़ कर लगभग संपूर्ण विश्व एक या दूसरे शक्तिशाली राष्ट्र के प्रभाव में आ चुका था। इस प्रकार अब दुनिया की प्रमुख शक्तियाँ एक दूसरे की कीमत पर ही आगे बढ़ सकती थीं। एक देश के जो भी उपनिवेश थे उनकी रक्षा के लिए कड़ी प्रतिस्पर्धा थी और साथ ही साथ अन्य उपनिवेशों से प्रतिद्वंद्वी औपनिवेशिक शक्ति को प्रतिस्थापित करने का प्रयास भी किया जा रहा था। नव साम्राज्यवाद में औपनिवेशिक शक्तियों को अपनी औपनिवेशिक संपत्तियों की रक्षा और अपनी सीमाओं को सुरक्षित करने के लिए अधिक बल का उपयोग करना पड़ा। इसने उपनिवेशों में आर्थिक नियंत्रण सुनिश्चित करने के लिए राजनीतिक नियंत्रण को अधिक अनिवार्य बनाया। राजनीतिक नियंत्रण को सुरक्षित रखने के लिए सेना की आवश्यकता थी और इस प्रकार नव साम्राज्यवाद की एक अद्भुत विशेषता राष्ट्रीय शक्ति का उदय थी। ईस्ट इंडिया कंपनी जैसी व्यापारिक कंपनियां धीरे-धीरे अपनी सरकारों द्वारा प्रतिस्थापित कर दी गईं।

17. नव साम्राज्यवाद (New Imperialism) की परिभाषा

- साम्राज्यवाद, औद्योगिक देशों द्वारा गैर-औद्योगिक देशों पर राजनीतिक और आर्थिक वर्चस्व या उनका शोषण है। यह वर्चस्व सैन्य विजय या विदेशी क्षेत्र को उपनिवेश बना कर प्राप्त किया जा सकता है अर्थात् विदेशी भूमि को जीतना और उन्हें स्वयं पर निर्भर बनाना। विदेशी शासक अल्पसंख्यक होते हुए भी देशी लोगों पर अपनी जाति और संस्कृति की श्रेष्ठता थोपते हैं।

VISION IAS

- साम्राज्यवाद के प्रमुख घटकों को इस प्रकार वर्गीकृत किया जा सकता है:
    - कच्चा माल और निर्यात बाजार
    - संरक्षणात्मक प्रशुल्क
    - मुक्त व्यापार का अधिरोपण
    - अपवाह सिद्धांत (Drain Theory)
    - उपनिवेशों का राजनीतिक नियंत्रण
    - पोर्ट्स ऑफ़ कॉल्स का अधिग्रहण
- औद्योगिक देशों के कारखानों से अतिरिक्त उत्पादन हेतु कच्चे माल और निर्यात बाजारों की खोज के लिए यूरोपीय शक्तियों, जापान और संयुक्त राज्य अमेरिका के बीच उपनिवेशों पर नियंत्रण के लिए एक प्रतिस्पर्धा चल रही थी। इससे नव साम्राज्यवाद का उदय हुआ जिसकी विशेषता उपनिवेशों और प्रभाव क्षेत्रों के लिए होड़ थी।
- 1750 के पश्चात् ग्रेट ब्रिटेन, औद्योगिकीकरण में अग्रणी रहा। अन्य यूरोपीय राष्ट्रों ने 19वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में ही औद्योगिकीकरण किया और इस प्रकार वे विदेशी बाजारों में अंग्रेजी निर्यात से प्रतिस्पर्धा नहीं कर सके। उन्होंने अपने स्वदेशी उद्योगों की रक्षा हेतु घरेलू और विदेशी बाजारों में अंग्रेजी निर्यात को रोकने के लिए सुरक्षात्मक प्रशुल्क लगाए। इससे पहले कि औद्योगिक क्रांति शेष यूरोप में अपने पाँव पसारती, अंग्रेजों ने वाणिज्यिक पूंजीवाद के अंग के रूप में फ्रांस, स्पेन, पुर्तगाल और हॉलैंड के प्रभाव को रोकने के लिए अमेरिकी उपनिवेशों में व्यापारिक और प्रशुल्क संबंधी प्रतिबन्ध आरोपित कर दिए। इस प्रकार उपनिवेशों के साथ व्यापार पर औपनिवेशिक शक्तियों का एकाधिकार था। परन्तु, उपनिवेशों को अपने स्वदेशी उद्योग की रक्षा के लिए किसी भी प्रकार का संरक्षणात्मक प्रशुल्क लगाने की अनुमति नहीं थी और उन पर मुक्त व्यापार थोप दिया गया, जिसके अंतर्गत औपनिवेशिक राष्ट्र से आयात पर कोई भी शुल्क नहीं लगाया जा सकता था।
- उपनिवेशों के विभिन्न क्षेत्रों जैसे रेलवे में विदेशी निवेश पर उच्च दरों पर लाभ उपलब्ध होता था और औपनिवेशिक राष्ट्र विदेशी निवेश को प्रोत्साहित करता था और स्वदेशी निवेश हतोत्साहित करता था। उपर्युक्त परिघटना को दादाभाई नौरोजी जैसे राष्ट्रवादियों द्वारा प्रतिपादित ड्रेन थियरी में भली-भांति समझाया गया है। अंग्रेजों ने भारत को कच्चे माल का निर्यातक और तैयार माल का आयातक बना दिया था। विदेशी निवेश ने इन निवेशों से प्राप्त होने वाला लाभ विदेशी निवेशकों की जेबों में जाना सुनिश्चित किया।
- उपनिवेशों को राजनीतिक रूप से नियंत्रित किया गया। इसे या तो भारत की तरह प्रत्यक्ष शासन से या फिर भारतीय रियासतों जैसे मध्यस्थों के माध्यम से शासन के द्वारा किया गया। साम्राज्यवाद के दौरान एक और रणनीति थी *पोर्ट्स ऑफ कॉल्स* का अधिग्रहण करना अर्थात् उन स्थानों पर जहाँ पोत कोयला और जल की पुन: पूर्ति कर सकते थे, उन बन्दरगाहों पर कब्जा करना। औपनिवेशिक राष्ट्रों ने उन द्वीपों को जीतने का प्रयत्न किया जो समुद्री मार्गों पर स्थित थे और व्यापारिक देशों के तटों के निकट स्थित थे।

18. नव साम्राज्यवाद का इतिहास

- 'नव-साम्राज्यवाद' के इस रूप की पहचान 19वीं और 20वीं शताब्दी के प्रारम्भ में साम्राज्यवाद की दूसरी लहर के रूप में की जा सकती है। यह यूरोपीय उपनिवेशवाद की 15वीं से 19वीं शताब्दी की पहली लहर से भिन्न थी। यह औद्योगिक पूंजीवाद का परिणाम थी।
- कुछ उपनिवेशों में स्वाधीनता के लिए संघर्ष प्रारम्भ हो गया था, क्योंकि विश्व एक नए साम्राज्यवाद की ओर बढ़ रहा था। अमेरिका ने 1776 में अपनी स्वतंत्रता की घोषणा कर दी थी। फ़्रांसीसी क्रांति ने विश्व के बहुत से देशों में स्वतंत्रता आंदोलनों को प्रेरित किया। प्रारम्भिक वर्षों में नेपोलियन के साथ युद्धों ने स्पेन और पुर्तगाल को निर्बल बना दिया था, जिसके परिणामस्वरूप दक्षिण और मध्य अमेरिका में उनके कुछ उपनिवेशों ने अपनी स्वाधीनता की घोषणा कर दी थी। मैक्सिको 1821 में स्पेन से स्वाधीन हो गया था। साइमन बोलिवर ने कोलम्बिया, इक्वेडोर, पेरू, वेनेजुएला और बोलीविया को स्पेन से मुक्त कराया। 1824 में ब्राजील, पुर्तगाल से मुक्त हो गया गया। इस प्रकार से 1789 की

VISION IAS

फ़्रांसीसी क्रांति के पश्चात् की अवधि साम्राज्यवाद में गिरावट का एक अस्थाई दौर था, जो 1870 में पुनः उदित हुआ।

- यहाँ उन कारकों का संक्षेप में उल्लेख करना प्रासांगिक है, जिनके कारण नव-साम्राज्यवाद का उदय हुआ:

  - **राजनीतिक कारकों की भूमिका:** नव साम्राज्यवाद के उद्भव के पीछे राजनीतिक कारकों की बहुलता थी। इनमें से एक, 1870-71 में जर्मनी व इटली के एकीकरण के पश्चात्, इटली और जर्मनी में निरंकुश राजतंत्र का उदय होना था। इस प्रकार के एकाधिपत्य ने राज्य की ओर से होने वाली आक्रामकता में वृद्धि की। परन्तु, नव-साम्राज्यवाद के लिए पूरी तरह से निरंकुश राजतंत्रों को उत्तरदायी नहीं ठहराया जा सकता है। वास्तव में, ब्रिटेन, जहाँ प्रजातांत्रिक व्यवस्था थी, उसके पास सबसे बड़ा औपनिवेशिक साम्राज्य था। इस प्रकार सभी औद्योगिक शासन, भले ही वे लोकतान्त्रिक या निरंकुश राजतंत्र हो, साम्राज्यवाद में लिप्त थे। औद्योगीकरण ने औपनिवेशिक साम्राज्य निर्माण के लिए उनकी क्षुधा के साथ-साथ उनकी सम्भाव्यता में भी वृद्धि की थी। कुछ शासकों ने अपने देश में राजनीतिक नियंत्रण बनाए रखने के लिए साम्राज्यवाद को एक उपकरण के रूप में देखा। उपनिवेशों पर सैन्य विजय और साम्राज्य निर्माण, न केवल औपनिवेशिक शक्तियों की अर्थव्यस्था में सुधार ला रही थी, अपितु शासकों की प्रतिष्ठा में भी वृद्धि कर रही थी। इन्हीं दो कारकों, अर्थात् एक सशक्त अर्थव्यवस्था और राष्ट्रीय गौरव ने उनके शासन को वैधता प्रदान की। इसी प्रकार के कारकों के कारण इटली और ज़ार द्वारा शासित रूस भी उपनिवेशों की होड़ में सम्मिलित हुए थे।
  - **राष्ट्रवाद की भूमिका:** 1789 की फ़्रांसीसी क्रांति के पश्चात् राष्ट्रवाद का उत्थान हुआ। औद्योगीकरण के युग में यह शीघ्र ही राष्ट्र-राज्यों के बीच आर्थिक प्रतिद्वंद्विता के रूप में प्रकट हुआ। राष्ट्रवादी विचारकों द्वारा प्रतिपादित राष्ट्रीयता के विचारों से इस प्रतिद्वंद्विता को और अधिक बढ़ावा मिला। 1868-72 की अवधि में ब्रिटेन, फ़्रांस, जर्मनी और इटली में राष्ट्रवाद के परिणामस्वरूप औपनिवेशिक साम्राज्य में विस्तार की मांग उठी। निरंकुश शासक सत्ता पर अपनी पकड़ बनाए रखने और अपनी जनता के ध्यान में भटकाव लाने के लिए साम्राज्यवाद और राष्ट्रवाद दोनों पर निर्भर थे।
  - **औद्योगिक क्रांति/औद्योगिक पूंजीवाद की भूमिका:** नव साम्राज्यवाद के उद्भव में औद्योगिक क्रांति प्रमुख कारकों में से एक थी। औद्योगिक क्रांति के पश्चात् व्यापक उत्पादन से अतिरिक्त लाभ मिला जिससे पूंजी संचित हुई। इस धन को पूँजी निर्माण के लिए पुन: निवेश किया गया। परिवहन और संचार अवसरंचना में विकास से लोगों तथा वस्तुओं को तीव्र गति से लाना-ले जाना सम्भव हो गया था और भाप के पोतों के विकास से विश्व भर में व्यापारिक वस्तुओं के आवागमन में लगने वाले समय में कमी आई। 19वीं शताब्दी में यूरोपीय जनसंख्या में तीव्रता से वृद्धि होने के कारण घरेलू बाजारों में भी वस्तुओं की मांग बढ़ रही थी। कारखानों में कच्चे माल की मांग में वृद्धि हुई, जिसके परिणामस्वरूप राष्ट्रीय सीमाओं के बाहर कच्चे माल की खोज होने लगी। यूरोप में जनसंख्या के बढ़ते दबाव के कारण और अधिक उपनिवेशों की खोज आरम्भ हुई जहाँ यूरोपीय लोगों को बसाया जा सकता था। शीघ्र ही, कारखानों में जो उत्पादन हो रहा था वह घरेलू और विदेशी बाजारों की खपत से कहीं अधिक हो गया। इसने नये उपनिवेशों की आवश्यकता में और अधिक वृद्धि की। इस प्रकार से उत्पादित माल की अधिक मांग, लाभ, पूँजी निर्माण, कच्चे माल की मांग, अतिरिक्त उत्पादन और निर्यात बाजारों की मांग का एक चक्र स्थापित हो गया। अतः यह कहा जा सकता है कि औद्योगिक पूंजीवाद (औद्योगिक क्रांति के पश्चात् पूंजीवाद, जब कारखानों में मशीनों से उत्पादन किया जाने लगा) ने साम्राज्य विस्तार पर बल दिया।
  - **प्रतिस्पर्धियों की बढ़ी हुई संख्या:** 1870 के दशक के पश्चात् शेष यूरोप, अमेरिका और जापान में भी औद्योगिक क्रांतियाँ हुईं। औद्योगिक देशों ने कच्चे माल के स्रोतों और निर्यात बाजारों की आक्रामक तरीके से खोज प्रारम्भ कर दी थी।
  - **भौगोलिक स्थानों में कमी:** 19वीं शताब्दी के मध्य तक, जब उपनिवेश के लिए पर्याप्त स्थान उपलब्ध थे और साम्राज्यों का सुगमता से विस्तार हो सकता था तो विश्व अपेक्षाकृत अधिक शांतिपूर्ण था। परन्तु, 19वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में किसी भी प्रकार का विस्तार किसी अन्य औपनिवेशिक शक्ति की कीमत पर ही हो सकता था। इस 'दौड़' में प्रतिस्पर्धियों की संख्या में भी वृद्धि हो गई थी। इस प्रकार से

VISION IAS

उपनिवेशवाद अब साम्राज्यवाद में परिवर्तित हो चुका था, क्योंकि अब औपनिवेशिक साम्राज्य को बनाये रखने और विस्तार करने के लिए सैन्य शक्ति और कठोर नियंत्रण की आवश्यकता थी। अगले चार दशकों में (1870 से आगे) उपनिवेशों के लिए होड़ प्रारम्भ हो गई थी और अछूते क्षेत्र केवल चीन और अफ्रीका में ही उपलब्ध थे, जिनके लिए यूरोपीय राष्ट्रों में होड़ लगी हुई थी।

- **धार्मिक और सांस्कृतिक कारक:** ईसाई धर्म का प्रसार करने के लिए ईसाई प्रचारकों (मिशनरीज) की आकांक्षाएँ और पिछड़े उपनिवेशों में श्रेष्ठ सभ्यता का प्रसार करने का भार श्वेत लोगों द्वारा अपने कंधे पर लिए जाने की धारणा ने भी इसमें अपनी भूमिका का निर्वाह किया। बेल्जियम के सम्राट लियोपोल्ड द्वितीय ने कांगो का शोषण करने के लिए इस धारणा को एक साम्राज्यिक रणनीति के रूप में उपयोग किया और ऐसा ही कुछ अन्य साम्राज्यवादी शक्तियों ने किया। परन्तु कुछ नेक व्यक्तियों ने सामाजिक सुधारों के माध्यम से लोगों के जीवन में उत्थान के लिए भी कार्य किया। थियोसोफिकल सोसायटी ने भी भारत में 1916 में साम्राज्यवाद विरोधी 'होम रूल आन्दोलन' का नेतृत्व किया। अन्य विषय जिन पर उन्होंने कार्य किया, उनमें महिलाओं के अधिकार और आधुनिक शिक्षा का प्रसार सम्मिलित थे।

नव साम्राज्यवादी शक्तियों का उदय		**औद्योगीकरण की वास्तविक शुरुआत**	**नव साम्राज्यवाद के पीड़ित**
इटली	1870 से आगे	1870 से आगे	प्रमुख रूप से अफ्रीका
जर्मनी	1870 से आगे	1870 से आगे	प्रमुख रूप से अफ्रीका, प्रशांत महासागर क्षेत्र
रूस	1850 के दशक से आगे	1914 तक प्रारम्भ हुआ फिर भी प्रथम विश्वयुद्ध के आरम्भ तक प्रमुखता कृषि अर्थव्यस्था थी	प्रमुख रूप से मध्य एशिया, पश्चिमी एशिया एवं चीन
संयुक्त राज्य अमेरिका	1890 के दशक तक	1865 से आगे	प्रमुख रूप से प्रशांत महासागर क्षेत्र (दक्षिणी अमेरिका का प्रभुत्व)
जापान	1890 के दशक तक	1868 से आगे	प्रमुख रू से चीन (सुदूर पूर्व) और प्रशांत महासागर क्षेत्र

19. अफ्रीका में उपनिवेशवाद

- 19वीं शताब्दी में इसके आन्तरिक क्षेत्रों की खोज नहीं होने से पहले तक अफ्रीकी महाद्वीप को अंध महाद्वीप के रूप में जाना जाता था। दुर्गम क्षेत्र, गैर-परिवहनीय नदियाँ और ऐसी ही अन्य भौगोलिक विशेषताओं के चलते ही अफ्रीका की मुख्य भूमि में उपनिवेशवाद का प्रवेश देर से हुआ और लम्बे समय तक यह तटीय अफ्रीका तक ही सीमित रहा।
- दास प्रथा पर पिछले अध्याय में पहले ही चर्चा की जा चुकी है।
- 19वीं शताब्दी में, व्यक्तिगत अन्वेषकों द्वारा किये गए अभियानों के प्रकाशन ने यूरोपीय लोगों में इसके प्रति रूचि बढ़ा दी। इन प्रकाशनों में उन अन्वेषकों के वृतांत भी सम्मिलित थे, जिन्होंने मध्य अफ्रीका की सम्पत्ति के विस्तृत विवरण प्रस्तुत किये थे। वे कांगो जैसी नदियों के जलमार्ग की रुपरेखा प्रस्तुत करने में सफल रहे। नदियों के नौवहन में योगदान और उनके जलमार्ग का ज्ञान होने का अर्थ था कि यूरोपीय कम्पनियाँ और उनके सैन्यबल अब आन्तरिक क्षेत्रों में पहुंच सकते थे और खनिज सम्पत्ति को आगे निर्यात करने के लिए तट पर वाहनों द्वारा ला सकते थे।
- बेल्जियम के सम्राट लियोपोल्ड द्वितीय ने अन्वेषकों को संरक्षण दिया और यह मध्य अफ्रीका में उपनिवेश स्थापित करने वाला पहला देश था। 1876 में उसने कांगो को अपने नियंत्रण में ले लिया और इसका प्रबन्धन निजी उपनिवेश के रूप में किया {1885 में कांगो का कांगो मुक्त राज्य (Congo Free State) के रूप में नामकरण कर दिया गया}। बेल्जियम की सफलता ने अन्य यूरोपीय शक्तियों की इसमें रूचि बढ़ा दी और उन्होंने भी अफ्रीका में उपनिवेशों की खोज के लिए प्रवेश किया। कांगो के

VISION IAS

उपनिवेशीकरण के पश्चात् अफ्रीका के लिए होड़ प्रारम्भ हो गई। 1914 तक अबीसीनिया (जहाँ 1876 में अडोवा के युद्ध में राष्ट्रवादियों द्वारा इटली की हार हुई थी) और लाईबेरिया को छोड़ कर सम्पूर्ण अफ्रीका - ब्रिटेन, बेल्जियम, फ्रांस, जर्मनी, इटली और पुर्तगाल में बंट चुका था।

- अफ्रीका में भू-क्षेत्र और व्यापारिक अधिकारों को लेकर यूरोपीय शक्तियों के बीच बहुत से विवाद थे। मिस्र और सूडान में अंग्रेजों और फ्रांसीसियों के हितों में टकराव था। बेल्जियम ने 1884 में ब्रिटेन और पुर्तगाल के बीच हुए समझौते का विरोध किया। इसके तहत इन दोनों के प्रभाव क्षेत्रों की सीमा निर्धारित की गई थी। चूंकि इसके द्वारा बेल्जियम को कांगो तक समुद्री पहुंच से वंचित कर दिया गया था, अतः उसने इसका विरोध किया था। अंततः यूरोपीय औपनिवेशिक शक्तियों के अतिव्यापी दावों को विभिन्न सम्मेलनों में वार्ताओं के माध्यम से सुलझाया गया।
- जर्मनी में 1884-85 के **बर्लिन सम्मेलन** का आयोजन पश्चिमी और मध्य अफ्रीका, विशेषकर नाइजर और कांगो नदियों के विवादों के समाधान के लिए किया गया था। यह एक महत्त्वपूर्ण घटना थी जिसके परिणामस्वरूप अफ्रीका में प्रत्येक औपनिवेशिक शक्ति के प्रभाव क्षेत्र को निर्धारित किया गया।

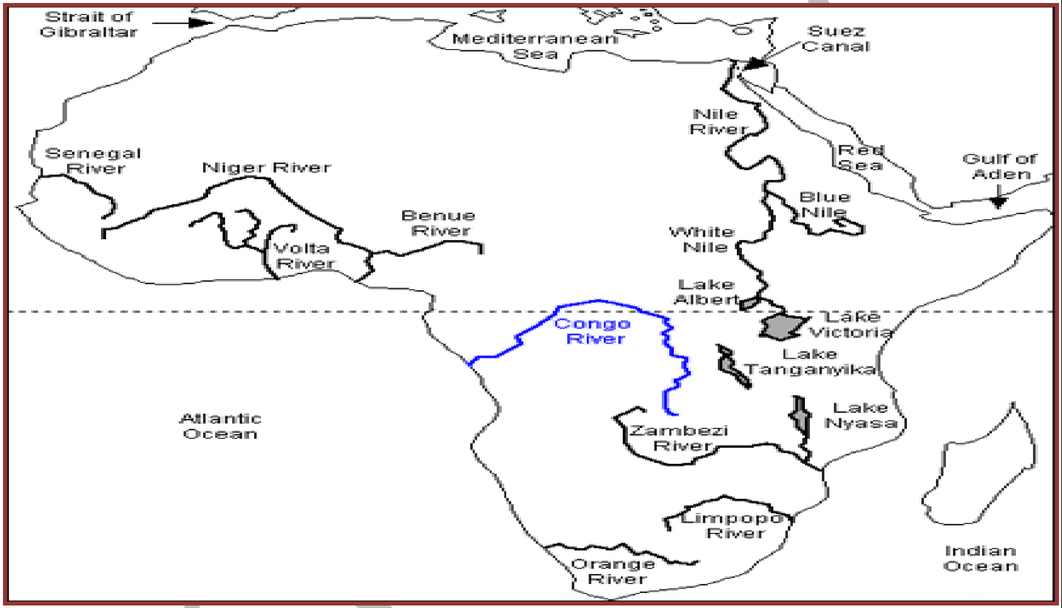

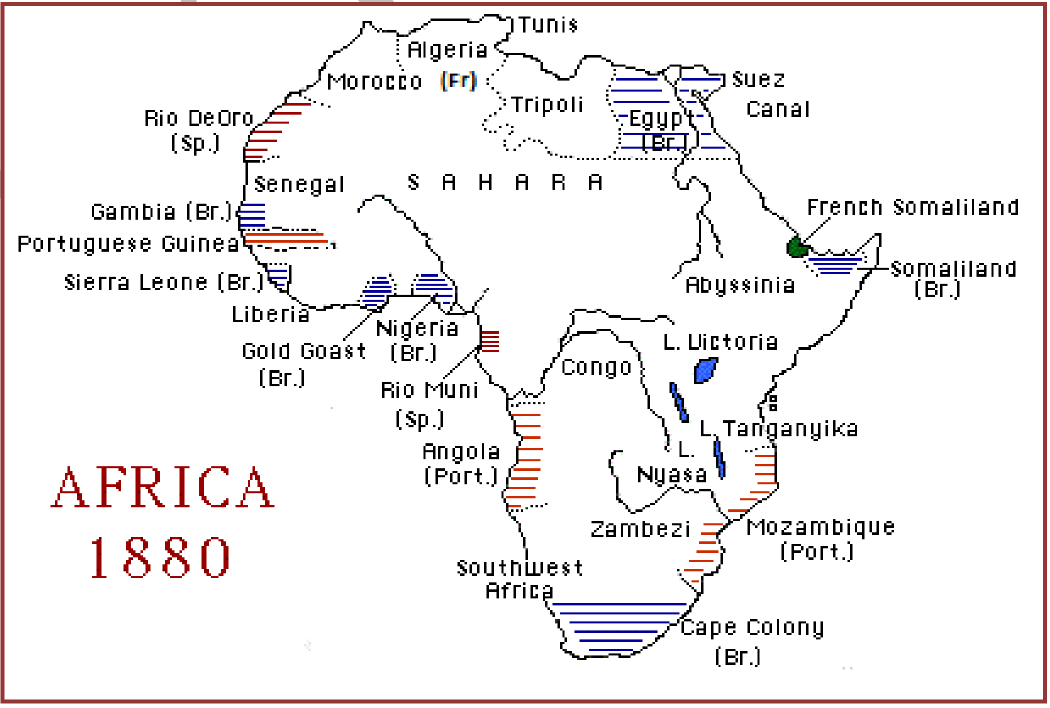

चित्र: 1880 में अफ्रीका

बर्लिन सम्मेलन (1884-85) के कुछ निर्णय इस प्रकार थे:

- नाइजर नदी घाटी को अंग्रेजों और फ्रांसीसियों के बीच विभाजित किया गया था, निचला नाइजर ब्रिटेन का संरक्षित राज्य बन गया और ऊपरी नाइजर फ्रांस का संरक्षित राज्य बन गया।
- नाइजर नदी को सभी हस्ताक्षरकर्ताओं के पोतों के लिए निःशुल्क बनाया गया।
- अंग्रेज, ट्युनिस को फ्रांस का उपनिवेश बनाने पर सहमत हो गये। स्पेन को आज के पश्चिमी सहारा का तटीय क्षेत्र सौंप दिया गया।
- इसके अतिरिक्त, यूरोपीय शक्तियों ने अफ्रीकी लोगों के कल्याण और विकास के लिए कदम उठाने का वचन भी दिया। इस सम्मेलन में अश्वेत और इस्लामिक शक्तियों द्वारा प्रयुक्त दास प्रथा को समाप्त करने हेतु संकल्प लिया गया। साथ ही प्रत्येक औपनिवेशक शक्ति द्वारा अपने प्रभाव क्षेत्र में इसको समाप्त किया जाना था।
- यह निर्णय लिया गया कि कांगो मुक्त राज्य का शासन ***इंटरनेशनल एसोसिएशन फॉर एक्सप्लोरेशन एंड सिविलाइज़ेशन ऑफ़ सेंट्रल अफ्रीका*** (International Association for Exploration and Civilization of Central Africa) द्वारा किया जायेगा। इस संघ की स्थापना बेल्जियम के सम्राट लियोपोल्ड द्वितीय द्वारा की गयी थी और इस प्रकार कांगो को सम्राट लियोपोल्ड द्वितीय के निजी उपनिवेश के रूप में मान्यता प्राप्त हो गयी (बेल्जियम सरकार द्वारा इसे 1908 में लियोपोल्ड द्वितीय से वापिस लिया जाना था)।
- कांगो नदी घाटी में सबके लिए व्यापार और जहाजरानी की स्वतंत्रता की गारंटी थी। किसी भी राष्ट्र को कांगो में किसी विशेषाधिकार का दावा नहीं मिला था और सम्राट लियोपोल्ड ने सभी हस्ताक्षरकर्ता राष्ट्रों को निवेश की स्वतंत्रता प्रदान कर दी थी। समझौते के अनुपालन की निगरानी के लिए एक अंतर्राष्ट्रीय आयोग भी स्थापित किया गया था।

19.1. अफ्रीका के लिए फ्रांसीसी संघर्ष

- फ्रांस ने उत्तर-पश्चिमी अफ्रीका में अपना साम्राज्य स्थापित किया। अल्जीयर्स (1830), गाम्बिया के कुछ हिस्से, और ट्युनिस (1881) को अपना उपनिवेश बनाने के पश्चात् अब यह मोरक्को पर अपना नियंत्रण स्थापित करना चाह रहा था। प्रारम्भ में फ्रांस को विरोध का सामना करना पड़ा। 1880 के **मैड्रिड सम्मेलन** में मोरक्को की स्वतंत्रता की गारंटी दी गयी और सभी यूरोपीय देशों को व्यापार की स्वतंत्रता का अधिकार दिया गया। परन्तु 1900 में फ्रांस ने इटली के साथ एक समझौते पर हस्ताक्षर किये, जिसके अंतर्गत इटली ने मोरक्को में फ्रांस के प्रभाव का विरोध न करने पर अपनी सहमति दे दी और फ्रांस ने इसके बदले में लीबिया पर इटली के नियंत्रण का विरोध न करने के लिए वचन दिया।
- बर्लिन सम्मेलन में ब्रिटेन ने ट्युनिस पर फ्रांस के विशेषाधिकार के लिए सहमति दे दी। इसके अतिरिक्त 1904 में ब्रिटेन और फ्रांस ने एक समझौते पर हस्ताक्षर किये, जिसके अंतर्गत फ्रांस ने मिस्र और सूडान पर अंग्रेजों के विशेषाधिकार को मान्यता दी, वहीं फ्रांस को मोरक्को पर अपने विशेषाधिकार को मान्यता मिल गयी। इसी वर्ष, एक समझौते के अंतर्गत मोरक्को में स्पेन और फ्रांस की सीमाएं निर्धारित की गईं। उपनिवेशवाद की होड़ में जर्मनी का प्रवेश सबसे बाद में हुआ और वह अपने आप को इस होड़ में पिछड़ा हुआ अनुभव कर रहा था। 1911 में जब फ्रांस ने मोरक्को में अपनी सेना तैनात की तो जर्मनी ने अपने युद्धपोत को निकटवर्ती द्वीप अगादिर में भेज दिया। वार्ता के पश्चात् जर्मनी को फ्रांसीसी कांगो का कुछ क्षेत्र दे दिया गया और उसके बदले में उसने मोरक्को पर फ्रांस के नियंत्रण को मान्यता दे दी। 1912 में फ्रांस ने मोरक्को को अपना संरक्षित राज्य बना लिया और मोरक्को अब स्वतंत्र नहीं था।

VISION IAS

19.2. अफ्रीका के लिए ब्रिटिश संघर्ष

- दक्षिणी, पूर्वी एवं पश्चिमी अफ्रीका में अंग्रेजों के उपनिवेश थे। पश्चिम में गोल्ड कोस्ट (घाना) का इसका उपनिवेश कोको के उत्पादन में बहुत समृद्ध था, वहीं नाईजीरिया में तेल के बहुत बड़े भंडार थे। स्वेज नहर के कारण मिस्र में अंग्रेजों की विशेष रूचि थी, जहाँ से उसे अपने एशियाई उपनिवेशों के लिए, विशेषकर भारत के लिए छोटा समुद्री मार्ग मिलता था। स्वेज नहर का प्रबन्धन एक कम्पनी कर रही थी, जिसमें फ़्रांस और मिस्र के गवर्नर की सहभागिता थी। 19वीं शताब्दी में मिस्र आर्थिक संकट से गुजर रहा था और उसे स्वेज नहर में अपनी शेयरधारिता 1875 में अंग्रेजों को बेचनी पड़ी। 1876 में मिस्र; ब्रिटेन और फ्रांस से लिए गये अपने ऋण की किश्त वापस करने में असफल रहा परिणामस्वरूप दोनों यूरोपीय शक्तियों ने मिस्र की सरकार के बजट प्रबन्धन के लिए एक परिषद की स्थापना की और इस प्रकार मिस्र उनके आर्थिक नियंत्रण में आ गया। कराधान की उच्च दरों और वेतन भुगतान में देरी के कारण मिस्र की सेना ने 1882 में विद्रोह कर दिया। ब्रिटिश सेना ने इस विद्रोह को कुचल दिया और मिस्र अंग्रेजों के नियंत्रण में आ गया। 1904 में फ़्रांस ने मोरक्को पर अपने अधिकार की मान्यता के बदले में मिस्र और सूडान पर अंग्रेजों के नियंत्रण को मान्यता दे दी। 1922 में, मिस्र को स्वतंत्रता दे दी गयी परन्तु ब्रिटेन ने स्वेज नहर पर अपना नियंत्रण बनाए रखा।

19.3. अफ्रीका के लिए जर्मनी का संघर्ष

- अफ्रीका के लिए संघर्ष में जर्मनी ने 1870 में अपने एकीकरण के पश्चात् प्रवेश किया। 1882 से 1884 तक जर्मनी दक्षिणी पश्चिमी अफ्रीका, कैमरुन और भूमध्यरेखीय अफ्रीका में टोगोलैंड और जर्मन पूर्वी अफ्रीका में उपनिवेश स्थापित करने में सफल रहा।
- प्रथम विश्वयुद्ध के पश्चात् जर्मन औपनिवेशिक साम्राज्य का अंत हो गया और इसके उपनिवेशों को मित्र राष्ट्रों के बीच मैंडेट्स के रूप में बाँट दिया गया। मैंडेट्स वे पूर्व उपनिवेश थे, जिन्हें लीग ऑफ़ नेशंस द्वारा बाद में स्वतंत्रता प्राप्ति हेतु तैयार करने के लिए विकसित देशों को सौंप दिया गया था। उदाहरण के लिए जर्मनी के कब्जे वाले दक्षिणी-पश्चिमी अफ्रीका को मैंडेट के रूप में दक्षिणी अफ्रीका को सौंप दिया गया था।

19.4. अफ्रीका के लिए इटली का संघर्ष

- जर्मनी की भांति, इटली भी देर से प्रवेश करने वालों में से था। यह ट्युनिस को उपनिवेश बनाने में असफल रहा, क्योंकि फ़्रांस ने 1881 में इसे अपने अधिकार में ले लिया था। यह उत्तरी-पूर्वी अफ्रीका में ईरीट्रिया को उपनिवेश बनाने में सफल रहा। विभिन्न संधियों के माध्यम से 1880 के दशक में इसने पूर्वी सोमालीलैंड का अधिग्रहण किया। अबीसीनिया (इथोपिया), ईरीट्रिया और पूर्वी सोमालिया के बीच में पड़ता है। इटली इसे उपनिवेश बनाने में विफल रहा और 1896 में यहाँ के राष्ट्रवादियों ने इटली को हरा दिया। 1911 में, इटली ने निर्बल ऑटोमन तुर्की साम्राज्य से लीबिया को अपने कब्जे में ले लिया। 1935 में इटली ने इथियोपिया पर हमला करके उसे अपने नियंत्रण में ले लिया। द्वितीय विश्व युद्ध में पराजय के पश्चात् इटली ने अपने सभी उपनिवेशों से हाथ धो लिए।
- बेल्जियम जैसा छोटा-सा राष्ट्र भी अफ़्रीकी केक में अपना भाग प्राप्त करने में सफल रहा। पहले इसने कांगो को अपना उपनिवेश बनाया और फिर रवांडा और बुरुंडी में अपने नियंत्रण का विस्तार कर लिया।
- अंगोला, गिनी और मोजाम्बीक पुर्तगाल के उपनिवेश थे; वहीं स्पेन के पास मोरक्को, स्पेनिश सहारा (रिओ डी ओरो इसका भाग था) और स्पेनिश गिनी थे।

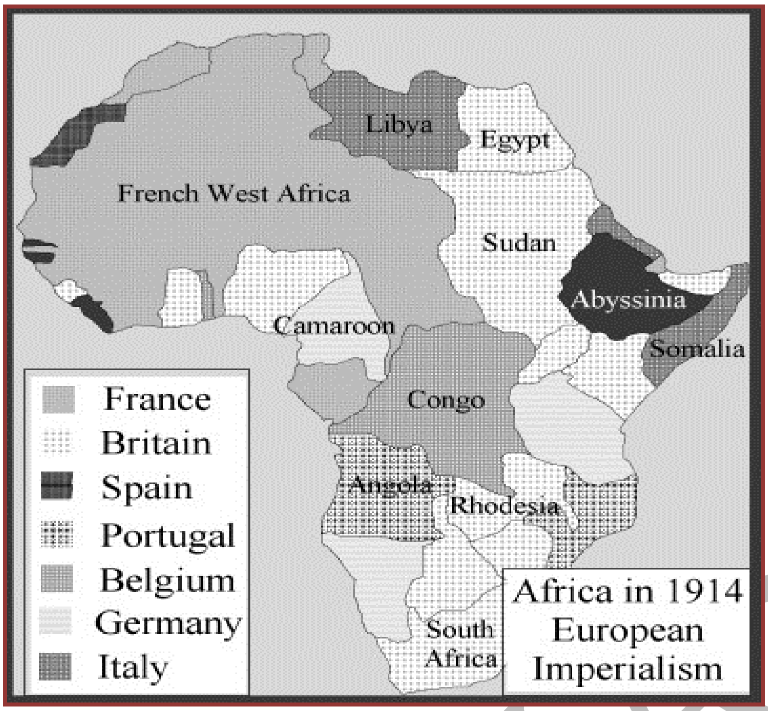

चित्र: यूरोपीय साम्राज्यवाद और अफ्रीका (1914)

19.5. अफ्रीका पर उपनिवेशवाद के प्रभाव

- औपनिवेशिक श्वेत लोग कुलीन बन गए और उन्होंने देशी अश्वेतों का शोषण किया।
- दासप्रथा।
- औपनिवेशिक शक्तियों द्वारा जनसंहार।
- फूट डालो और राज करो की नीति ने स्वतंत्रता के पश्चात् समस्याएं उत्पन्न कीं।
- शिक्षा और स्वास्थ्य की अत्यधिक उपेक्षा।
- आर्थिक विकास की क्षति।

19.5.1. औपनिवेशिक श्वेत लोग कुलीन बन गए और उन्होंने देशी अश्वेतों का शोषण किया

- अफ्रीका में उपनिवेशवाद अपने साथ व्यवसायी, व्यापारी, प्रचारक, सैन्य और प्रशासनिक अधिकारी साथ ले कर आया। उनमें से अनेक अफ्रीका की समृद्ध कृषि-योग्य भूमि और व्यापार के लाभ के आकर्षण के कारण वहीं बस गए। प्रचारकों ने अपने धर्म के प्रचार के लिए यहाँ का रुख किया और चर्चों की स्थापना की। इसलिए आज हम कई अफ्रीकी देशों को मुस्लिम और ईसाई वर्चस्व वाले क्षेत्रों में विभाजित देखते हैं। यूरोप वासी अफ्रीका में कुलीन बन गए थे और विलासितापूर्ण जीवन का आनन्द उठाते थे जिसे वे स्वदेश में प्राप्त करने में असमर्थ थे। दक्षिणी अफ्रीका में बोअर्स जैसे औपनिवेशिक श्वेत लोग अफ्रीका में समृद्ध और शक्तिशाली बन गए। उनका सरकार पर नियंत्रण था और उन्होंने अफ्रीकियों को उनके किसी भी राजनीतिक अधिकार से वंचित कर दिया था। लगभग प्रत्येक उपनिवेश में अफ्रीकियों की भूमि को औपनिवेशिक श्वेत लोगों ने कृषि और खनन के लिए उनसे ले लिया था और अश्वेत लोग उनके दासों के रूप में कार्य करते थे।

19.5.2. दासप्रथा

- दास व्यापार ने कई अफ्रीकियों को बलपूर्वक अपने घरों को छोड़ने के लिए विवश कर दिया और वे फिर कभी अपने घर वापस नहीं लौट सके। इसने कई परिवारों को नष्ट कर दिया। स्थानीय अफ्रीकियों का स्थानीय दास बाजारों में व्यापार होता था। अफ्रीका में यूरोपीय खेतों में वे श्रमिकों की भांति कार्य करते थे। दासप्रथा का मनोवैज्ञानिक कुप्रभाव हीन भावना थी, जिसे सुव्यवस्थित रूप से समाज में पहुंचाया जा रहा था और स्वामी और दास के वर्णभेद की अवधारणा को चर्च तक का समर्थन प्राप्त था। दक्षिण अफ्रीका और जिम्बाब्वे में अफ्रीकियों को उनके अधिकारों से वंचित करने के लिए वर्णभेद के सिद्धांत की रंगभेद नीति को संस्थागत रूप से प्रचारित किया गया।

VISION IAS

 ©Vision IAS

19.5.3. औपनिवेशिक शक्तियों द्वारा जनसंहार

- अफ्रीकियों ने बहुत वीरता के साथ औपनिवेशिक सेनाओं का विरोध किया, परन्तु वे यूरोपीय लोगों की बंदूक की तकनीक के विरुद्ध खड़े नहीं हो सके। यूरोपीय सेनाओं द्वारा कई अफ्रीकियों को अपनी भूमियों को छीने जाने, दासता, और यूरोपियों द्वारा प्रस्तावित प्रतिकूल संधियों और यूरोपीय संस्कृति को लागू करने का विरोध करने के कारण हत्याएँ की गईं। जब कभी भी स्थानीय निवासियों ने उपनिवेशियों की मांगों को मानने से मना किया तो पूरे गाँव को नष्ट कर दिया जाता था। बेल्जियम कांगो ने शायद आधुनिक युग का पहला जनसंहार देखा था। 1876 से 1910 तक बेल्जियम के सम्राट लियोपोल्ड द्वितीय के प्रशासनिक अधिकारियों ने लगभग 10 मिलियन अफ्रीकियों को बेल्जियम कांगो में मौत के घाट उतार दिया था।

19.5.4. *बांटो और राज करो* की नीति से स्वतंत्रता पश्चात् समस्याएं

- विभिन्न भौगोलिक कारकों के कारण अफ्रीका में विभिन्न आदिवासी संस्कृतियाँ देखने को मिलती हैं। अफ्रीका की खींचतान ने अफ्रीका को मनमानी सीमाओं के साथ कई उपनिवेशों में विभाजित कर दिया था, जिनमें भौगोलिक निरन्तरता, सांस्कृतिक एकता या आर्थिक व्यवहार्यता का अभाव था। इन उपनिवेशों में विभिन्न जनजातियाँ निवास करती थीं जिनकी बिलकुल ही भिन्न-भिन्न संस्कृतियाँ थीं। वे स्वयं को एक राष्ट्र के भाग के रूप में नहीं देखते थे। इसके अतिरिक्त, उपनिवेशवादियों ने *बांटो और राज करो* की शासकीय नीति का उपयोग किया। उन्होंने एक जनजाति को किसी अन्य जनजाति के मूल्य पर संरक्षित किया। अभीष्ट जनजातीय लोगों को शस्त्र और धन उपलब्ध कराया गया जिसका उपयोग अन्य जनजातियों को बलपूर्वक अधीनता में लाने के लिए किया जाता था। इसके कारण जनजातीय समूहों में परस्पर शत्रुता उत्पन्न हुई। उदाहरण के लिए, रवांडा में बेल्जियम ने इस नीति का पालन किया और स्वाधीनता के पश्चात् देश में निरंतर जनजातीय हिंसा की घटनाएँ देखने में आईं। हाल ही के इतिहास में यह देखा गया कि 1994 में, इस प्रक्रिया ने सबसे विकृत नृजातीय संघर्ष का रूप लिया, जिसमें हुतू जनजाति के लोगों ने तुत्सी कबीले के लाखों लोगों की हत्या कर दी। अफ्रीकी राष्ट्रों में आज भी राष्ट्रीय एकता की कमी भयाक्रांत करती है, जिसके कारण एक कार्यात्मक लोकतंत्र को सुनिश्चित करना कठिन हो गया है।

19.5.5. शिक्षा और स्वास्थ्य की अत्यधिक उपेक्षा

- उपनिवेशवादियों और श्वेत उपनिवेशियों ने यह सुनिश्चित किया कि देशी अश्वेत शिक्षित न हो सकें। उच्च शिक्षा की विशेष रूप से उपेक्षा की गयी। जहाँ भी रंगभेद की नीति का अनुसरण किया गया, अफ्रीकियों को भिन्न विद्यालयों में निम्न स्तर की शिक्षा प्रदान की गई। अफ़्रीकी देशों की स्वाधीनता के पश्चात् यदि सांख्यिकीय रूप में कहा जाए तो प्राथमिक, माध्यमिक और उच्च स्तर पर प्रवेश का अनुपात बहुत ही कम था। उदाहरण के लिए 1960 में बेल्जियम कांगो की स्वाधीनता के समय केवल 17 स्नातक थे और कोई भी चिकित्सक, वकील, इंजीनियर नहीं था। इसके अतिरिक्त सेना में अधिकारी पद पर कोई भी अफ़्रीकी नहीं था। इसके परिणामस्वरूप, स्वाधीनता के पश्चात् प्रशासनिक अक्षमता देखने को मिली जिसकी परिणिति लोकतान्त्रिक सरकारों के निरंतर पतन में हुई। निर्वाचित सरकारें विकास के बड़े लक्ष्यों को पूरा करने में विफल रहीं और वे सहायता के लिए विकसित विश्व पर निर्भर हो गए, जिसके कारण अफ़्रीकी देशों में एक नव-उपनिवेशवाद आया। आज अफ्रीका की जनसंख्या तेजी से बढ़ रही है और इसकी अधिकांश जनसंख्या कार्यशील आयुवर्ग में है। शिक्षा की कमी के चलते इस कार्यशील आयुवर्ग के ढांचे को जनसांख्यिकीय लाभांश में परिवर्तित करने का प्रयास किया जा रहा है, यदि यह कार्य आरंभ में हुआ होता तो वर्तमान में एक कुशल कार्यबल सुनिश्चित किया जा सकता था।
- स्वास्थ्य क्षेत्रक को भी बहुत अधिक उपेक्षित किया गया। ये उपनिवेश भूमध्यरेखीय आर्द्र जलवायु के कारण नियमित रूप से कई महामारियों से ग्रस्त रहते हैं। HIV- AIDS अफ्रीका में सर्वाधिक प्रचलित बीमारी है और आज WHO तथा बिल एवं मिलिंडा गेट्स फाउंडेशन जैसे गैर-सरकारी संगठनों के लिए यह सबसे बड़ा कार्यक्षेत्र है।

VISION IAS

19.5.6. आर्थिक विकास की क्षति

- उपनिवेशवाद, उपनिवेशवासियों के मनोवैज्ञानिक, सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक पक्षों को प्रभावित करता है। जनजातीय विवादों के कारण समाज में एकजुटता का अभाव, दासता के कारण जातिगत पूर्वाग्रहों की उपस्थिति, निरंतर हीन भावना, शिक्षा का अभाव तथा शासन में भागीदारी का नकारा जाना – उपनिवेशवाद के नकारात्मक पक्ष हैं। ये कारक आर्थिक विकास में बाधक बने और स्वदेशी उद्यमशीलता को अफ्रीका में विकसित नहीं होने दिए। औपनिवेशक शक्तियों द्वारा वाणिज्यिक पूंजीवाद का अनुसरण किए जाने से अफ्रीकी अर्थव्यवस्थाओं को क्षति पहुंची। अफ्रीकियों को निर्यात किए गए अपने खनिज संसाधनों का बाजार मूल्य नहीं मिला। उपनिवेशवादियों ने यह सुनिश्चित किया कि अफ्रीका में कोई भी स्वदेशी उद्योग न विकसित हो और अफ्रीका केवल कच्चे माल का निर्यातक और यूरोपीय कारखानों में उत्पादित तैयार माल का आयातक बना रहे।
- 1880 के दशक में बर्लिन सम्मेलन में अफ्रीकी क्षेत्रों के संदर्भ में जर्मनी विभिन्न यूरोपीय देशों के स्पष्ट नियंत्रण से सम्बन्धित एक खंड (clause) शामिल करना चाहता था, ताकि उक्त क्षेत्र पर किसी औपनिवेशिक राष्ट्र का स्पष्ट दावा हो सके। इस खंड के जोड़े जाने से मुख्य लाभ यह होना था कि कोई औपनिवेशिक राष्ट्र अपने उपनिवेश में आधारभूत ढांचा विकसित कर सकता था, साथ ही कानून एवं व्यवस्था हेतु एक मशीनरी भी विकसित की जा सकती थी। जर्मनी इस खंड का उपयोग कर अन्य यूरोपीय राष्ट्रों को उपनिवेश स्थापित करने से रोकना चाहता था। परन्तु ब्रिटेन और फ्रांस ने इस खंड को नहीं जुड़ने दिया। इस प्रकार कई अफ्रीकी राष्ट्रों में औपनिवेशिक शक्तियों ने शासन किया और आर्थिक लाभ अर्जित किए। जो भी थोड़ी बहुत मूलभूत अवसरंचना विकसित की गयी थी उसे औपनिवेशिक हितों को सुगम बनाने के लिए किया गया था। उदाहरण के लिए परिवहन ढांचे का उद्देश्य आन्तरिक खनिज समृद्ध क्षेत्रों से कच्चे माल को बंदरगाहों तक पहुँचाना था। ब्रिटेन हाईड्रोकार्बन की निकासी के लिए सूडान और नाईजीरिया में पाईपलाइन विकसित करने की जल्दी में था। इसके अतिरिक्त औपनिवेशिक प्रतिद्वंदिता के परिणामस्वरूप उपनिवेशवादियों ने उपनिवेशों के बीच व्यापारिक अवरोध उत्पन्न किये और इस प्रकार अफ्रीका में कोई एकीकृत बाजार विकसित नहीं हो सका।

20. प्रशांत महासागर क्षेत्र में उपनिवेशवाद

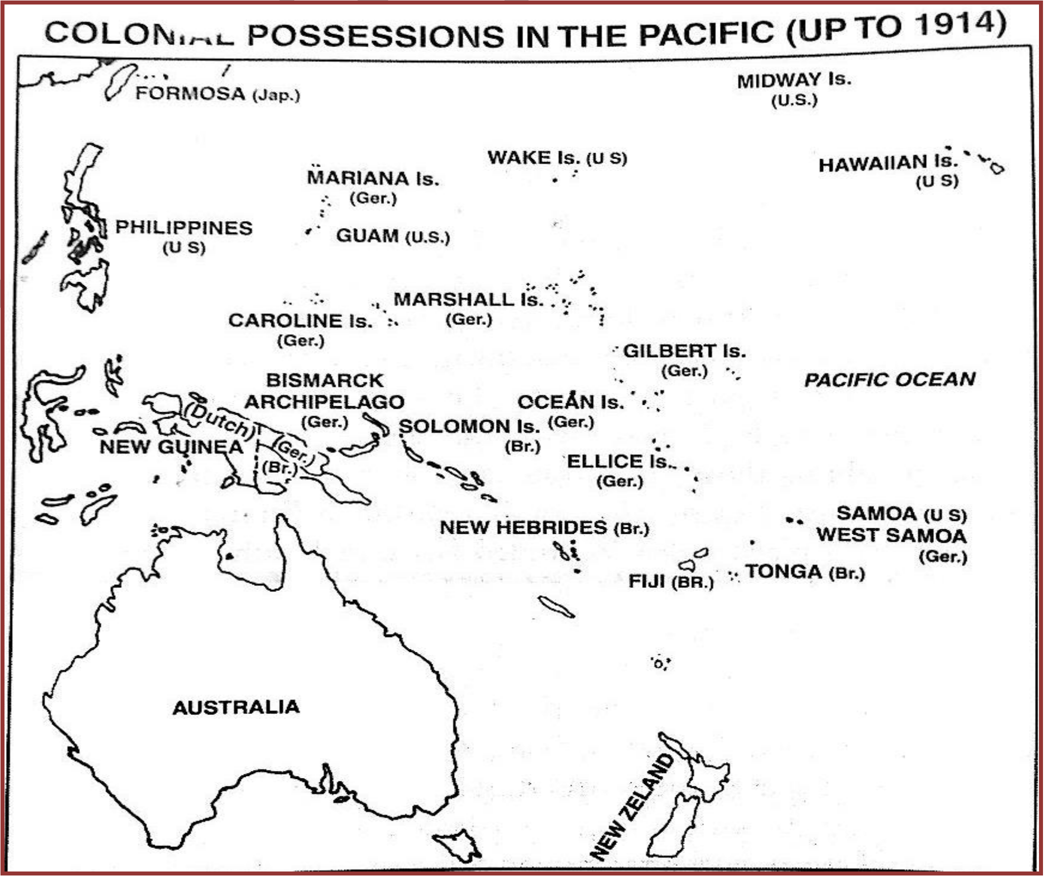

www.examdivision.com ExamDivision.com

- वर्ष 1900 तक प्रशांत महासागर के लगभग सभी द्वीप औपनिवेशिक नियंत्रण में आ गए थे।
- **संयुक्त राज्य अमेरिका:** 1823 में संयुक्त राज्य अमेरिका ने मुनरो सिद्धांत प्रस्तुत किया। इसमें दो बातों पर विशेष बल दिया गया था: सम्पूर्ण अमेरिका (उत्तर और दक्षिण) में अलगाव और यू.एस. अधिपत्य की नीति। इसमें कहा गया था कि संयुक्त राज्य अमेरिका यूरोपीय मामलों या उनके उपनिवेशों में हस्तक्षेप नहीं करेगा और अपने बैकयार्ड (उत्तर और दक्षिण अमेरिका) में किसी भी प्रकार के हस्तक्षेप को आक्रामक कार्यवाही मानेगा। परन्तु 1890 तक, अमेरिका एक नई साम्राज्यवादी शक्ति के रूप में उभरा। इसने अमेरिका के बाहरी क्षेत्रों को भी अपने प्रभाव में लाना प्रारम्भ कर दिया अर्थात इसने अपनी 'बैकयार्ड' अवधारणा का विस्तार प्रशांत महासागर और सुदूर पूर्व (चीन) तक कर दिया।
- 1881 तक यू.एस.ए. ने हवाई द्वीप समूह पर यह कहते हुए दावा करना प्रारंभ कर दिया कि ये द्वीप अमेरिका के अंग हैं। स्पेन-अमेरिकी युद्ध (जिसे स्पेन के उपनिवेश क्यूबा पर अधिपत्य के लिए लड़ा गया था) के परिणामस्वरूप:
  - प्रशांत महासागर में स्पेन के उपनिवेश:
    - फिलीपींस पर यू.एस.ए. ने आक्रमण किया और इसका अधिग्रहण कर लिया।
    - प्युर्टो रिको और गुआम को अमेरिका को सौंप दिया गया।
  - यद्यपि क्यूबा को स्वतंत्र कर दिया गया परन्तु इसकी विदेश नीति यू.एस.ए. के नियंत्रण में आ गई और इसपर किसी अन्य देश के साथ संधि करने पर प्रतिबन्ध लगा दिया गया।
- हवाई द्वीप समूह (प्रशांत क्षेत्र) पर 1898 में आधिकारिक रूप से यू.एस. का नियंत्रण हो गया। (*गुआम और हवाई द्वीप आज भी अमेरिका की एशिया नीति के लिए रणनीतिक रूप से महत्त्वपूर्ण हैं)।
- अमेरिका, जर्मनी और ब्रिटेन के मध्य सामोआ द्वीप पर नियंत्रण को लेकर विवाद था। 1899 में सामोआ द्वीपों को यू.एस. और जर्मनी के मध्य विभाजित कर दिया गया। (ब्रिटेन को इसकी क्षतिपूर्ति कहीं और की गई)।
- ब्रिटेन के मामले में न्यूजीलैंड और ऑस्ट्रेलिया के अधिवासी चाहते थे कि उनके आसपास के क्षेत्रों को ब्रिटेन अपना उपनिवेश बनाए। निरंकुश शासन का विरोध करने वाले फिजी के मूल निवासियों की मांग पर ब्रिटेन ने 1885 में फिजी पर अधिकार कर लिया। 1885 में ब्रिटेन और जर्मनी ने न्यू गिनी के पूर्वी भाग को अपने मध्य विभाजित कर लिया, जबकि पश्चिम भाग पर हॉलैंड का नियंत्रण था। प्रशांत महासागर के कुछ द्वीपों को जर्मनी ने स्पेन से खरीद लिया।

21. मध्य और पश्चिमी एशिया में उपनिवेशवाद

COLONIAL POSSESSIONS IN ASIA IN 1914

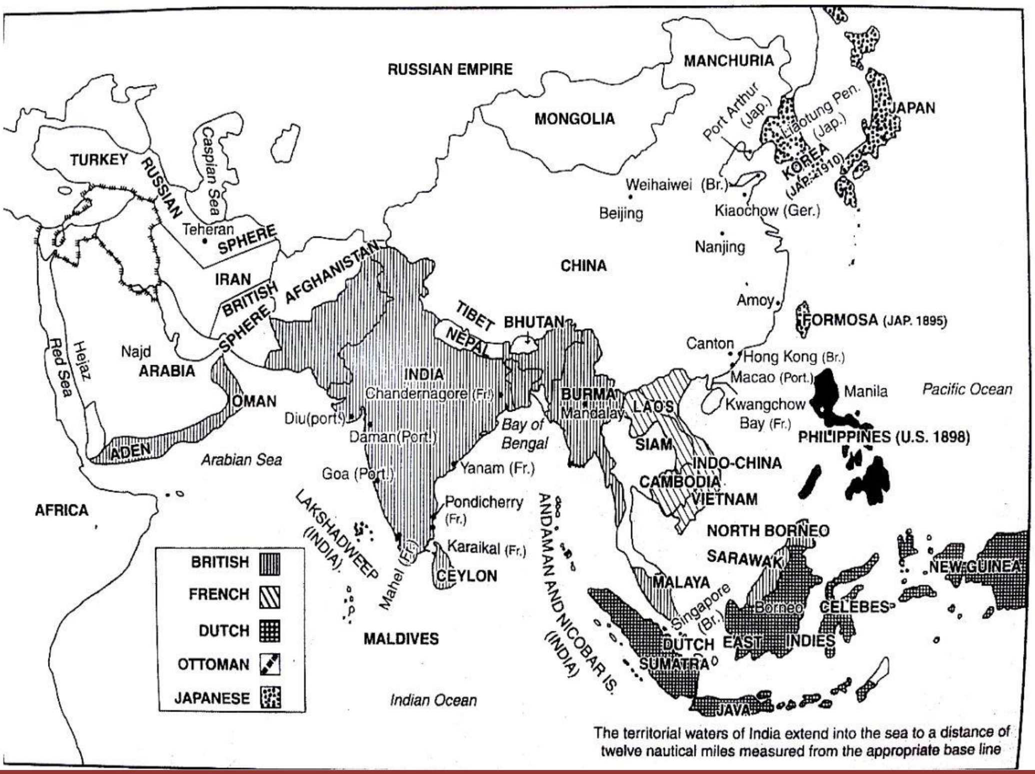

- मध्य और पश्चिमी एशिया में उपनिवेशों को लेकर प्रतिद्वंदिता मुख्य रूप से रूस और ब्रिटेन के मध्य थी। व्यापार की सुगमता के लिए रूस समुद्र तक आसान पहुंच चाहता था, इसलिए वह इन क्षेत्रों के बन्दरगाहों को नियंत्रित करना चाहता था। वह विस्तारवादी नीति का पालन कर रहा था, जो ब्रिटेन के भारतीय साम्राज्य के लिए खतरा थी। 1907 तक दोनों प्रतिद्वन्दियों के संबंध तनावपूर्ण थे। एशिया में रुसी विस्तार क्रीमिया युद्ध (1853-56) के पश्चात् प्रारम्भ हुआ, जिसमें फ्रांस, ब्रिटेन, ऑटोमन साम्राज्य और सार्डिनिया (इटली) के गठबंधन से रूस की पराजय हुई। क्रीमिया युद्ध में रूस निर्बल ऑटोमन साम्राज्य के हितों के मूल्य पर विस्तार करना चाहता था जबकि यूरोपीय शक्तियाँ रूस के इस विस्तार के विरुद्ध थीं, क्योंकि इससे पूर्वी यूरोप के रुसी प्रभाव में आने का खतरा था। 1858 में रूस ने अपने सुदूर पूर्वी क्षेत्र और मंचूरिया (चीन) के बीच आधुनिक सीमा की स्थापना के लिए, चीन को अमूर नदी के उत्तर में एक विशाल क्षेत्र रूस को सौंपने पर विवश कर दिया। चीन आज भी रूस से इस क्षेत्र को वापस लेने के लिए प्रयासरत है।

चित्र: अमूर नदी

- इससे रूस को पश्चिमी प्रशांत महासागर में एक बन्दरगाह प्राप्त हो गया। तिब्बत में रूस के प्रभाव को रोकने के लिए 1904 में ब्रिटेन ने अपने सैनिकों को तिब्बत भेजा और तिब्बत की विदेश नीति पर अपना नियंत्रण कर लिया। 1904-05 के रुसी-जापानी युद्ध में हार से निर्बल रूस ने 1907 में ब्रिटेन के साथ एक समझौता कर लिया और तिब्बत एवं अफगानिस्तान को ब्रिटिश प्रभाव क्षेत्र के रूप में मान्यता प्रदान कर दी। इस प्रकार ब्रिटेन भारत और रूस के बीच एक मध्यवर्ती क्षेत्र बनाने में सफल हो गया।
- 1907 के समझौते के अनुसार फारस (ईरान) में उत्तरी ईरान को रूसी प्रभाव क्षेत्र और दक्षिणी ईरान को ब्रिटिश प्रभाव क्षेत्र के रूप में मान्यता प्राप्त हो गई और मध्य ईरान एक मध्यवर्ती क्षेत्र बन गया, जिसमें दोनों देशों को समान स्वतंत्रता प्राप्त थी।
- एशिया में ब्रिटेन के पास भारत, सीलोन (श्रीलंका), अफगानिस्तान और बर्मा थे।
- 1871 तक चीन के अतिरिक्त सुदूर पूर्व के अधिकांश क्षेत्रों का बंटवारा किसी न किसी शक्ति के प्रभाव क्षेत्र के रूप में हो गया था। रूस के नियंत्रण में एक-तिहाई क्षेत्र था। पूर्वी एशिया में चीन और जापान स्वतंत्र थे। जापान साम्राज्यवाद से बच गया और मेइजी पुनःस्थापना के पश्चात् उसने औद्योगीकरण प्रारम्भ कर दिया। जापान 1890 के दशक में साम्राज्यवादी बन गया और 19वीं और 20वीं शताब्दी में चीन साम्राज्यवादी विस्तार का लक्ष्य बन गया।

22. चीन में साम्राज्यवाद

उपनिवेशवाद के दौर में चीन में घटने वाली घटनाएँ निम्नलिखित हैं: (हालांकि इसे उपनिवेशवाद की अपेक्षा नव-उपनिवेशवाद कहना अधिक प्रासंगिक होगा):

- पुर्तगालियों द्वारा 1514 में चीन की खोज की गई और 1557 में कैंटन में एक व्यापारिक केंद्र की स्थापना के साथ ही उन्होंने चीन के साथ व्यापारिक संबंध स्थापित किया।
- परन्तु चीन ने पृथकता की नीति का अनुसरण किया और व्यापारिक गतिविधियाँ सीमित ही रहीं।

- 19वीं शताब्दी के अफीम युद्धों ने चीन को विश्व के साथ खुलने पर विवश कर दिया अर्थात् व्यापार, विदेशियों का आवागमन और राजनयिक सम्बन्धों की स्थापना होने लगी।
- ऐतिहासिक रूप से, चीन में राष्ट्रीय एकता थी और मांचू वंश ने 1640 से 1911 तक वहां शासन किया। परन्तु, 1840 से 1949 की अवधि में चीन विदेशी हस्तक्षेप, गृहयुद्ध और विघटन का साक्षी बना।
- ताईपिंग विद्रोह (1850-64) एक धार्मिक-राजनीतिक आन्दोलन था, जिसे चीन की प्रादेशिक सेनाओं ने कुचल दिया था।
- 1858 में अमूर नदी के उत्तर का क्षेत्र रूस को सौंपना पड़ा।
- जापान ने 1894-95 में चीन पर आक्रमण किया और चीन के कई भागों को अपने नियंत्रण में कर लिया, विशेषकर मंचूरिया को जापान के आर्थिक प्रभाव में ले लिया गया।
- 1899-1900 में बॉक्सर विद्रोह हुआ। यह विदेशी लोगों की उपस्थिति एवं हस्तक्षेप विरोधी और इसाई-विरोधी था। इसे दबाने के लिए अंग्रेजों ने भारतीय सैनिकों को तैनात किया।
- 1904-05 के रूस-जापान युद्ध में जापान विजयी रहा और रूस द्वारा नियंत्रित क्षेत्रों को अपने नियंत्रण में ले लिया।
- 1911 में मांचू राजवंश को सत्ता से बाहर कर दिया गया और गणतन्त्र की घोषणा कर दी गई।
- 1916 से 1928 तक चीन में कोई भी केन्द्रीय सत्ता अस्तित्व में नहीं थी और विभिन्न प्रान्तों में निजी सेनाओं वाले जनरलों का नियंत्रण था। इस युग को **वॉरलॉर्ड युग (Warlord Era)** के रूप में जाना जाता है।
- कुओमिन्तांग या KMT या नेशनलिस्ट पार्टी का उद्भव वॉरलॉर्ड युग में हुआ और इसने वॉरलॉर्ड युग को 1928 तक पूर्ण रूपेण समाप्त कर दिया। **सन यात सेन** और उसके पश्चात् **च्यांग काई शेक** इसके महत्त्वपूर्ण नेता थे।
- 1920 के दशक के उपरांत KMT और चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के मध्य गृह-युद्ध लड़ा गया, जिसमें 1949 में चीनी कम्युनिस्ट पार्टी विजयी हुई, चीन में कम्युनिस्ट सरकार की स्थापना हुई, च्यांग काई शेक भाग कर ताईवान चले गए और वहीं से निर्वासित सरकार का संचालन किया।

22.1. चीन की घटनाओं का विवरण

- 1514 में पुर्तगालियों ने चीन की खोज की और 1557 में कैंटन में एक व्यापारिक केंद्र की स्थापना के साथ ही इन्होंने चीन के साथ व्यापारिक संबंध स्थापित किए। 1730 तक, सभी यूरोपीय राष्ट्र चीन के साथ व्यापार में संलग्न हो गए थे, जबकि संयुक्त राज्य अमेरिका ने 1784 में चीन के साथ व्यापार प्रारम्भ किया। परन्तु जब यूरोपीय राष्ट्रों, विशेषकर रोम (1870 तक रोम को फ्रांस का समर्थन प्राप्त था। इसलिए फ्रांस की भी चीन में संलिप्तता थी।) के ईसाई प्रचारकों ने चीन के आंतरिक मामलों में हस्तक्षेप करना प्रारम्भ कर दिया तो चीन ने पृथकतावादी नीति का अनुसरण किया। चीन ने कुछ चयनित चीनी व्यापारियों के माध्यम से केवल कैंटन बन्दरगाह से सीमित व्यापार की अनुमति प्रदान की।

22.2. प्रथम एवं द्वितीय अफीम युद्ध (1840-42 और 1858)

- 19वीं शताब्दी में, चीन में मांचू वंश की निर्बल सरकार थी। इस समय तक ब्रिटेन चीन का प्रमुख व्यापारिक सहभागी बन गया था परन्तु चीन के आत्मनिर्भर होने और पश्चिम से कम आयात के कारण यह व्यापार संतुलन ब्रिटेन के पक्ष में नहीं था। चूंकि चीनी लोग ब्रिटेन को निर्यात (विशेषरूप से चाय और रेशम) के भुगतान के रूप में केवल सोने जैसी मूल्यवान धातुओं को स्वीकार करते थे अत: अंग्रेजों को व्यापारिक घाटे का सामना करना पड़ रहा था। इस समस्या के समाधान के रूप में अंग्रेजों ने

VISION IAS

www.examdivision.com ExamDivision.com

भुगतान के रूप में अफीम का विनिमय प्रारम्भ कर दिया। चीन ने इसका विरोध किया और परिणामस्वरूप 1840-42 और 1858 में अफीम युद्ध हुए। अफीम युद्धों के पश्चात्, अंग्रेजों ने हांगकांग पर अधिकार कर लिया और चीन से बलपूर्वक व्यापारिक सुविधाएँ प्राप्त कर लीं। उन्होंने व्यापारिक केन्द्रों पर अंग्रेजी सम्प्रभुता की स्थापना भी कर ली। पश्चिमी देशों के साथ व्यापार के विरोध की नीति को समाप्त करने के लिए चीन को विवश किया गया। ब्रिटिश व्यापार एवं ब्रिटिश लोगों के चीन में बसने हेतु चीन के प्रमुख बन्दरगाहों को खोल दिया गया। चीन पर मुक्त व्यापार थोप दिया गया। इसका अर्थ था कि अंग्रेज अब किसी भी चीनी व्यापारी के साथ व्यापार कर सकते थे और साथ ही आयात शुल्क भी कम कर दिए गए। इसके अतिरिक्त एक अंग्रेज राजनयिक स्थायी रूप से चीन में नियुक्त कर दिया गया। चीन में रहने वाले ब्रिटिश नागरिकों पर केवल ब्रिटिश कानून के अंतर्गत ही अभियोग चलाया जा सकता था।

- दो अफीम युद्धों के मध्य, अन्य यूरोपीय राष्ट्र और संयुक्त राज्य अमेरिका ने भी चीन के साथ व्यापारिक अनुबंधों पर हस्ताक्षर किए, परन्तु वे अधिक अनुकूल संधियाँ चाहते थे जिसके परिणामस्वरूप द्वितीय अफीम युद्ध हुआ।
- द्वितीय अफीम युद्ध के पश्चात्, व्यापारिक संधियों में संशोधन किये गए और पहले से अधिक चीनी बन्दरगाहों को व्यापार के लिए खोल दिया गया। यूरोपीय पोतों को चीनी नदियों में आवागमन का अधिकार प्राप्त हो गया और यूरोपीय लोग स्वतंत्र रूप से चीन में यात्रा कर सकते थे। चीन को ईसाई धर्म प्रचारकों की सुरक्षा का वचन देना पड़ा और उन्हें चीन में कहीं भी चर्च स्थापित करने का अधिकार प्राप्त हो गया। यह विडम्बना ही थी कि चीन में धार्मिकता के आयात के साथ अफीम के व्यापार को भी वैध बना दिया गया। द्वितीय अफीम युद्ध के पश्चात्, कई अन्य यूरोपीय राष्ट्र, कुछ दक्षिणी अमेरिकी राष्ट्र और जापान ने चीन के साथ व्यापारिक संबंध स्थापित किये। इस प्रकार चीन को विभिन्न साम्राज्यवादी शक्तियों के लिए खोल दिया गया, जिन्होंने धीरे-धीरे सम्पूर्ण चीन में अपने प्रभाव क्षेत्र स्थापित कर लिए।

22.2.1. 1858 में अमूर नदी के उत्तर का क्षेत्र रूस को सौंपना पड़ा

- 1858 में चीन निर्बल था। यह द्वितीय अफीम युद्ध में हार रहा था और साथ ही ताईपिंग विद्रोह का भी सामना कर रहा था। 1858 में रूस ने आक्रमण की धमकी दी और परिणामस्वरूप चीन को अमूर नदी के उत्तर का बहुत बड़ा क्षेत्र रूस को सौंपने के लिए विवश होना पड़ा।

22.2.2. मांचू राजवंश और वॉरलॉर्ड युग

- मांचू राजवंश ने चीन पर 1640 से 1911 तक शासन किया। 1840 के दशक में प्रथम अफीम युद्ध तक मांचू शासकों ने पृथकतावाद या अलगाव की नीति का अनुसरण किया। यह अपनी अलगाववादी नीति को बनाए रखने में सक्षम था, क्योंकि चीन सभी वस्तुओं के लिए आत्मनिर्भर था और वास्तव में उसका शेष विश्व के साथ व्यापार संतुलन (BoT) बहुत ही सकारात्मक था। इसकी चाय अंग्रेजों द्वारा अपने साम्राज्य और शेष विश्व में पहुंचा दी गई। वास्तव में, बोस्टन टी पार्टी की चाय भी चीनी चाय थी। चीन में कोई बड़ा उथलपुथल नहीं हुआ था और 1840 के दशक तक यह सामान्यतः शांत ही रहा। 1840 में यूरोपीय राष्ट्रों ने व्यापारिक सम्भावनाओं का लाभ उठाने के लिए चीन में बलपूर्वक अपना मार्ग प्रशस्त किया। उनका उद्देश्य चीन को कच्चे माल का निर्यातक और तैयार माल का आयातक बनाना था। चीन में हस्तक्षेप करने वाला पहला देश ब्रिटेन था। इसने अफीम युद्ध लड़ा और इसमें विजय प्राप्त की इसके परिणामस्वरूप चीन को अपनी अलगाववादी नीति को समाप्त करने के लिए विवश होना पड़ा। अन्य यूरोपीय राष्ट्रों ने भी ब्रिटेन का अनुसरण किया और चीन को अपने प्रभाव क्षेत्रों में विभाजित कर दिया। प्रभाव क्षेत्र वे क्षेत्र थे जहाँ विशिष्ट यूरोपीय राष्ट्रों को विशेष बन्दरगाहों पर विशेष अधिकार और सुविधाएँ प्राप्त थी। इसके पश्चात् 19वीं और 20वीं शताब्दी के आरम्भ में संयुक्त राज्य अमेरिका ने खुले द्वार की नीति (Open Door Policy) थोप दी, जहाँ किसी अन्य राष्ट्र के मामलों में हस्तक्षेप किए बिना, सभी राष्ट्र चीन से व्यापार करने के लिए स्वतंत्र थे।

VISION IAS

www.examdivision.com ExamDivision.com

- 1850-64 की अवधि में दक्षिणी चीन में **ताईपिंग** विद्रोह हुआ। यह आंशिक रूप से धार्मिक और आंशिक रूप से राजनीतिक आन्दोलन था, जिसका उद्देश्य मांचू राजवंश के विरुद्ध सशस्त्र विद्रोह के माध्यम से **पूर्ण शांति का दिव्य साम्राज्य** (Heavenly Kingdom of Great Peace) स्थापित करना था। ईसाई ताईपिंग विद्रोहियों ने सम्पत्ति में सहभागिता (परिवार के सदस्यों की संख्या के अनुसार भूमि का वितरण), महिलाओं को समानता और कन्फ्यूशियसवाद, बौद्ध धर्म तथा चीनी लोक धर्म को ईसाई धर्म से प्रतिस्थापित करने की मांग की। ताईपिंग विद्रोह को कुचल दिया गया, परन्तु केन्द्रीय सरकार द्वारा नहीं, अपितु प्रांतीय सेनाओं द्वारा। माँचू शासकों के नियंत्रण और उनकी प्रतिष्ठा में गिरावट ने प्रान्तों को केन्द्रीय सरकार से स्वतंत्र होने के लिए प्रोत्साहित किया। यह प्रक्रिया वॉरलॉर्ड युग में (1916-28) आरम्भ हुई, जहाँ वास्तविक शक्ति क्षेत्रीय सेनाओं के पास थी जिनका नेतृत्व विभिन्न वॉरलॉर्डस करते थे।

22.2.3. पांच प्रमुख घटनाएँ

वॉरलॉर्ड युग के प्रारम्भ होने से पूर्व पांच प्रमुख घटनाएँ घटित हुईं:

- **चीन-जापान युद्ध (1894-95):** यह युद्ध मुख्यतः कोरिया के लिए लड़ा गया था, जो अब तक चीन के नियंत्रण में था। हार के पश्चात् चीन ने कोरिया को एक स्वतंत्र राज्य के रूप में मान्यता प्रदान कर दी (*जापान ने 1910 में कोरिया पर अधिकार किया)। इसके अतिरिक्त चीन को दक्षिणी चीन के कुछ क्षेत्र जापान को देने हेतु विवश किया गया। फॉर्मोसा (ताईवान) पर जापान ने अधिकार कर लिया। इस युद्ध के पश्चात् दक्षिण चीन सागर में स्थित सेनकाकू द्वीप पर जापान ने कब्ज़ा कर लिया। यह द्वीप आज भी चीन और जापान के मध्य विवाद का मुद्दा बना हुआ है। इसके अतिरिक्त मंचूरिया भी जापान के आर्थिक प्रभाव में आ गया, जहाँ उसने 1890 में अत्यधिक पूँजी निवेश किया। अपने समृद्ध कोयला भंडारों और खनिज संसाधनों के कारण मंचूरिया बहुत ही महत्त्वपूर्ण था। यह प्रशांत महासागर तक पहुंच भी प्रदान करता था।
- **बॉक्सर विद्रोह (1899-1900):** 1900 तक चीन को विभिन्न प्रभाव क्षेत्रों में विभाजित कर दिया गया था (इस प्रकार से चीन को एक अंतर्राष्ट्रीय उपनिवेश के रूप में बदल दिया गया)। शीघ्र ही चीन ने यह अनुभव किया कि इन प्रभाव क्षेत्रों के कारण चीन का विभाजन हो जाएगा, और प्रत्येक साम्राज्यवादी शक्ति अपने प्रभाव क्षेत्र पर शासन करेगी। बॉक्सर विद्रोह राजनीतिक, आर्थिक और धार्मिक मामलों में हस्तक्षेप के विरुद्ध विद्रोह था जिसे ब्रिटिश-रूसी-फ्रांसीसी-जापानी-अमेरिकी सेनाओं द्वारा कुचल दिया गया। चीन की महारानी को चीन में विदेशी सम्पत्तियों को हुई क्षति हेतु भारी मुआवजा देने के लिए विवश किया गया। इसके पश्चात् बॉक्सर प्रोटोकॉल पर हस्ताक्षर किये गए और विदेशी शक्तियों को चीन में अपने नागरिकों की सुरक्षा के लिए अपने सैनिकों को तैनात करने की अनुमति प्राप्त हो गई। इस संधि के पश्चात् रूस ने मंचूरिया के सभी भागों पर अधिकार कर लिया।
- **रूस-जापान युद्ध (1904-05):** यह युद्ध मंचूरिया पर अधिकार के लिए लड़ा गया था। जापान इस युद्ध में विजयी हुआ और चीन में स्थित रूसी सम्पत्तियों का अधिग्रहण कर लिया। इस प्रकार और अधिक चीनी क्षेत्र जापान के नियंत्रण में आ गया। इस युद्ध के परिणामस्वरूप:
  - जापान को दक्षिण मंचूरिया में विशेषाधिकार की स्थिति प्राप्त हो गई (अर्थात दक्षिण मंचूरिया को जापान ने अपने प्रभाव क्षेत्र में परिवर्तित कर दिया) और उसे ऑर्थर बन्दरगाह भी प्राप्त हो गया।
  - 1905 में जापान ने स्वतंत्र कोरिया को अपने संरक्षित क्षेत्र में परिवर्तित कर दिया और लिओतुंग प्रायद्वीप पर नियंत्रण स्थापित कर लिया।
  - रूस ने सखालिन द्वीपों का आधा क्षेत्र जापान को सौंप दिया।

  इस विजय ने जापान को एक प्रमुख विश्व शक्ति के रूप में स्थापित कर दिया। अमेरिका, चीन में रूसी वर्चस्व का विरोधी था। रूस-जापान युद्ध में अमेरिकी राष्ट्रपति रूजवेल्ट ने मध्यस्थता की और जापान के अर्जित क्षेत्रों को स्वीकृति प्रदान करने के लिए रूस को राजी कर लिया। अमेरिका ने जापान के साथ गुप्त अनुबंध किया ताकि उन क्षेत्रों में अमेरिका को स्वतंत्र रूप से व्यापार करने की अनुमति प्राप्त हो सके। इस प्रकार अमेरिका ने जापान के तुष्टीकरण की नीति आरम्भ की, जिससे जापान के साम्राज्यवाद को बढ़ावा मिला और इसे एक प्रमुख शक्ति और प्रशांत क्षेत्र में अमेरिका का प्रतिद्वंदी बनने में सहायता

VISION IAS

मिली। एक ओर तो एक एशियाई देश के हाथों रूस की पराजय ने एशियाई लोगों को उनके स्वतन्त्रता संघर्षों में मानसिक रूप से प्रोत्साहित किया तो दूसरी ओर रूस में ज़ार के शासन को निर्बल कर दिया। यह पराजय ज़ार के पतन का एक महत्त्वपूर्ण कारण बनी और 1905 में रूसी क्रांति के परिणामस्वरूप जार का शासन समाप्त हो गया। 1905 की रूसी क्रांति के फलस्वरूप रूस में सीमित संविधानिक राजतन्त्र अस्तित्व में आया और अंततः 1917 में कम्युनिस्ट शासन की स्थापना हुई।

- 1900 के प्रारम्भ में पश्चिम में शिक्षित चीनी युवक उग्र क्रन्तिकारी विचारों के साथ चीन आए। वे मांचू राजवंश को उखाड़ फेंकना चाहते थे और उनमें से ***सन यात सेन*** जैसे कुछ लोग संयुक्त राज्य अमेरिका जैसा लोकतंत्र स्थापित करना चाहते थे। **सन यात सेन** ने **कुओमिन्तांग** या **KMT** या **नेशनलिस्ट पार्टी** का गठन किया।
- **1911 में गणतन्त्र**: 1911 की क्रांति में अधिकांश प्रान्तों ने स्वयं को स्वतंत्र घोषित कर दिया और इसी के साथ मांचू राजवंश का शासन समाप्त हो गया। नई सरकार ने युवा बुद्धिजीवियों द्वारा मांगे गए लोकतान्त्रिक सुधारों को लाने का प्रयास किया। परन्तु प्रांतीय सेनाओं ने इन सुधारों का विरोध किया और 1911 के सैन्य तख्तापलट में नई सरकार को सत्ता से बाहर कर दिया। युआन शी काई नामक सैन्य जनरल ने स्वयं को राष्ट्रपति घोषित करते हुए चीन को गणतन्त्र घोषित कर दिया। परन्तु जब प्रांतीय सेनाओं की इच्छा के विरुद्ध, युवान ने स्वयं को 1915 में सम्राट घोषित किया तो उसे सत्ताच्युत कर दिया गया और इसके परिणामस्वरूप वारलॉर्ड युग (1916-28) का प्रारम्भ हो गया।

22.2.4. प्रथम विश्व युद्ध (1914-19)

- प्रथम विश्व युद्ध (1914- 19) के दौरान, जापान ने कियाचो द्वीपों और शान्तुंग प्रांत के रूप में और अधिक चीनी प्रदेशों पर कब्जा कर लिया। हालांकि, 1921 में वाशिंगटन सम्मेलन के दौरान प्रशांत महासागर में अमेरिकी, ब्रिटिश और फ्रांसीसी नौसेनाओं की उपस्थिति को सीमित करने के बदले जापान इन प्रदेशों को मुक्त करने पर सहमत हो गया।

22.2.5. वॉरलॉर्ड्स युग (1916-28)

- इस समय चीन कई राज्यों में विभाजित था, प्रत्येक राज्य एक वॉरलॉर्ड के नियंत्रण में था जो अपनी निजी सेना के सहयोग से आपस में लड़ते रहते थे। वॉरलॉर्ड युग में चीन में अराजकता पैदा हुई जिससे किसानों को सबसे अधिक कठिनाइयों का सामना करना पड़ा।

22.2.6. 4 मई का आंदोलन (1919)

- **4 मई का आंदोलन (1919)** सामंतों और प्रतिगामी चीनी संस्कृति के विरूद्ध चीनी युवाओं द्वारा आरंभ किया गया एक आंदोलन था। इस आन्दोलन में छात्रों ने बड़े पैमाने पर विरोध प्रदर्शन किया। 1921 में चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की स्थापना की गई और यह किसानों के हितों के प्रति सहानुभूति रखती थी, जो वॉरलॉर्ड युग के दौरान समाज का सबसे शोषित वर्ग था। इसके साथ ही, च्यांग काई शेक के नेतृत्व में कोमिन्तांग स्वयं को सैन्य दृष्टि से मजबूत बना रहा था और इसने 1927-28 के अंत तक वॉरलॉर्ड का शासन समाप्त करने और देश में एकता कायम करने में सफलता प्राप्त कर ली। कोमिन्तांग चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की साम्यवादी विचारधारा के विरूद्ध था। चीनी कम्युनिस्ट पार्टी ने भूमि के पुनर्वितरण जैसे उपायों के माध्यम से कृषक कल्याण पर ध्यान केंद्रित किया, जबकि कोमिन्तांग जमींदार समर्थक था और यह भूमि के पुनर्वितरण जैसे उपायों का विरोधी था। सैन्य रूप से मजबूत होने के कारण 1927 तक कोमिन्तांग कम्युनिस्टों पर हावी रहा।

VISION IAS

22.2.7. कोमिन्तांग और सन यात सेन

- कोमिन्तांग दल का गठन 1912 में डॉ. सन यात सेन ने किया था। वह 1911 की क्रांति के बाद चीन वापस लौट आए थे। कोमिन्तांग का लक्ष्य संयुक्त, लोकतांत्रिक और आधुनिक चीन की स्थापना करना था। हालांकि कोमिन्तांग की विचारधारा साम्यवादी नहीं थी, लेकिन प्रारंभिक चरण में यह साम्यवादियों के साथ सहयोग करने के लिए तैयार था। डॉ. सन यात सेन ने वॉरलॉर्ड युग के दौरान चीनी विघटन का विरोध किया था। उनकी नीति का विश्लेषण **राष्ट्रवाद, लोकतंत्र और भूमि सुधार** के तीन सिद्धांतों में किया जा सकता है। राष्ट्रवाद द्वारा, वह चीनी मामलों में विदेशी हस्तक्षेप का अंत और एक महान राष्ट्र का निर्माण करना चाहते थे, जबकि लोकतंत्र द्वारा वह वॉरलॉर्डस का शासन समाप्त करना चाहते थे। भूमि सुधार के सिद्धांतों के अंतर्गत, वह जमींदारों से भूमि की तत्काल जब्ती के पक्ष में नहीं थे, बल्कि उन्होंने किसानों से वादा किया कि वे किसानों के पक्ष में भविष्य में भूमि के पुनर्वितरण का प्रयास करेंगे साथ ही उनके आर्थिक विकास और लगान कम करने के लिए भी प्रयास करेंगे।
- डॉ. सन यात सेन अपने लक्ष्य में केवल आंशिक रूप से सफल रहे। 1912 में, वह दक्षिणी वॉरलॉर्डस की सहायता से दक्षिण चीन के कैंटन में सैन्य सरकार बनाने में सफल रहे। इस प्रकार, लोकतंत्र का उद्देश्य नहीं प्राप्त हो सका। पुनः कोमिन्तांग के पास शक्तिशाली सेना के अभाव के कारण दक्षिणी चीन के बाहर डॉ. सन यात सेन का प्रभाव आंशिक ही था। दक्षिणी सामंतों के साथ उनका गठजोड़ 1921 में समाप्त हो गया और उसके बाद उन्हें कैंटन से पलायन करना पड़ा और चीन के एकीकरण के लिए सोवियत रूस की सहायता मांगनी पड़ी, जिसने कोमिन्तांग की सेना का आधुनिकीकरण करने और प्रशिक्षित करने में सहायता प्रदान की। वह राष्ट्रवाद की भावना पैदा करने में सफल रहे और बौद्धिक राजनीतिज्ञ के रूप में प्रसिद्ध हुए लेकिन विदेशी हस्तक्षेप समाप्त नहीं कर पाए तथा चीन को महान राष्ट्र नहीं बना पाए। 1925 में 59 वर्ष की आयु में उनकी मृत्यु हो गई, जिसके बाद च्यांग काई शेक कोमिन्तांग का नेता बना।

22.2.8. च्यांग काई शेक

- 1925 के बाद, सैन्य रूप से प्रशिक्षित च्यांग काई शेक ने सोवियत सहायता से कोमिन्तांग की सेना का आधुनिकीकरण किया। हालांकि उसने सोवियत रूस की कम्युनिस्ट पार्टी और लाल सेना की कार्यप्रणाली का अध्ययन किया था परन्तु उसकी विचारधारा दक्षिणपंथी थी और वह पूंजीवादी वर्ग का समर्थक था। उसने 1925 में कोमिन्तांग से सभी कम्युनिस्ट सदस्यों को निकाल दिया और इससे सिद्ध होता है कि वह अपने पूर्ववर्ती सन यात सेन की तुलना में कम सहिष्णु था।

22.2.9. चीनी कम्युनिस्ट पार्टी (1921 के बाद)

- कोमिन्तांग का लक्ष्य चीन में लोकतंत्र की स्थापना करना था। सोवियत रूस ने 1921 के बाद से कोमिन्तांग के नेतृत्व में एक मित्रवत और संयुक्त चीन की उम्मीद के साथ नकदी, सैन्य प्रशिक्षण और हथियारों के रूप में कोमिन्तांग की सहायता करना आरंभ कर दिया। वहीं दूसरी ओर, 1921 में वामपंथी बुद्धिजीवियों ने चीनी कम्युनिस्ट पार्टी का गठन किया। कोमिन्तांग और चीनी कम्युनिस्ट पार्टी दोनों को वॉरलॉर्डस युग के दौरान कृषकों और मजदूरों का समर्थन मिला।
- उत्तरी अभियान (Northern March: 1926) वॉरलॉर्डस के विरूद्ध कोमिन्तांग और चीनी कम्युनिस्ट पार्टी का सैन्य अभियान था। 1927 में, वॉरलॉर्डस के विरूद्ध अपनी विजय के बाद, कोमिन्तांग ने शुद्धीकरण आंदोलन आरंभ किया। यह चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के विरूद्ध कोमिन्तांग का अभियान था। इस दौरान मजदूर और किसान नेताओं के साथ-साथ चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के सदस्यों का भी संहार किया गया। वस्तुत: इस दौरान चीनी कम्युनिस्ट पार्टी को काफी हद तक समाप्त कर दिया गया।

VISION IAS

- लेकिन सत्ता में आने वाली अनुवर्ती कोमिन्तांग सरकार जनता की आकांक्षाएं पूरा करने में विफल रही। यह सरकार अक्षम और भ्रष्ट थी। जमींदारों, उद्योगपतियों और सरकारी अधिकारियों के मध्य गठजोड़ विकसित हुआ, जिसका परिणाम गरीबों के शोषण के रूप में सामने आया। श्रमिक कार्य की खराब स्थितियों से पीड़ित थे, जबकि कृषक भूमि सुधारों के अभाव, ऊंचे करों और बेगार से त्रस्त थे।
- 1930 से लेकर 1934 तक, चीनी कम्युनिस्ट पार्टी को नष्ट करने के लिए कोमिन्तांग ने **घेराबंदी अभियान (Encirclement Campaigns)** चलाया। इसकी रणनीति चीनी कम्युनिस्ट पार्टी को उसके आधार पर घेरने और युद्ध में उन्हें नष्ट करने की थी। 1934 में कम्युनिस्ट पलायन इस संदर्भ में प्रसिद्ध है, जिसमें चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के 1 लाख कार्यकर्ता दक्षिण-पश्चिम चीन में कोमिन्तांग की घेराबंदी के बावजूद चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के मुख्यालय से निकलने में सफल रहे और वे दक्षिण-पश्चिम चीन से उत्तर में पहाड़ों तक 6000 मील लॉन्ग मार्च पर निकल पड़े। चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के कार्यकर्ताओं ने एक वर्ष में 6000 मील की दूरी तय की (लगभग 9600 कि.मी.) तथा अपने मार्ग में उन्होंने पहाड़ों और नदियों को पार किया एवं कोमिन्तांग के सहयोगी वॉरलॉर्डस से युद्ध करते हुए कई प्रदेशों पर अधिकार कर लिया। 1 लाख में से केवल 20 हजार सदस्य जीवित बचे और उन्होंने सेंसी प्रांत में अपना नया आधार स्थापित किया।

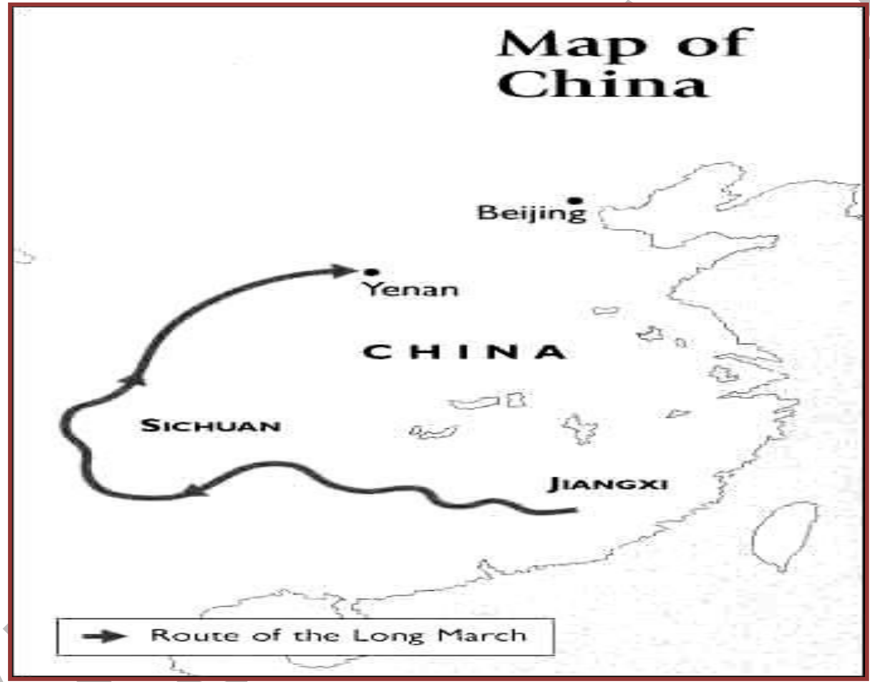

- किसानों की सहायता से चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के शेष बचे नेतृत्व ने, विशेषकर माओ त्से तुंग ने पार्टी को पुनःस्थापित किया। इसके पश्चात् चीनी कम्युनिस्ट पार्टी ने धीरे-धीरे और अधिक क्षेत्रों को अपने नियंत्रण में लाना आरंभ किया। उन्होंने उचित प्रशासन प्रदान किया और अपने नियंत्रणाधीन क्षेत्रों में कृषकों के हित में भूमि सुधारों को प्रारंभ किया, जिससे उन्हें आम जनता का और अधिक समर्थन प्राप्त हुआ।
- 1931 में जापान ने मंचूरिया पर आक्रमण कर दिया और वहां कठपुतली सरकार (मंचुकुओ) की स्थापना की। 1931 से, चीन के विरूद्ध जापानी आक्रामकता की छोटी-छोटी स्थानीय "घटनाएं" होती रहीं। लेकिन कोमिन्तांग ने जापानियों के विरूद्ध पूरी ऊर्जा लगाने की बजाय चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के कार्यकर्ताओं पर हमला करना जारी रखा। अपने ही सैनिकों के दबाव के चलते, कोमिन्तांग को 1936 में चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के साथ युद्धविराम करना पड़ा और इसके बाद दोनों ने जापानी आक्रमण के विरूद्ध एक साथ मिलकर लड़ाई लड़ी, जिसने 1937 में चीन पर जापानी आक्रमण के दौरान पूर्णव्यापी युद्ध का रूप धारण कर लिया। इसे **द्वितीय चीन-जापान युद्ध** (1937-45) कहा जाता है जोकि द्वितीय विश्व युद्ध का ही एक भाग था।
- कोमिन्तांग बलों को शीघ्रतापूर्वक जापानी सेना ने हरा दिया जबकि चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के कार्यकर्ताओं को अपनी गुरिल्ला युद्ध रणनीति के कारण अधिक सफलता मिली। इससे कम्युनिस्टों का

समर्थन आधार बढ़ गया और इन्हें अब देशभक्तों के रूप में देखा जाने लगा। इसके साथ ही, माओ (जो 1931 से ही चीनी कम्युनिस्ट पार्टी का अध्यक्ष था) ने सुधार प्रक्रिया शुरू करने में विलंब नहीं किया और युद्ध के बीच में ही जितनी जल्दी संभव हुआ इसे आरंभ कर दिया। उदाहरण के लिए, 1942 में इसने एक **परिशोधन कार्यक्रम** (Rectification programme) आरंभ किया जिसके अंतर्गत किसानों के जीवन की कठिनाइयों को समझने और समानुभूति प्रकट करने के लिए बुद्धिजीवियों, छात्रों और शहरी युवाओं को कृषकों के साथ खेतों पर काम करने के लिए दूर-दराज के गांवों में भेजा गया। इस प्रकार, चीन-जापान युद्ध के दौरान चीनी कम्युनिस्ट पार्टी अपनी गुरिल्ला युद्ध नीति के माध्यम से एवं अधिक से अधिक चीनी किसानों और श्रमिकों को भर्ती करके चीन पर अपना सैन्य नियंत्रण बढ़ाने में सफल रही।

- 1945 के बाद, चीनी कम्युनिस्ट पार्टी और कोमिन्तांग के बीच पुन: गृहयुद्ध आरंभ हो गया। जापान को हराने के बाद अमेरिका और सोवियत संघ ने चीन में जापान के नियंत्रण वाले क्षेत्रों पर कब्ज़ा कर लिया था। चूंकि अमेरिका साम्यवाद के विरूद्ध था, अत: उसने अपने कब्जे वाला क्षेत्र कोमिन्तांग को सौंप दिया जबकि रूस ने मंचुरिया को चीनी कम्युनिस्ट पार्टी को सौंप दिया। इस प्रकार, अब चीनी गृहयुद्ध शीत युद्ध का भाग बन गया, जिसमें अमेरिका कोमिन्तांग का समर्थन कर रहा था और सोवियत संघ चीनी कम्युनिस्ट पार्टी का समर्थन कर रहा था।
- 1949 तक, चीनी कम्युनिस्ट पार्टी का नियंत्रण लगभग सम्पूर्ण चीन पर हो चूका था क्योंकि उसकी लाल सेना अपेक्षाकृत बड़ी और सोवियत हथियारों से भलीभांति सुसज्जित थी। इसने च्यांग काई शेक को ताइवान भागने के लिए विवश किया जहां च्यांग काई शेक ने निर्वासित चीनी सरकार की स्थापना की। संयुक्त राज्य अमेरिका ने इस सरकार को चीन की वैध सरकार के रूप में मान्यता दी, जबकि विश्व के मानचित्र पर चीन के मुख्य भूमि वाले क्षेत्र में एक नए साम्यवादी देश का उदय हुआ।

23. साम्राज्यवादी जापान

- 1868 से पहले जापान में निम्नलिखित स्थितियां विद्यमान थीं:
    - **राजनीतिक व्यवस्था:** सम्राट केवल प्रतीक मात्र था। वास्तविक शक्ति सैन्य जनरलों के पास थी जिन्हें *शोगुन* (*shoguns*) कहा जाता था।
    - **सामाजिक व्यवस्था**: जापान की सामाजिक व्यवस्था सामंती यूरोप के सामान थी।
    - **अंतर्राष्ट्रीय संपर्क:** 200 से भी अधिक वर्षों से जापान का शेष विश्व से कोई संपर्क नहीं था।
- लगभग 1850 के दशक में जापान की स्वतंत्रता खतरे में पड़ गई। अमेरिका ने 1853 में एक नौसैनिक बेड़ा जापान भेजा और जापान को अमेरिकी जहाजों के लिए दो बंदरगाह खोलने पर विवश किया तथा व्यापार की अनुमति प्राप्त की। अगले कुछ वर्षों में यूरोपीय शक्तियों के साथ भी इसी तरह की संधियों पर हस्ताक्षर किए गए।
- **मेइजी पुनर्स्थापना (1868)**: 1868 में शोगुनों का शासन समाप्त हो गया और सलाहकारों के एक नए समूह ने सम्राट के नाम पर शासन करना आरंभ किया। इस प्रकार सम्राट की सर्वोच्चता कम से कम कागजों पर पुनर्स्थापित हो गई। सम्राट ने मेइजी की उपाधि ग्रहण की और इन परिवर्तनों को सामूहिक रूप से **मेइजी पुनर्स्थापना** कहा गया। 1868 से 1908 तक जापान एक औद्योगिक राष्ट्र के रूप में उभरा। प्रारंभ में सरकार ने उत्तरदायित्व लेते हुए भारी उद्योगों में अत्यधिक निवेश किया। बाद में इन उद्योगों को पूंजीपतियों को बेच दिया गया, जो शीघ्र ही आत्मनिर्भर बनकर उभरे। इसके साथ ही प्रभावी शिक्षा कार्यक्रम ने जापानियों को बहुत तेजी से साक्षर बनाना सुनिश्चित किया जिससे द्रुत औद्योगिकीकरण के लिए आवश्यक कुशल कार्यबल की उपलब्धता भी सुनिश्चित हुई। शिक्षा कार्यक्रम में उग्र राष्ट्रवाद और सम्राट की पूजा पर जोर दिया गया। इसने लोगों को राष्ट्रीय आर्थिक विकास के लिए कड़ी मेहनत करने के लिए प्रोत्साहित किया और बाद में होने वाले साम्राज्यवाद के औचित्य को सही ठहराने में भी सहायता प्रदान की। 1889 में एक नया संविधान बनाया गया जिसके अनुसार मंत्री सम्राट के प्रति उत्तरदायी थे न कि डायट (संसद) के प्रति। सम्राट को देव तुल्य समझा जाता था। सेना और नौसेना के अधिकारियों की नियुक्ति में मंत्रियों और डायट की कोई भागीदारी नहीं थी। डायट के पास सीमित वित्तीय शक्तियाँ थीं। मताधिकार केवल 3% आबादी को दिया गया था। इस प्रकार जापान के राजनीतिक मामलों पर धीरे-धीरे जापानी सेना का वर्चस्व स्थापित हो गया।

VISION IAS

- जापान एक छोटा सा द्वीपीय देश था, जहां अधिकांश लोग बहुत मामूली मजदूरी पर निर्वाह करते थे। इस प्रकार जापान में घरेलू बाजार का अभाव था। जापान को अपने नए विकसित हो रहे उद्योगों का पोषण करने के लिए निर्यात बाजारों और कच्चे माल की आवश्यकता थी, जिसकी तलाश में उसे उपनिवेशवाद का आश्रय लेना पड़ा। कोयला और खनिज के समृद्ध भंडारों के कारण मंचूरिया बहुत महत्वपूर्ण था। साथ ही यह प्रशांत महासागर तक पहुंच भी प्रदान करता था। 1858 के बाद से मंचूरिया पर रूस के नियंत्रण से जापान असंतुष्ट था।
- **चीन-जापान युद्ध (1894-95):** यह युद्ध मुख्यतः कोरिया के लिए लड़ा गया था, जो अब तक चीन के नियंत्रण में था। हार के पश्चात् चीन ने कोरिया को एक स्वतंत्र राज्य के रूप में मान्यता प्रदान कर दी (*जापान ने 1910 में कोरिया पर अधिकार किया)। इसके अतिरिक्त चीन को दक्षिणी चीन के कुछ क्षेत्र जापान को देने हेतु विवश किया गया। फॉर्मोसा (ताईवान) पर जापान ने अधिकार कर लिया। इस युद्ध के पश्चात् दक्षिण चीन सागर में स्थित सेनकाकू द्वीप पर जापान ने कब्ज़ा कर लिया। यह द्वीप आज भी चीन और जापान के मध्य विवाद का मुद्दा बना हुआ है। इसके अतिरिक्त मंचूरिया भी जापान के आर्थिक प्रभाव में आ गया।
- **रूस-जापान युद्ध (1904-05):** यह युद्ध मंचूरिया पर अधिकार के लिए लड़ा गया था। जापान इस युद्ध में विजयी हुआ और चीन में स्थित रूसी सम्पत्तियों का अधिग्रहण कर लिया। इस प्रकार और अधिक चीनी क्षेत्र जापान के नियंत्रण में आ गया। इस युद्ध के परिणामस्वरूप:
  - जापान को दक्षिण मंचूरिया में विशेषाधिकार की स्थिति प्राप्त हो गई (अर्थात दक्षिण मंचूरिया को जापान ने अपने प्रभाव क्षेत्र में परिवर्तित कर दिया) और उसे आॅर्थर बन्दरगाह भी प्राप्त हो गया।
  - 1905 में जापान ने स्वतंत्र कोरिया को अपने संरक्षित क्षेत्र में परिवर्तित कर दिया और लिओतुंग प्रायद्वीप पर नियंत्रण स्थापित कर लिया।
  - रूस ने सखालिन द्वीपों का आधा क्षेत्र जापान को सौंप दिया।
- जापान ने 1910 में कोरिया पर अधिकार स्थापित कर लिया। प्रथम विश्वयुद्ध के दौरान, जापान चीन को अपने संरक्षित राज्य में परिवर्तित करना चाहता था लेकिन ऐसा करने में वह विफल रहा।
- जापान ने 1931 में मंचूरिया पर आक्रमण कर दिया और मांचकुओ के कठपुतली राज्य की स्थापना की।
- **चीन-जापान युद्ध (1937-45):** 1937 में जापान ने चीन पर आक्रमण कर दिया। बाद में यह युद्ध द्वितीय विश्व युद्ध का भाग बन गया।

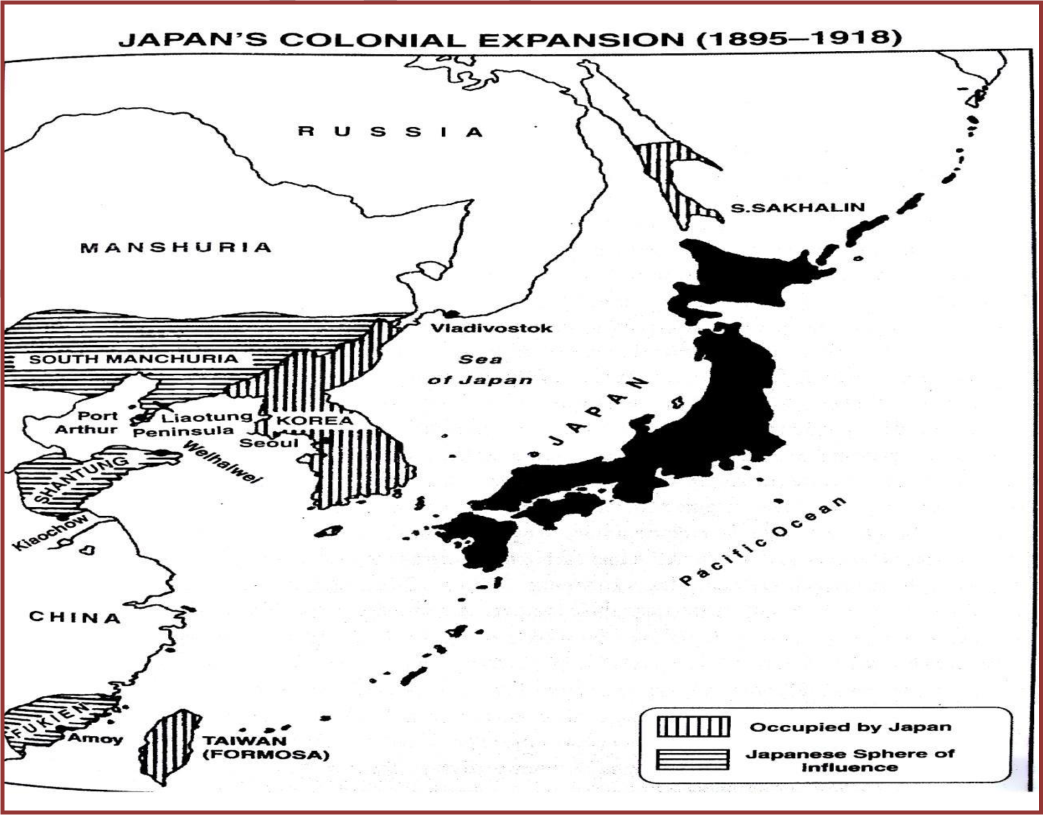

 ©Vision IAS

- 1930 के दशक की शुरुआत में आर्थिक और सामाजिक समस्याओं के कारण जापान में सैन्य तानाशाही की स्थापना हुई। इसने चीन में अपने साम्राज्यवादी अभियानों को बढ़ावा दिया। 1921 के मध्य तक जापान आर्थिक रूप से काफी मजबूत हो चुका था। जापान प्रथम विश्व युद्ध (1914-1919) से लाभान्वित हुआ था क्योंकि युद्ध के बाद यूरोपीय शक्तियाँ आर्थिक रूप से कमजोर हो गई थीं और वर्साय की संधि को लेकर हुए विवादों में व्यस्त थीं। यूरोपीय देशों की आर्थिक कमजोरी ने उनके निर्यातों को कम प्रतिस्पर्धी बना दिया। इसके साथ ही, वे सैन्य रूप से भी कमजोर हो चुके थे और इस कारण जापानी आक्रामकता पर लगाम लगाने की स्थिति में नहीं थे। जापान के साम्राज्यवादी अभियान पर लगाम लगाने के लिए एकमात्र पर्याप्त शक्तिशाली देश अमेरिका था, लेकिन वह स्वयं प्रथम विश्व युद्ध से निराश था और अलगाव की नीति का पालन कर रहा था, जिसके कारण अमेरिका वैश्विक मामलों में अहस्तक्षेप की नीति का पालन कर रहा था और किसी भी कीमत पर किसी भी अन्य देश के साथ सैन्य संघर्ष को टाल रहा था। फलस्वरूप, जापान ने इस स्थिति का पूरा लाभ उठाया। प्रथम विश्व युद्ध के दौरान 1918 तक मित्र देशों को नौवहन और अन्य वस्तुओं का निर्यात करके जापान आर्थिक रूप से लाभान्वित हुआ था। उसने निर्यात बाजारों में, विशेषकर एशिया में, यूरोपीय कंपनियों को प्रतिस्थापित कर दिया और ऐसी वस्तुओं के *सप्लाई ऑर्डर्स* प्राप्त करने लगा, जिनकी आपूर्ति यूरोपीय नहीं कर सकते थे। प्रथम विश्व युद्ध के दौरान, जापान का सूत निर्यात तीन गुना हो गया था और व्यापारी जहाज दोगुने हो गए थे।
- जापान की सामाजिक स्थितियां भी उसकी साम्राज्यवादी प्रवृत्तियों के लिए उत्तरदायी थीं। सेना और रूढ़िवादियों जैसे समाज के प्रभावशाली वर्ग लोकतंत्र के विरूद्ध थे और प्राय: सरकार की आलोचना करते थे। सेना चीन के प्रति सरकार के नरम और सौहार्द्रपूर्ण दृष्टिकोण के विरूद्ध थी, क्योंकि वह औपनिवेशिक साम्राज्य का विस्तार करने के लिए चीन में चल रहे गृहयुद्ध का लाभ उठाना चाहती थी।
- सैन्य तानाशाही की स्थापना में जापान की आर्थिक स्थितियों ने भी भूमिका निभाई। आर्थिक उत्कर्ष 1921 तक समाप्त हो गया था, क्योंकि यूरोपीय देश आर्थिक रूप से पुन: संभल गए थे और अब अपने खोए निर्यात बाजारों पर पुनः कब्जा कर रहे थे। जापान में, बेरोजगारी बढ़ गई और किसान भरपूर फसल के कारण चावल की कीमतों में हुई तीव्र कमी से प्रभावित हुए। मजदूरों और किसानों के प्रदर्शनों को क्रूरतापूर्वक दबा दिया गया था जिसके परिणामस्वरूप वे भी सरकार के विरूद्ध हो गए। वैश्विक आर्थिक संकट ने इन घटनाओं के उत्प्रेरक के रूप में कार्य किया क्योंकि आयातक देश आयात के लिए भुगतान करने की स्थिति में नहीं थे जिससे जापानी निर्यात बुरी तरह से प्रभावित हुआ। मंचूरिया में चीनी कंपनियां जापानी कंपनियों का स्थान लेने का प्रयास कर रहीं थीं और यहाँ पर भी जापानी व्यापार और कारोबार खतरे में था। 1929 के आर्थिक संकट की पृष्ठभूमि में यह असहनीय था। सरकार की जानकारी के बिना सेना ने 1932 में मंचूरिया पर आक्रमण कर दिया और आक्रमण का विरोध करने

VISION IAS

पर 1932 में प्रधान मंत्री की हत्या कर दी गई। 1945 तक जापान की सेना ने देश पर फासीवादी तरीके से शासन किया। सम्राट को उच्च प्रतिष्ठा प्राप्त थी, लेकिन वह भी जापानी साम्राज्यवाद को नियंत्रित करने में विफल रहा क्योंकि उसे भय था कि उसके आदेशों का पालन नहीं किया जाएगा। इस प्रकार 1930 के दशक में होने वाले जापानी साम्राज्यवाद के लिए जापान की सेना उत्तरदायी थी। इसके अतिरिक्त, आर्थिक समस्याएं और जापान का छोटा भौगोलिक क्षेत्र जापानी साम्राज्यवाद की वृद्धि के लिए उत्तरदायी था।

24. साम्राज्यवादी संयुक्त राज्य अमेरिका

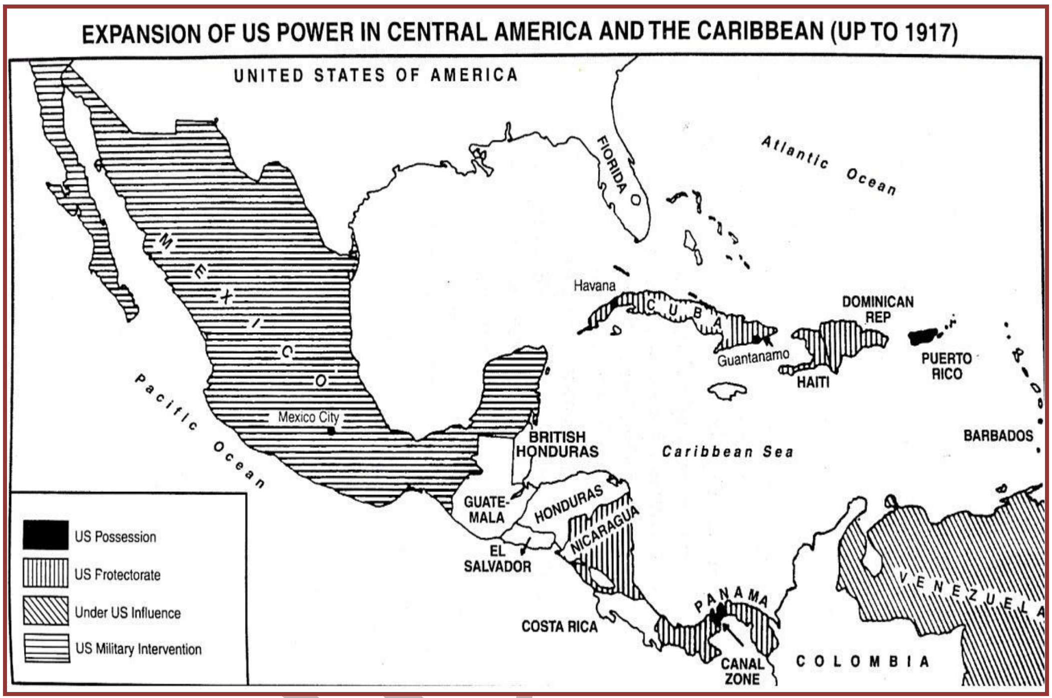

- 1865 से 1895 के दौरान संयुक्त राज्य अमेरिका का एक औद्योगिक शक्ति के रूप में उदय हुआ। इसके विशाल घरेलू बाजार के कारण कुछ समय तक अंतर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था में संयुक्त राज्य अमेरिका का प्रभाव महसूस नहीं किया गया। इस घरेलू बाजार के कारण इसका काफी अधिक उत्पादन आंतरिक रूप से उपभोग कर लिया जाता था। विशाल घरेलू बाजार का कारण 19वीं शताब्दी और 20वीं शताब्दी के प्रथम दशक में यूरोपीय और अन्य समूहों का बड़े पैमाने पर उत्प्रवास था, जिसके कारण संयुक्त राज्य अमेरिका की जनसंख्या में वृद्धि हुई। एक अन्य कारण अलगाव की नीति थी जिसके चलते यह विश्व मामलों में सामान्यतः कम रूचि लेता था।
- लेकिन 1890 के दशक तक अमेरिका एक नई साम्राज्यवादी शक्ति के रूप में उभरा। इसका मुख्य कारण यह था कि औद्योगिक क्रांति ने निर्यात बाजारों और कच्चे माल के लिए मांग प्रेरित की। अमेरिका ने भी श्वेत व्यक्ति के कन्धों पर बोझ (White Man's Burden) की अवधारणा का उपयोग किया और विश्व के विभिन्न देशों में अमेरिकी हस्तक्षेप के कारण के रूप में आधुनिक सभ्यता के प्रसार का तर्क दिया। प्रकृति के नियम के रूप में शक्तिशाली राष्ट्रों द्वारा निर्बलों पर प्रभुत्व का औचित्य सही ठहराया गया। प्रशांत क्षेत्र में अमेरिका का विस्तार काफी पहले ही आरंभ हो चुका था।

(*प्रशांत क्षेत्र में उपनिवेशवाद से संबंधित अध्याय देखें)

- 1890 के दशक में जब यूरोपीय देश चीन का बँटवारा करना चाहते थे तो ऐसी परिस्थिति में संयुक्त राज्य अमेरिका को लगा कि वह इस बंदरबांट में पीछे रह जाएगा। अतः उसने 'खुले द्वार की नीति' की घोषणा की। इसका निहितार्थ यह था कि चीन में सभी साम्राज्यवादी शक्तियों के समान अधिकार होंगे और कोई भी साम्राज्यवादी शक्ति किसी भी क्षेत्र को अपने प्रभाव क्षेत्र के रूप में उद्धृत करते हुए दूसरी

शक्ति के साथ भेदभाव नहीं करेगी। इस प्रकार चीन एक अंतर्राष्ट्रीय उपनिवेश बन गया। बॉक्सर विद्रोह (1899-1900) के दमन के लिए संयुक्त राज्य अमेरिका की सेना भी यूरोपीय शक्तियों के साथ शामिल थी।

- 1893 में संयुक्त राज्य अमेरिका ने संपूर्ण अमेरिकी महाद्वीप पर अपने प्रभुत्व की घोषणा कर दी। उसने स्वयं को पूरे अमेरिका में व्यवहारिक रूप से संप्रभु घोषित कर दिया और कहा कि उसके आदेश को क़ानून माना जाना चाहिए। उसने ब्रिटेन को वेनेज़ुएला और ब्रिटिश गयाना (वर्तमान गुयाना) के बीच के क्षेत्रीय विवाद में मध्यस्थता हेतु सहमत होने के लिए विवश कर दिया।
- अमेरिका चीन में रूसी वर्चस्व के विरुद्ध था। 1904-05 के रूस-जापान युद्ध में अमेरिकी राष्ट्रपति रूजवेल्ट ने मध्यस्थता की और इस युद्ध में जापान ने जिन क्षेत्रों पर कब्ज़ा कर लिया था उन पर उसके वर्चस्व को स्वीकार करने के लिए रूस को राजी किया। रूजवेल्ट ने जापान के साथ एक गुप्त समझौता भी किया जिसके फलस्वरूप अमेरिका को उस क्षेत्र में निर्बाध रूप से व्यापार करने की सुविधा मिल गई। इस प्रकार अमेरिका ने जापान के प्रति तुष्टीकरण की नीति आरंभ की। इसने जापान के साम्राज्यवाद को बढ़ावा दिया और जापान के लिए प्रशांत महासागर की प्रमुख शक्ति और अमेरिका का प्रतिद्वंदी बनना संभव बनाया।
- **मुनरो सिद्धांत का परिणाम:** 1904 में मुनरो सिद्धांत (1823) का विस्तार किया गया। रूजवेल्ट ने अब तर्क दिया कि अमेरिका को न केवल लैटिन अमेरिकी मामलों में यूरोपीय हस्तक्षेप का विरोध करने का अधिकार है बल्कि दक्षिणी अमेरिकी देशों के आंतरिक मामलों में भी हस्तक्षेप करने का अधिकार है। 1906-09 के दौरान अमेरिकी सैनिकों ने क्यूबा में 'कानून और व्यवस्था की पुनर्स्थापना' के लिए हस्तक्षेप किया।
- **कोलंबिया में पनामा नहर:** पनामा नहर 1914 में पूरी हुई। इससे अमेरिका के व्यापार को बड़े पैमाने पर बढ़ावा मिला। इस नहर ने प्रशांत और अटलांटिक महासागरों के बीच संपर्क संभव बनाया। पहले अमेरिका ने नहर का निर्माण कर रही फ्रांसीसी कंपनी के शेयर खरीदे। जब कोलंबियाई सरकार ने अमेरिका के साथ समझौते की शर्तों का विरोध किया, तो अमेरिका ने पनामा में एक क्रांति की साजिश रची और व्यवस्था बनाए रखने के नाम पर (लेकिन वास्तव में कोलंबिया को इस तथाकथित क्रांति को दबाने से रोकने के लिए) पनामा में अमेरिकी सैनिक भेज दिए। परिणामस्वरूप, शीघ्र ही पनामा को एक स्वतंत्र राष्ट्र के रूप में मान्यता प्रदान कर दी गई। पनामा की नई सरकार ने अमेरिका के साथ पनामा नहर के बारे में एक समझौते पर हस्ताक्षर किए। इस समझौते की शर्तें अमेरिका के लिए उन शर्तों से भी अधिक अनुकूल थीं जो पिछले समझौते में कोलंबिया के सामने रखी गईं थीं।
- **दक्षिण अमेरिका में नव-उपनिवेशवाद:** रूजवेल्ट के बाद आने वाले राष्ट्रपतियों, अर्थात्, विलियम हॉवर्ड टैफ्ट और वुड्रो विल्सन ने अमेरिकी कंपनियों द्वारा निवेश को बढ़ावा देने और इन निवेशों की सहायता से लैटिन अमेरिकी अर्थव्यवस्था को अपने नियंत्रण में लाने की नीति का पालन किया। अमेरिका ने लोकप्रिय रूप से निर्वाचित नेता मैड्रो (1910 में निर्वाचित, 1913 में हटाकर हत्या कर दी गई) के विरुद्ध तख्तापलट में सहायता करके मेक्सिको में हस्तक्षेप किया। इस घटना के बाद मेक्सिको निवासी अमेरिका के शत्रु बन गए (मेक्सिको 1821 में स्पेन से स्वतंत्र हुआ था)।

25. 1914 में विश्व

25.1. यूरोप का अभी भी शेष विश्व पर प्रभुत्व

- 1914 ई. में शेष विश्व पर यूरोप का प्रभुत्व कायम था, लेकिन यूरोप से बाहर संयुक्त राज्य अमेरिका और जापान जैसी महत्वपूर्ण शक्तियाँ भी उपस्थित थीं। इसके अतिरिक्त यूरोप के भीतर सभी यूरोपीय देश शक्तिशाली नहीं थे। जर्मनी, फ्रांस और ब्रिटेन ही प्रमुख शक्तियाँ थे। शेष यूरोप अभी भी आर्थिक आधुनिकीकरण की प्रक्रिया में था।

VISION IAS

- 1914 तक, जर्मनी कच्चे लोहे और स्टील के उत्पादन के मामले में ब्रिटेन से आगे था, लेकिन कोयले के उत्पादन में पीछे था। वहीं दूसरी ओर फ्रांस, इटली, बेल्जियम और ऑस्ट्रिया-हंगरी जैसे देश ब्रिटेन और जर्मनी से काफी पीछे थे। रूस औद्योगीकरण आरंभ करने वाला अंतिम देश था। 1914 में रूसी उद्योगों का तेजी से विस्तार हो रहा था लेकिन फिर भी इसकी अर्थव्यवस्था प्रमुख रूप से कृषि अर्थव्यवस्था थी एवं जर्मनी और ब्रिटेन से बहुत पीछे थी। रूस राजनीतिक अशांति का भी सामना कर रहा था। 1905 में एक रूसी क्रांति हो चुकी थी और दूसरी 1917 में हुई थी।
- यूरोप से बाहर, संयुक्त राज्य अमेरिका और जापान ने 1870 के दशक के आसपास औद्योगीकरण आरंभ किया। 1914 में जर्मनी और ब्रिटेन की तुलना में संयुक्त राज्य अमेरिका कच्चे लोहे, इस्पात और कोयले का अधिक उत्पादन कर रहा था। संयुक्त राज्य अमेरिका ने 1823 में मुनरो सिद्धांत अपनाया था और 1914 तक इसने लगभग सारे अमेरिकी महाद्वीप पर अपना वर्चस्व सुनिश्चित कर लिया था, लेकिन यूरोप के मामलों से यह काफी अलग-थलग था। जापान एक प्रमुख वस्त्र निर्यातक देश के रूप में उभर चुका था। 1904-05 के रूस-जापान युद्ध में रूस को हराकर जापान एक प्रमुख विश्व शक्ति के रूप में मान्यता प्राप्त कर चुका था। जापानी साम्राज्यवाद चीन की ओर निर्देशित था। जापान के प्रति तुष्टीकरण की अमेरिकी नीति ने उसे प्रशांत क्षेत्र में मजबूत प्रतिद्वंद्वी बना दिया था। इस प्रकार 1914 तक, संयुक्त राज्य अमेरिका और जापान दोनों साम्राज्यवादी शक्तियों के रूप में उभर चुके थे।

25.2. विश्व शक्तियों की राजनीतिक व्यवस्था में व्यापक भिन्नता

- संयुक्त राज्य अमेरिका, ब्रिटेन और फ्रांस की राजनीतिक व्यवस्था लोकतांत्रिक सिद्धांतों पर आधारित थी। जर्मनी में निम्न सदन था लेकिन वास्तविक शक्ति चांसलर और कैसर (सम्राट) के पद में निहित थी। इटली में संवैधानिक राजतंत्र था, लेकिन मताधिकार केवल समृद्ध लोगों के लिए ही उपलब्ध था। मेइजी पुनर्स्थापना (1868) के बाद जापान ने 1889 में एक संविधान बनाया था, जिसमें निम्न सदन (डायट) का प्रावधान किया गया था। लेकिन डायट के पास सीमित शक्तियां थीं, मताधिकार केवल 3% आबादी को ही उपलब्ध था और वास्तविक शक्ति सेना, नौसेना, सम्राट (मेइजी) और प्रिवी कौंसिल के हाथों में थी।

25.3. 1880 के बाद साम्राज्यवादी विस्तार

- 1870 के दशक में औद्योगिक क्रांति के बाद, कई यूरोपीय राष्ट्र अपने औपनिवेशिक साम्राज्य में वृद्धि करने के लिए उत्सुक थे। 1914 तक प्रमुख यूरोपीय शक्तियाँ पूरे अफ्रीका का बंदरबांट कर चुकी थीं। यद्यपि, चीन मांचू राजवंश उखाड़ फेंके जाने के बाद 1911 से ही नाममात्र का एक गणराज्य था, लेकिन इसे संयुक्त राज्य अमेरिका, जापान, फ्रांस, ब्रिटेन और जर्मनी द्वारा एक अंतर्राष्ट्रीय उपनिवेश में परिवर्तित कर दिया गया था।

26. यूरोप में होने वाले संघर्ष के कारण

निम्नलिखित तथ्यों को यूरोपीय शक्तियों के बीच होने वाले संघर्ष के कुछ प्रमुख कारणों के रूप में वर्गीकृत किया जा सकता है:

- अफ्रीका, एशिया और प्रशांत क्षेत्रों में **उपनिवेशों के लिए प्रतिद्वंद्विता**।
- **नौसैनिक प्रतिद्वंद्विता:** यह औपनिवेशिक प्रतिद्वंद्विता का ही एक परिणाम था जोकि ब्रिटेन और जर्मनी के बीच सबसे अधिक देखने को मिला। जर्मनी ने उपनिवेशवाद एवं साम्राज्यवाद की दौड़ में विलंब से प्रवेश किया था। अपने औपनिवेशिक साम्राज्य के विस्तार के लिए यह अन्य औपनिवेशिक शक्तियों को धमकाने हेतु अपनी नौसेना का उपयोग करना चाहता था। जर्मनी राष्ट्रीय सुरक्षा का हवाला देकर अपनी नौसैनिक शक्ति बढ़ाने के लिए उत्सुक था जबकि अंग्रेजों ने यह तर्क देते हुए जर्मन नौसेना के गठन का विरोध किया कि केवल ब्रिटेन के पास नौसैनिक सर्वोच्चता का अधिकार है। ब्रिटेन का तर्क था कि अपने औपनिवेशिक साम्राज्य का निरंतर संरक्षण सुनिश्चित करने के लिए वह नौसैनिक शक्ति के मामले में सर्वोच्चता का अधिकारी है, जो 20वीं शताब्दी तक सबसे विस्तृत और विशाल था।

VISION IAS

- 1870 के फ्रांस-प्रशा युद्ध में जर्मनी द्वारा फ़्रांस के हाथों से **अल्सेस-लॉरेन के क्षेत्र को ले लेना** जर्मन-फ्रांस प्रतिद्वंद्विता का कारण थी।

चित्र: अल्सेस-लॉरेन क्षेत्र

- **बाल्कन में हैब्सबर्ग साम्राज्य की महत्वाकांक्षा पर रूस को संदेह** था। बाल्कन भूमध्य सागर के उत्तर पूर्व में स्थित क्षेत्र है। यहाँ स्लाव लोगों की जनसंख्या सर्वाधिक थी। रूसी ज़ार शासन / रोमनोव राजवंश स्लावों के समूह से संबंधित था और बाल्कन में उसकी अपनी महत्वाकांक्षाएं भी थीं।
- **सर्बियाई राष्ट्रवाद:** सर्बिया स्लाव लोगों द्वारा आबाद बाल्कन क्षेत्र को यूगोस्लाविया के रूप में एकीकृत करना चाहता था। इस प्रकार के यूगोस्लाविया के निर्माण हेतु हैब्सबर्ग साम्राज्य से कुछ भागों को अलग करने की आवश्यकता पड़ती, जिसमें स्लाव सहित विभिन्न नृजातीय समूहों के लोग निवास करते थे। एक बार जब स्लाव लोग यूगोस्लाविया के रूप में एकीकृत हो जाते तो अन्य समूह भी अलग होने की मांग करते। ऐसे एकल यूगोस्लाविया के विचार से हैब्सबर्ग साम्राज्य की अखंडता को खतरा उत्पन्न हो गया था।
- **यूरोप स्वयं दो गठबंधनों में विभाजित हो गया था: ट्रिपल एलायंस** जिसमें *जर्मनी, ऑस्ट्रिया-हंगरी और इटली* थे और **ट्रिपल एंटेंट** जिसमें *ब्रिटेन, फ्रांस और रूस* सम्मिलित थे। लेकिन इन गठबंधनों में दृढ़ता नहीं थी। वास्तव में, प्रथम विश्व युद्ध में इटली ने ब्रिटेन और फ्रांस की ओर से युद्ध लड़ा था। प्रथम विश्व युद्ध **धुरी शक्तियों** (Central Powers) (जर्मनी, ऑस्ट्रिया-हंगरी, ऑटोमन साम्राज्य और बुल्गारिया) और **मित्र राष्ट्रों** (Allied Powers) (इटली, ब्रिटेन, फ्रांस, रूस और संयुक्त राज्य अमेरिका) के बीच लड़ा गया था।

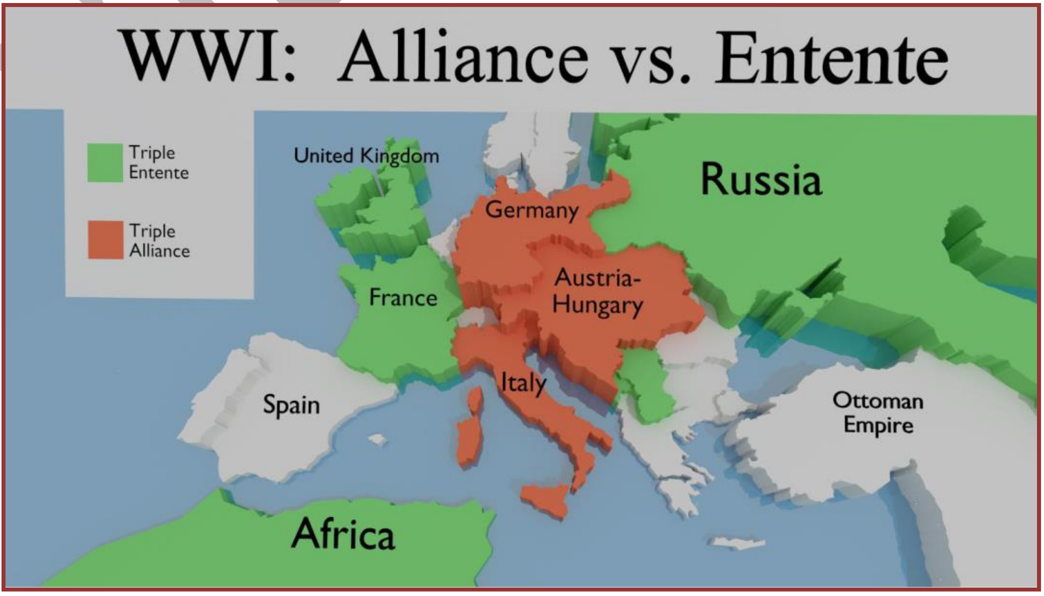

27. प्रथम विश्व युद्ध से पूर्व की कुछ प्रमुख घटनाएं

- **मोरक्को संकट (1905-06):** 1904-05 में ब्रिटेन और फ्रांस ने एंटेंट कॉर्डियल (Entente Cordiale) पर इस शर्त के साथ हस्ताक्षर किया था कि सूडान और मिस्र पर ब्रिटेन के नियंत्रण को फ्रांस द्वारा मान्यता प्रदान की जाएगी और मोरक्को पर फ्रांस के विशेष अधिकारों को ब्रिटेन द्वारा मान्यता प्रदान की जाएगी। मोरक्को में बढ़ते फ्रांसीसी प्रभाव से जर्मनी बेचैन था। उसने मोरक्को की स्वतंत्रता बनाए रखने का वचन दिया और एक सम्मेलन बुलाया। लेकिन सम्मेलन में इटली, स्पेन, रूस और ब्रिटेन ने फ्रांस का समर्थन किया और फ्रांस को मोरक्को के बैंकों और पुलिस पर नियंत्रण प्राप्त हो गया। यह जर्मनी के लिए एक राजनयिक हार थी।
- **1907 का ब्रिटेन-रूस समझौता:** इस समझौते से एशिया में इनका विवाद समाप्त हो गया। अफगानिस्तान और तिब्बत को ब्रिटिश प्रभाव क्षेत्र मान लिया गया और ईरान को तीन क्षेत्रों में विभाजित कर दिया गया। उत्तरी ईरान को रूसी क्षेत्र के रूप में, केंद्रीय क्षेत्र को मध्यस्थ क्षेत्र के रूप में और दक्षिण भाग को ब्रिटिश क्षेत्र के रूप में मान्यता दे दी गई। रूस को इस समझौते के बाद अपने औद्योगिक विकास के लिए ब्रिटिश निवेश प्राप्त होने की भी आशा थी।
- **बोस्निया संकट (1908):** ऑस्ट्रिया-हंगरी ने दुर्बल ऑटोमन साम्राज्य से बोस्निया को हड़प लिया। बोस्निया में स्लाव लोगों की काफी बड़ी आबादी थी और इस प्रकार सर्बिया भविष्य के यूगोस्लाविया के अभिन्न अंग के रूप में बोस्निया को प्राप्त करने के लिए भी उत्सुक था। सर्बिया ने रूस से सहायता मांगी। रूस ने इस मुद्दे पर सम्मेलन आयोजित करने का प्रयास किया। लेकिन जब यह स्पष्ट हो गया कि सैन्य संघर्ष की स्थिति में जर्मनी हैब्सबर्ग साम्राज्य की सहायता करेगा तो कोई सम्मेलन आयोजित नहीं किया गया क्योंकि ब्रिटेन और फ्रांस ने सर्बिया से समर्थन वापस ले लिया था। वे जर्मनी के साथ सीधे सैन्य संघर्ष से बचना चाहते थे। रूस सर्बिया के पक्ष में कोई कार्रवाई करने के लिए सैन्य रूप से मजबूत नहीं था। इस अपमान के बाद रूस ने अपना सैन्यीकरण आरंभ किया ताकि यदि भविष्य में आवश्यकता उत्पन्न हो तो वह सर्बिया की सहायता कर सके। रूस अब बाल्कन में हैब्सबर्ग साम्राज्य की महत्वाकांक्षा को लेकर अधिक संदिग्ध था; और सर्बिया ऑस्ट्रिया-हंगरी का कटु प्रतिद्वंद्वी बन गया।
- **अगादीर संकट (1911):** जब फ्रांस ने मोरक्को में सैनिक तैनात कर दिए तो जर्मनी मोरक्को के फ्रांसीसी नियंत्रण में आ जाने को लेकर चिंतित हो उठा। उसने मोरक्को के निकट अगादीर द्वीप पर अपने युद्धपोत भेज दिए। उसने फ्रांस को धमकी दी कि यदि वह अपने सैनिक वापस नहीं बुलाएगा तो जर्मनी अगादीर पर कब्जा कर लेगा। ब्रिटेन को इस बात की चिंता थी कि यदि जर्मनी अगादीर पर कब्जा कर लेगा तो वह ब्रिटिश व्यापारिक मार्गों के लिए खतरा पैदा करने की स्थिति में आ जाएगा। ब्रिटेन ने पुन: फ्रांस का पक्ष लिया। समझौते के अंतर्गत, जर्मनी को फ्रांसीसी कांगो में एक छोटी सी पट्टी दे दी गई और बदले में जर्मनी को मोरक्को पर फ्रांसीसी नियंत्रण को मान्यता देने के लिए विवश किया गया। जर्मन जनमत फ्रांस और ब्रिटेन के विरूद्ध कटु हो गया और इस घटना ने ब्रिटेन और जर्मनी के बीच नौसैनिक प्रतिद्वंद्विता को और बढ़ावा दिया।
- **प्रथम बाल्कन युद्ध (1912):** बाल्कन लीग (मोंटेनेग्रो, सर्बिया, ग्रीस, बुल्गारिया) ने तुर्की पर आक्रमण कर दिया और यूरोप में ऑटोमन साम्राज्य (तुर्क साम्राज्य) के अधिकांश क्षेत्रों पर कब्जा कर लिया। जर्मनी और ब्रिटेन ने युद्ध विराम करने के लिए मध्यस्थता की। शांति समझौते के अंतर्गत, यूरोप में ऑटोमन साम्राज्य का क्षेत्र बाल्कन राज्यों के बीच विभाजित कर दिया गया। सर्बिया अप्रसन्न था क्योंकि वह अल्बानिया चाहता था जो उसे समुद्र तक पहुंच प्रदान करता लेकिन अल्बानिया को एक स्वतंत्र राज्य बना दिया गया। स्पष्ट रूप से सर्बिया के विरूद्ध ऑस्ट्रिया काम कर रहा था, जिसका माध्यम जर्मनी था।
- **द्वितीय बाल्कन युद्ध 1913:** यह युद्ध बुल्गारिया के विरूद्ध ग्रीस, रोमानिया, तुर्की और सर्बिया ने लड़ा था। बुल्गारिया ने सर्बिया पर आक्रमण कर दिया क्योंकि वह प्रथम बाल्कन युद्ध के अंत में मकदूनिया (मेसीडोनिया) का अधिकांश भाग सर्बिया को दिए जाने से अप्रसन्न था। युद्ध में अपनी हार के बाद बुल्गारिया ने प्रथम बाल्कन युद्ध से प्राप्त सभी क्षेत्रों को खो दिया। जर्मनी ने ऑस्ट्रिया-हंगरी को बुल्गारिया की सैन्य सहायता करने से रोक दिया था। वहीं दूसरी ओर, ब्रिटेन सर्बिया की सहायता के लिए नहीं आया। जर्मनी ने इसे रूसियों से अंग्रेजों के विलगाव के संकेत के रूप में लिया। द्वितीय बाल्कन

VISION IAS

युद्ध के परिणाम स्वरूप एक मजबूत सर्बिया उभरा, जो अब यूगोस्लाविया का लक्ष्य साकार करने के लिए हैब्सबर्ग साम्राज्य के क्रोट और सर्ब (दोनों स्लाव) को उकसाने के लिए कटिबद्ध था।

- **ऑस्ट्रिया के आर्कड्यूक फ्रैन्ज फर्डिनेंड की बोस्निया की राजधानी सेराजेवो में हत्या (28 जून 1914):** बोस्निया को हैब्सबर्ग साम्राज्य ने हड़प लिया था और बोस्नियाई लोग सर्बिया के साथ थे। एक गुप्त समाज ने हत्या की साजिश रची और बोस्नियाई सरकार इस षडयंत्र से अवगत थी लेकिन इसे रोकने के लिए उसने कुछ नहीं किया। यह घटना निश्चित रूप से एक आतंकवादी कृत्य थी। ऑस्ट्रिया-हंगरी ने इस घटना को सर्बिया पर कब्जे का प्रयास करने के एक अवसर के रूप में लिया। उसने सर्बिया के समक्ष कुछ मांगें रखीं और इसके लिए समय सीमा निर्धारित की। सर्बिया ने अधिकांश मांगों को स्वीकार कर लिया, लेकिन वह सभी मांगों पर सहमत नहीं था क्योंकि सभी मांगों को स्वीकार करने का अर्थ था हैब्सबर्ग साम्राज्य के समक्ष सर्बिया की संप्रभुता का आत्मसमर्पण। आक्रमण से डरकर सर्बिया ने सैन्य लामबंदी का आदेश दे दिया। समय सीमा समाप्त होने के बाद, ऑस्ट्रिया-हंगरी ने सर्बिया के विरुद्ध युद्ध की घोषणा कर दी। इस हत्याकांड ने प्रथम विश्व युद्ध के तात्कालिक कारण के रूप में कार्य किया।

चित्र: आर्कड्यूक फ्रैन्ज फर्डिनेंड अपनी सेराजेवो यात्रा के दौरान

28. आर्कड्यूक की हत्या और प्रथम विश्व युद्ध में इसकी परिणति के लिए उत्तरदायी कारण

निश्चित रूप से सर्बिया और हैब्सबर्ग साम्राज्य के मध्य विवाद सर्बिया और ऑस्ट्रिया के बीच युद्ध के प्रस्फोट के लिए उत्तरदायी था, लेकिन इसे प्रथम विश्व युद्ध का एकमात्र कारण नहीं माना जा सकता। सर्बिया और ऑस्ट्रिया का युद्ध निम्नलिखित कारणों से विश्व युद्ध में परिणत हुआ:

- **गठबंधनों का संजाल:** यह उस गठबंधन प्रणाली को संदर्भित करता है, जिसमें यूरोप ने स्वयं को संगठित किया था। इसने प्रत्येक पक्ष के मित्रों का युद्ध में प्रवेश कराया। सर्बिया द्वारा सभी मांगों को पूरा करने में विफल रहने पर जब ऑस्ट्रिया ने सर्बिया के विरूद्ध युद्ध की घोषणा कर दी तो रूस ने सर्बिया के साथ अपने गठबंधन का सम्मान करते हुए पूर्ण लामबंदी का आदेश दिया। परिणामस्वरूप जर्मनी ने सैनिकों की लामबंदी की और रूस के विरूद्ध युद्ध घोषित कर दिया क्योंकि रूस ने ऑस्ट्रिया के विरूद्ध सैनिकों की लामबंदी न करने की जर्मन मांग को ठुकरा दिया था। पुनः जर्मनी का ऑस्ट्रिया के साथ गठबंधन था। तत्पश्चात जर्मनी ने ऑटोमन साम्राज्य के साथ गठबंधन किया और फ्रांस के विरूद्ध युद्ध घोषित कर दिया। जर्मनी का मानना था कि 1894 के फ़्रांसीसी-रूसी गठबंधन का सम्मान करते हुए फ़्रांस रूस के पक्ष में युद्ध में प्रवेश कर सकता है। जर्मन युद्ध योजना को **श्लीफेन योजना** के रूप में भी जाना जाता है, जिसका उद्देश्य मात्र 6 सप्ताह में फ्रांस पर जर्मनी की विजय थी। ऐसा केवल तभी संभव था जब जर्मनी बेल्जियम से होकर फ्रांस पर हमला करता, जो फ़्रांस और जर्मनी के बीच अवस्थित था। चूँकि ब्रिटेन बेल्जियम का मित्र था और इसने उसकी तटस्थता की गारंटी दी थी, अत: उसने बेल्जियम पर हमला होने पर जर्मनी के विरूद्ध युद्ध की घोषणा कर दी। जापान ने ब्रिटेन के साथ अपने गठबंधन का सम्मान करते हुए युद्ध में प्रवेश किया। इस प्रकार, गठबंधन प्रणाली के कारण सभी प्रमुख शक्तियां एक-दूसरे के साथ युद्धरत हो गईं। लेकिन यही एकमात्र कारण नहीं था क्योंकि इससे पहले भी ऐसे संघर्ष हो चुके थे और वे विश्व युद्ध में परिणत नहीं हुए थे।
- **साम्राज्यवाद:** अफ्रीका और सुदूर पूर्व में औपनिवेशिक प्रतिद्वंद्विता भी इसके लिए उत्तरदायी थी। फ़्रांस, ब्रिटेन और अन्य देशों ने जर्मनी की औपनिवेशिक महत्वाकांक्षाओं का गला घोंटते हुए मोरक्को संकट में उसके विरूद्ध गठबंधन बना लिया था। जापान प्रशांत महासागर क्षेत्र में अवस्थित जर्मनी के नियंत्रण वाले द्वीपों पर कब्ज़ा चाहता था। अतः इसने मित्र शक्तियों के पक्ष में युद्ध में प्रवेश किया। इटली ने और अधिक भू-क्षेत्र मिलने के वादे पर 1915 में मित्र शक्तियों की ओर से युद्ध में प्रवेश किया।
- जर्मनी और ब्रिटेन के बीच **नौसैनिक प्रतिद्वंदिता** से तनाव में वृद्धि हुई और दोनों प्रतिद्वंदी बन गए। समुद्री युद्ध में एक-दूसरे को हराकर दोनों शक्तियाँ सदैव के लिए अपना नौसैनिक वर्चस्व स्थापित करने की महत्वाकांक्षा रखती थीं।
- लेनिन ने लाभ के उद्देश्य से हो रही आर्थिक प्रतिद्वंद्विता को युद्ध के मूल कारण के रूप में देखा, अतः उसने पूंजीवाद को युद्ध के लिए दोषी ठहराया।
- रूस ने सर्बिया का समर्थन करके युद्ध की संभावना को और अधिक बढ़ा दिया। यदि रूस ने सर्बिया को ऑस्ट्रिया से अकेले निपटने दिया होता तो शायद जर्मनी ने युद्ध में प्रवेश नहीं किया होता। रूस हमेशा पूर्वी यूरोप में अपना प्रभाव स्थापित करना चाहता था। लेकिन साथ ही उसकी कुछ वास्तविक चिंताएं भी थीं। ऑटोमन साम्राज्य पहले से ही जर्मनी और ऑस्ट्रिया के प्रभाव में था। यदि ऑस्ट्रिया सर्बिया को पराजित कर देता तो डारडेनल्स ऑस्ट्रिया और जर्मनी के नियंत्रण में आ जाता। डारडेनल्स काला सागर से होकर रूस के लिए निकास का मार्ग प्रदान करता था और इस प्रकार यह रूसी व्यापार के लिए अत्यधिक महत्वपूर्ण था। अतः ऑस्ट्रिया और जर्मनी यदि इस पर नियंत्रण प्राप्त कर लेते तो वे रूसी व्यापार पर नियंत्रण प्राप्त कर सकते थे।
- **जर्मनी द्वारा ऑस्ट्रिया को दिया गया समर्थन** भी निर्णायक रूप से महत्वपूर्ण था। जर्मनी स्वयं को रूस, फ्रांस और ब्रिटेन से घिरा हुआ महसूस करता था। रूस और फ्रांस ने 1894 में एक समझौते पर हस्ताक्षर किए थे। 1904 में इस क्षेत्र के पारंपरिक प्रतिद्वंदी ब्रिटेन और फ्रांस ने एंटेंट कॉर्डियल नामक एक मित्रता समझौते पर हस्ताक्षर किया था। इस समझौते के अंतर्गत इन्होंने अफ्रीका में उपनिवेशों के संबंध में अपने विवादों का निपटारा किया। 1907 में रूस और ब्रिटेन ने एक समझौते पर हस्ताक्षर किया जिससे एशिया में उनका विवाद समाप्त हो गया। इस प्रकार 1907 तक जर्मनी इस क्षेत्र में अन्य प्रमुख शक्तियों

VISION IAS

के बीच बढ़ती निकटता के कारण बहुत चिंतित था। यद्यपि कि तकनीकी रूप से ये समझौते सैन्य समझौते न होकर क्षेत्रीय विवादों और व्यापार एवं निवेश से संबंधित समझौतों तक ही सीमित थे।

- बड़ी शक्तियों की **लामबंदी की योजना** से तनाव और आपसी संदेह में वृद्धि हुई। यूरोप में सर्बिया और आस्ट्रिया के झगड़े के अतिरिक्त भी कई आंतरिक विवाद थे। जब एक शक्ति सेनाओं की लामबंदी का आदेश देती थी तो प्रतिद्वंद्वी शक्तियों को भी अपनी लामबंदी करनी पड़ती थी, जिससे वे अपनी सीमाओं के लिए उत्पन्न होने वाले किसी भी संभावित सैन्य खतरे से निपटने में सक्षम हो सकें।
- **गलत अनुमानों की त्रासदी:**
  - जर्मनी का मानना था कि 1894 में हुए फ्रांस-रूस समझौते के कारण फ्रांस निश्चित रूप से रूस के पक्ष में लड़ेगा।
  - द्वितीय बाल्कन युद्ध में ब्रिटेन के निष्क्रिय रूख के बाद जर्मनी को यह लगा कि ब्रिटेन रूस या फ्रांस की सहायता के लिए नहीं आएगा।
  - इसके अतिरिक्त जर्मनी का यह अनुमान गलत था कि श्लीफ़ेन योजना उसे शीघ्र ही विजय दिला देगी।
  - जर्मनी का यह अनुमान भी गलत सिद्ध हुआ कि ऑस्ट्रिया का समर्थन करके वे तटस्थता के लिए रूस को धमकाने में सक्षम होंगे।
  - ऑस्ट्रिया का यह अनुमान गलत था कि जर्मनी द्वारा उसका समर्थन करने से रूस सर्बिया की सहायता करने नहीं आएगा।
  - जर्मनी और रूस के राजनेताओं का यह मानना था कि लामबंदी अनिवार्य रूप से युद्ध में परिणत नहीं होगी।
- कई पश्चिमी देशों में यह **सांस्कृतिक विश्वास** था कि युद्ध अच्छा, आवश्यक और गौरवशाली होता है। इस प्रकार दूसरों की तुलना में अपनी श्रेष्ठता की भावना ने युद्ध के पक्ष में लोगों को लामबंद किया।

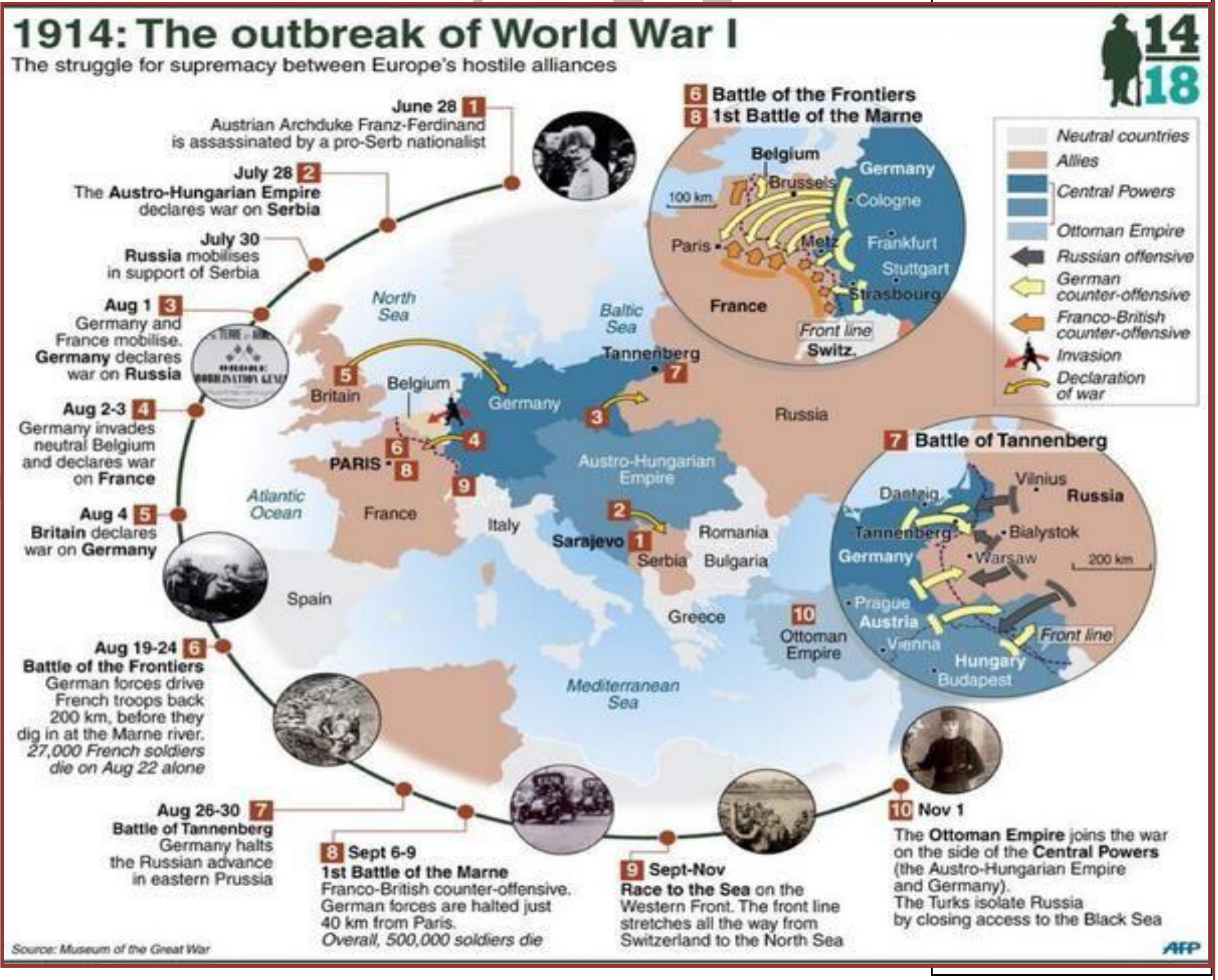

www.examdivision.com
ExamDivision.com

29. प्रथम विश्वयुद्ध के दौरान

जर्मनी द्वारा छह सप्ताह के नियोजित समय में फ़्रांस को पराजित करने में विफल रहने के कारण श्लीफेन योजना असफल रही। इसके पश्चात् यह स्पष्ट हो गया था कि यह लम्बे समय तक खिंचने वाला युद्ध है। खाई युद्ध (Trench Warfare) और समुद्री-युद्ध (war at the sea), प्रथम विश्वयुद्ध की दो महत्त्वपूर्ण विशेषताएं थी।

- **खाई युद्ध** मुख्य रूप से फ़्रांस में हुआ था जिसमें दोनों पक्षों की सेनाएं खाईयां (खंदकें) खोदती थीं। सैनिक इन खाईयों में बैठ कर गोलीबारी करते थे। जब कभी सैनिक टुकडियां खाईयों के बाहर शत्रु के विरुद्ध कार्यवाही करती थीं तो खुले मैदान में शत्रु के समक्ष आ जाने से वे शत्रु का सहज लक्ष्य बन जाती थीं। इस प्रकार से, बड़ी संख्या में दोनों पक्षों के सैनिक हताहत हुए। शीघ्र ही दोनों पक्षों की खाईयों में तैनात सैनिकों के लिए गतिरोध उत्पन्न हो गया। खाईयों में रहने वाले सैनिकों का जीवन काफी दयनीय था। जलभराव से कई रोग उत्पन्न होने लगे, जिनके परिणामस्वरूप उनकी मृत्यु हो रही थी।

चित्र: खाई युद्ध (Trench Warfare)

- **समुद्री-युद्ध:**
  - **अवरोध की नीति (Blockade Policy):** इस नीति का अनुसरण मुख्य रूप से ब्रिटेन और जर्मनी ने किया। यह तीन तरीकों को लक्षित करती थी:
    - प्रतिद्वंदी के व्यापारिक मार्गों को अवरुद्ध करना ताकि वह वस्तुओं (शस्त्र, राशन आदि) की आपूर्ति के अभाव में व्याकुल होकर आत्मसमर्पण के लिए विवश हो जाए।
    - अपने व्यापारिक मार्गों को सुरक्षा प्रदान करना ताकि जो देश दूसरे देश के लिए अवरोध उत्पन्न कर रहा है वह स्वयं ही असुरक्षित न हो जाए और उसको वस्तुओं की निर्बाध आपूर्ति होती रहे।
    - सैनिक टुकड़ियों का आवागमन।

    ब्रिटेन जर्मनी के कई युद्धपोतों को नष्ट करने में सफल रहा।
  - **मित्र देशों द्वारा की गई नाकेबंदी ने संयुक्त राज्य अमेरिका के लिए समस्याएँ उत्पन्न कर दीं** क्योंकि अंग्रेजों ने जर्मनी को होने वाली किसी भी प्रकार की आपूर्ति को रोकने के लिए सभी पोतों को रोक कर उनकी तलाशी ली। इससे स. रा. अमेरिका के व्यापारिक पोतों की गति भी धीमी हो गई। इसके अतिरिक्त अमेरिका दोनों पक्षों के साथ व्यापार करना चाहता था अतः उसने मित्र देशों द्वारा की गई नाकेबंदी को अस्वीकार कर दिया।
  - **जर्मनी ने विस्फोटक समुद्री सुरंगों और पनडुब्बियों की सहायता लेकर खुद पर होने वाले हमलों का प्रतिकार किया।** 'जर्मन युद्धपोतों को ब्रिटिश नौसेना के हाथों अत्यधिक क्षति पहुँचने के बाद उसके पास विस्फोटक समुद्री सुरंगों और पनडुब्बियों से हमला करने के अतिरिक्त अन्य कोई विकल्प नहीं बचा था। परन्तु इससे संयुक्त राज्य अमेरिका क्रोधित हो गया, क्योंकि उसके कुछ पोत डूब गये थे और एक घटना में एक पोत पर उपस्थित कई अमेरिकी नागरिक मारे गए थे। इस घटना के बाद से स. रा. अमेरिका में जनता की राय अंग्रेजों के पक्ष में हो गई थी।
  - **जुट्लैंड का युद्ध (1916):** यह एक समुद्री युद्ध था और इसके परिणामस्वरूप ब्रिटेन का विस्तृत समुद्री क्षेत्र पर नियंत्रण हो गया। इससे जर्मनी के पास पनडुब्बियों के उपयोग के अतिरिक्त कोई

©Vision IAS

विकल्प नहीं बचा था और मित्र राष्ट्रों की नाकेबंदी के लिए अनियंत्रित पनडुब्बी युद्ध प्रारम्भ हो गया।

- **1917 में अटलांटिक महासागर में जर्मनी द्वारा अनियंत्रित पनडुब्बी युद्ध:** जर्मन नाकेबंदी का उद्देश्य अंग्रेजों की आपूर्ति लाईनों को अवरुद्ध करना था। फलतः इसने अटलांटिक महासागर में "सभी" पोतों पर आक्रमण प्रारम्भ कर दिया। इस नीति के अंतर्गत तटस्थ पोत और मित्र राष्ट्रों के पोतों में कोई अंतर नहीं किया गया। इसने स. रा. अमेरिका को और अधिक क्रोधित कर दिया। परन्तु जर्मनी यह सोच रहा था कि अमेरिका के युद्ध में प्रवेश करने से पहले ही वह मित्र शक्तियों को भूखा रख कर आत्मसमर्पण के लिए विवश कर देगा। अनियंत्रित पनडुब्बी युद्ध वह प्रमुख कारण था जिसके परिणामस्वरूप स. रा.अमेरिका मित्र राष्ट्रों की ओर से युद्ध में शामिल हो गया।

30. वुडरो विल्सन के 14 सूत्र (1918)

वुडरो विल्सन के 14 सूत्रों ने न्यूनाधिक मात्रा में मित्र राष्ट्रों के युद्ध उद्देश्यों को ही रूपरेखा प्रदान की। संक्षेप में उनके 14 सूत्र इस प्रकार थे:

- गुप्त कूटनीतिक समझौतों की समाप्ति।
- सभी राष्ट्रों के लिए युद्ध और शांति दोनों ही स्थितियों में मुक्त समुद्री आवागमन।
- जहाँ तक संभव हो सभी आर्थिक प्रतिबंधों को समाप्त किया जाए तथा राष्ट्रों के बीच व्यापार के लिए समान परिस्थितियों की स्थापना की जाए।
- हथियारों में सर्वांगीण कटौती। शस्त्रों को उस न्यूनतम स्तर तक कम कर दिया जाए जितना राष्ट्रीय सुरक्षा के लिए पर्याप्त हो।
- स्थानीय जनता के हितों को ध्यान में रखते हुए सभी औपनिवेशिक दावों का स्वतंत्र और निष्पक्ष समाधान किया जाए।
- रूस के सभी अधिकृत प्रदेशों को खाली करवाया जाए।
- बेल्जियम को सम्पूर्ण स्वतंत्रता प्रदान की जाए।
- फ़्रांस को शत्रु से मुक्त करवाकर स्वतंत्रता दिलवाई जाए तथा अल्सेस-लॉरेन के प्रदेश उसको वापस दिलवाए जाएं।
- राष्ट्रीयता के स्पष्ट आधार पर इटली की सीमाओं का पुनर्निर्धारण किया जाए।
- ऑस्ट्रिया-हंगरी की जनता के लिए स्वशासन।
- रोमानिया, सर्बिया और मॉन्टेनेग्रो को मुक्त करवाकर उसकी प्रभुसत्ता सुनिश्चित की जाए तथा सर्बिया को सागर तट की सुविधा प्राप्त करवाई जाए।
- ऑटोमन साम्राज्य के गैर-तुर्की लोगों के लिए स्वायत्त विकास के अवसर उपलब्ध करवाए जाएं तथा डारडेनल्स को स्थाई रूप से खोल दिया जाए।
- समुद्र तक सुरक्षित पहुंच के साथ एक स्वतंत्र पोलैंड की पुनर्रचना की जाए।
- राजनीतिक स्वतंत्रता तथा प्रादेशिक अखंडता की रक्षा के लिए राष्ट्रों के एक सामान्य संघ की स्थापना की जाए।

विल्सन ने ब्रिटेन और फ़्रांस के दबाव में जर्मनी के लिए दो और बिंदु जोड़ दिए यथा जर्मनी का निःशस्त्रीकरण और जर्मनी द्वारा अधिकृत क्षेत्रों में नागरिकों की क्षति के लिए क्षतिपूर्ति का प्रावधान। युद्ध की समाप्ति पर इन 14 सिद्धांतों को शांति और शांति-वार्ता के आधार के रूप में सभी राष्ट्रों ने स्वीकार किया, परन्तु व्यवहार में शान्ति स्थापकों द्वारा इन सभी 14 सिद्धांतों का पूर्ण पालन नहीं किया गया।

VISION IAS

31. मित्र शक्तियों का दृष्टिकोण और शांति समझौते

- ब्रिटेन जर्मनी के साथ एक उदार संधि चाहता था क्योंकि उसे लगता था कि एक समृद्ध जर्मनी ब्रिटिश निर्यात के लिए एक बाजार के रूप में उपलब्ध होगा। फ्रांस जर्मनी के साथ एक कठोर संधि चाहता था ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि निकट भविष्य में यह फ्रांस की सीमाओं के लिए संकट न बने। स.रा. अमेरिका भी जर्मनी के साथ एक उदार संधि चाहता था। परन्तु वह जर्मनी द्वारा रूस के साथ कठोर संधि पर हस्ताक्षर किए जाने से और फ्रांस तथा बेल्जियम से जर्मन सेनाओं के पीछे हटने के दौरान वहां के नागरिक ढांचों को जर्मनों द्वारा नष्ट किए जाने के कारण अत्यंत निराश था। अंततः एक समझौता हुआ जिसमें जर्मनी को युद्ध की पूरी लागत का भुगतान नहीं करना था, परन्तु नागरिकों और उनकी सम्पत्तियों की क्षति की लागत के लिए क्षतिपूरक भुगतान करना था।

31.1. वर्साय की संधि

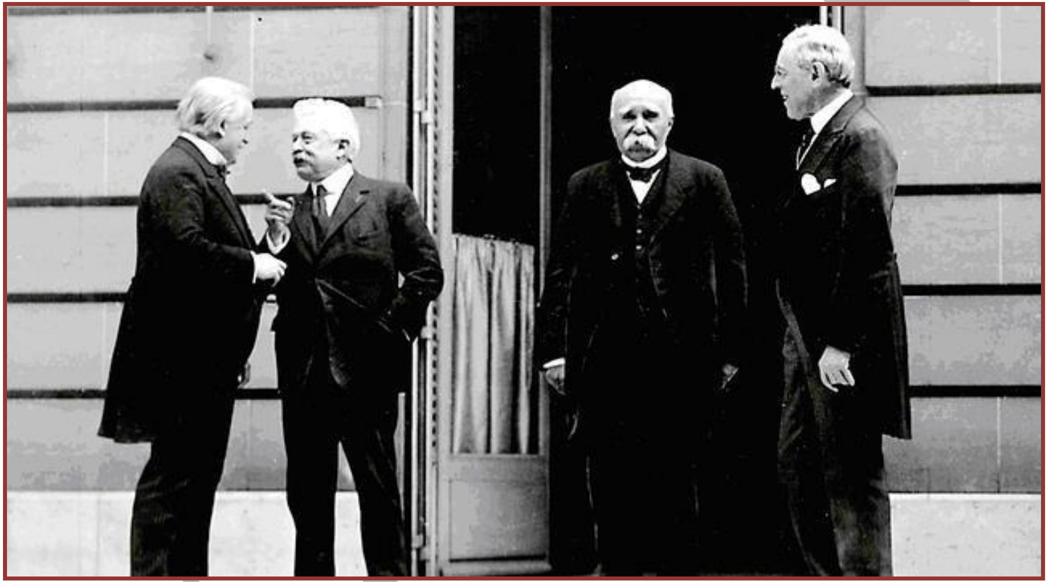

चित्र: लॉयड जॉर्ज- इंग्लैंड, वेटोरिओ ऑर्लैंडो-इटली, जॉर्ज क्लेमेंसो-फ्रांस, वुड्रो विल्सन-स.रा. अमेरिका (L-R) प्रथम विश्व युद्ध के बाद पेरिस शांति सम्मेलन के दौरान

इस संधि पर मित्र राष्ट्रों तथा जर्मनी ने 28 जून, 1919 को हस्ताक्षर किए। इसके निम्नलिखित मुख्य बिंदु थे:

- **जर्मनी को यूरोप में अपने क्षेत्र गंवाने पड़े:** जर्मनी से अल्सेस-लॉरेन के प्रदेश वापस लेकर फ्रांस को लौटा दिए गए। एस्टोनिया, लाटविया और लिथुआनिया को स्वाधीन राष्ट्र बना दिया गया। जर्मन क्षेत्रों के कुछ भाग डेनमार्क, बेल्जियम, पोलैंड और लिथुआनिया को दिए गए। सार और डैंज़िग में जर्मन जनसंख्या थी, परन्तु उनको लीग ऑफ़ नेशंस (राष्ट्र संघ) के अधीन कर दिया गया। सार को 15 वर्ष तक राष्ट्रसंघ के अधीन रहना था और उसके पश्चात् एक जनमत संग्रह से यह निर्णय होना था कि यह फ्रांस या जर्मनी किसी के साथ भी शामिल हो सकता था। तब तक के लिए सार प्रदेश की कोयला खानों से 15 वर्ष तक कोयला प्राप्त करने का अधिकार फ्रांस को दे दिया गया। डैंज़िग पश्चिमी प्रशा का एक प्रमुख बन्दरगाह था। इसे एक स्वतंत्र नगर के रूप में परिवर्तित किया गया और एक संधि द्वारा डैंज़िग के बंदरगाह को प्रयोग करने का अधिकार पोलैंड को प्राप्त हो गया।
- ऑस्ट्रिया में जर्मन जनसंख्या अधिक थी, परन्तु फिर भी **ऑस्ट्रिया और जर्मनी के बीच संघ निर्माण को प्रतिबंधित किया गया।**
- **जर्मनी के अफ़्रीकी उपनिवेशों** को उससे ले लिया गया और उन्हें राष्ट्र संघ की मैंडेट प्रणाली के अधीन रख दिया गया। इन मैंडेट प्रदेशों का शासन मैंडेटरी शक्तियों को तब तक चलाने का अधिकार दिया गया

©Vision IAS

जब तक वे स्वशासन के योग्य न हो जाएं। इस प्रकार जर्मनी से केवल यूरोप में ही उसके प्रदेश नहीं छीने गए बल्कि यूरोप के बाहर भी उसके समस्त उपनिवेशों से उसे वंचित कर दिया गया।

Mandates in the Middle East and Africa, included:

1. Syria,
2. Lebanon,
3. Palestine,
4. Transjordan,
5. Mesopotamia,
6. British Togoland,
7. French Togoland,
8. British Cameroons,
9. French Cameroun,
10. Ruanda-Urundi,
11. Tanganyika and
12. South-West Africa

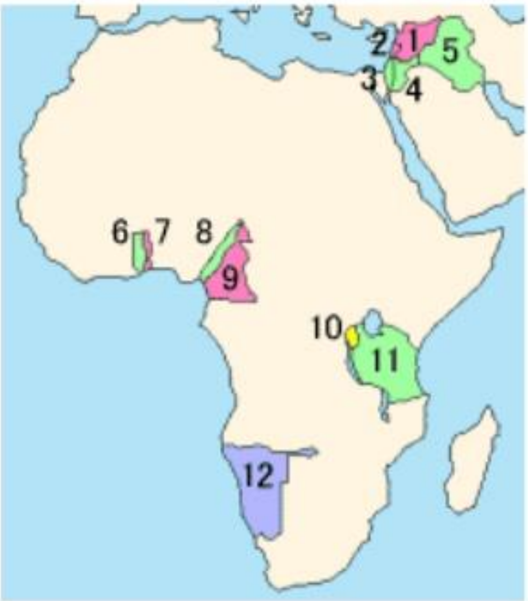

- **जर्मनी का निःशस्त्रीकरण:** जर्मनी को अनिवार्य सैन्य सेवा आरम्भ करने से प्रतिबंधित कर दिया गया। राइनलैंड (जर्मनी) को फ्रांस और जर्मनी के बीच मध्यस्थ क्षेत्र बनाया गया और जर्मनी का स्थाई रूप से असैन्यीकरण किया गया। जर्मनी को केवल छह युद्धपोत और अधिकतम एक लाख सैनिक रखने की अनुमति थी। इसे वायुयान, टैंक और पनडुब्बियां रखने की भी अनुमति नहीं थी। इस प्रकार जर्मनी के विरुद्ध कठोर निःशस्त्रीकरण लागू कर इसे सैनिक रूप से पंगु बना दिया गया।
- **युद्ध अपराध अनुच्छेद:** प्रथम विश्व युद्ध के लिए अकेले जर्मनी और उसके सहयोगियों को उत्तरदायी घोषित किया गया।
- **युद्ध क्षतिपूर्तियाँ:** विल्सन युद्ध हर्जाने के विरुद्ध थे, अतः जर्मनी से युद्ध का पूरा हर्जाना लेने का विचार त्याग दिया गया। बहुत मंत्रणा के पश्चात् यह निर्णय लिया गया कि जर्मनी को 6600 मिलियन पाउंड का भुगतान करना होगा। परन्तु इसे घटा कर 2000 मिलियन पाउंड कर दिया गया क्योंकि पहली राशि अनुपातहीन रूप से अधिक थी और जर्मनी इतनी बड़ी राशि के भुगतान की स्थिति में नहीं था। इस क्षतिपूर्ति का मुख्य उद्देश्य यह था कि जर्मनी लम्बे समय तक अपनी अर्थव्यवस्था में ही उलझा रहे और निकट भविष्य में वह कभी भी फ्रांस और ब्रिटेन के लिए संकट न बन सके।

31.2. अन्य संधियाँ

31.2.1. सेंट जर्मेन की संधि (1919) और ट्रायनॉन की संधि (1920)

- सेंट जर्मेन की संधि मित्र राष्ट्रों द्वारा 1919 में ऑस्ट्रिया के साथ संपन्न की गई और ट्रायनॉन की संधि 1920 में हंगरी के साथ की गई। इन संधियों के निम्नलिखित परिणाम निकले:
    - हैब्सबर्ग साम्राज्य की तुलना में ऑस्ट्रिया और हंगरी का आकार घट कर बहुत ही छोटा हो गया।
    - अन्य यूरोपीय देशों के बीच क्षेत्रों का बंटवारा आत्मनिर्णय के सिद्धांत पर किया गया। इस प्रकार इन क्षेत्रों के लोग अपनी राष्ट्रीयता से संबंधित सरकार के अंतर्गत रहने लगे।
    - ऑस्ट्रिया और हंगरी का निःशस्त्रीकरण कर दिया गया।

31.2.2. सेवर्स/सेव्रे की संधि (Treaty of Sevres; 1920)

यह संधि टर्की (तुर्की) के साथ की गई थी। इसमें निम्नलिखित महत्त्वपूर्ण बिंदु थे:

- तुर्की को भू-क्षेत्र की बहुत अधिक हानि हुई। ईस्टर्न थ्रेस और स्मिर्ना ग्रीस को देना पड़ा। इटली को भी कुछ क्षेत्र प्राप्त हुए।

VISION IAS

- डारडेनल्स जलडमरूमध्य को स्थाई रूप से खोल दिया गया (इस प्रकार काला सागर से निकास का मार्ग प्रदान किया गया)।
- ऑटोमन साम्राज्य के उपनिवेशों को मैंडेट में परिवर्तित किया गया और उन्हें ब्रिटेन तथा फ़्रांस को दे दिया गया। सीरिया फ़्रांस का मैंडेट बना और ब्रिटिश मैंडेट में ट्रांस जॉर्डन, इराक और फिलिस्तीन को शामिल किया गया।

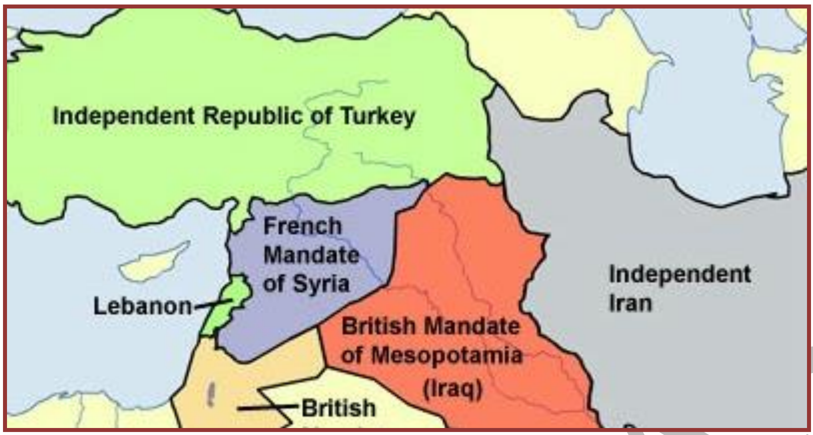

31.3. शांति संधियों की समालोचना

स्वशासन के सिद्धांत, नृजातीयता के आधार पर राज्यों का पुनर्गठन, सम्पूर्ण विश्व के निःशस्त्रीकरण के द्वारा अंतर्राष्ट्रीय शांति और सुरक्षा की स्थापना ऐसे मुख्य सिद्धांत थे जिन्हें मित्र शक्तियों ने शांति संधियों के लक्ष्यों के रूप में अग्रेषित किया था। इसे वुडरो विल्सन के 14 सूत्रों में देखा जा सकता है। जब इन सिद्धान्तों के आधार पर वर्साय की संधि का मूल्यांकन किया जाता है तो उसका औचित्य नहीं ठहराया जा सकता। यह एक उपकरण मात्र बन कर रह गया था, जिसे बाद में हिटलर के फासीवादी शासन ने द्वितीय विश्व युद्ध छेड़ने के लिए उपयोग किया था। इस सम्बन्ध में कुछ महत्वपूर्ण बिंदु निम्नलिखित हैं:

- **वर्साय की संधि एक आरोपित (दबावयुक्त) शांति थी,** क्योंकि जर्मनों को वार्ताओं का अंग बनने की अनुमति नहीं थी। वे केवल अपने विचार और आलोचनाएँ लिखित रूप में प्रेषित कर सकते थे। उनकी सभी आलोचनाओं की उपेक्षा की गई थी। केवल एक ही उपबंध (खंड) के अंतर्गत क्षेत्र की हानि के लिए जर्मनी को क्षतिपूर्ति का भुगतान किया गया। पश्चिमी प्रशा के ऊपरी सिलेसिया का औद्योगिक क्षेत्र एक मतदान के पश्चात् जर्मनी को सौंप दिया गया था। परन्तु तब सहयोगी शक्तियों ने तर्क दिया कि ब्रेस्ट लिटोवस्क की संधि (Treaty of Brest Litovsk) भी तो रूस पर थोपी गई शांति थी।
- **जर्मनी के निःशस्त्रीकरण के उपबंध** ने उसे लगभग निःशक्त बना दिया था और जर्मनी पर लगाई गयी क्षतिपूर्ति भी सर्वथा अनुचित थी। विल्सन के 14 सूत्रों में 'हथियारों की व्यापक कटौती' का प्रावधान था, परन्तु केवल जर्मनी का ही निःशस्त्रीकरण हुआ और अन्य किसी भी यूरोपीय शक्ति ने निःशस्त्रीकरण प्रारम्भ नहीं किया। सैन्यबल और शस्त्रों पर लगाई गई सीमा के कारण जर्मनी में कानून और व्यवस्था बनाए रखना भी कठिन हो गया था।
- **राष्ट्रीयता, नृजातीयता और आत्म-निर्णय का सिद्धांत:** यूरोप की आंतरिक सीमाओं के पुनर्गठन और हैब्सबर्ग साम्राज्य से अलग एक नए स्वतंत्र राज्य बनाने का औचित्य सिद्ध करने के लिए मित्र शक्तियों द्वारा प्रतिपादित यह एक प्रमुख सिद्धांत था। परन्तु इसका पूरी तरह पालन नहीं किया गया था:
    - **जर्मन:** जर्मन जनसंख्या के साथ जर्मन क्षेत्र का महत्वपूर्ण भाग नव निर्मित राष्ट्रों को दे दिया गया था। पोलैंड में एक मिलियन से अधिक जर्मन जनसंख्या थी। आस्ट्रिया और जर्मनी के बीच एकीकरण प्रतिबंधित था, जबकि आस्ट्रिया में कई नृजातीय जर्मन रहते थे। क्रमशः आस्ट्रिया और हंगरी के साथ हुई सेंट जर्मेन और ट्रायनॉन की संधियों के पश्चात् सुडेटनलैंड के जर्मन निवासी अब चेकोस्लोवाकिया का अंग थे। इस प्रकार प्रथम विश्वयुद्ध के पश्चात् संपन्न संधियों के कारण कई

©Vision IAS

www.examdivision.com ExamDivision.com

जर्मन निवासी जर्मनी के बाहर रह रहे थे और द्वितीय विश्व युद्ध से पहले हिटलर ने इसका उपयोग जर्मनी की आक्रामकता और विस्तार को सही ठहराने के लिए किया था।

- **तुर्की:** सेवर्स की संधि आत्म-निर्णय के सिद्धांत का उल्लंघन करती थी, क्योंकि इसके अंतर्गत ग्रीस को दिया जाने वाला क्षेत्र, विशेषकर स्मिर्ना का क्षेत्र तुर्की की मुख्य भूमि पर था। इसके परिणामस्वरूप तुर्की में राष्ट्रवाद का उदय हुआ और मुस्तफा कमाल पाशा के नेतृत्व में राष्ट्रवादियों ने सेवर्स की संधि को अस्वीकार कर दिया। ग्रीक वासियों को स्मिर्ना से भगा दिया गया और मुस्तफा कमाल पाशा ने संधि पर फिर से पुनर्विचार के लिए विवश कर दिया। स्मिर्ना और तुर्क साम्राज्य के कुछ अन्य प्रदेश **लोसेन की संधि (1923)** के अंतर्गत तुर्की को लौटा दिए गए।
- **अरब:** टी. ई. लॉरेंस एक अंग्रेज अधिकारी था, जिसने अरब वासियों को तुर्क वासियों के विरुद्ध भड़काने में मुख्य भूमिका निभाई थी। उसने ऑटोमन साम्राज्य के विरुद्ध 1916-18 तक हुए विद्रोह का नेतृत्व किया। प्रथम विश्व युद्ध में मित्र शक्तियों को समर्थन देने के पश्चात् अरब वासियों को स्वतंत्रता प्राप्ति की आशा थी, परन्तु उनकी आशाएँ अपूर्ण रहीं। फिलिस्तीन के अंदर एक यहूदी राज्य की रचना की बातों से अरब वासी भी अप्रसन्न थे।
- **भारतीय:** अंग्रेजों की ओर से कई भारतीय सैनिकों ने युद्ध में भाग लिया था, फिर भी भारत को कोई वास्तविक स्वायत्तता प्राप्त नहीं हुई थी। मित्र शक्तियों के युद्ध के उद्देश्यों में स्वशासन और आत्म-निर्णय सम्मिलित थे। 1919 का भारत सरकार अधिनियम भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की अपेक्षाओं पर खरा नहीं उतरा। तुर्की को छिन्न-भिन्न किया जाना भी मुस्लिम लोगों के लिए एक बड़ी शिकायत थी। अंग्रेजों ने भारतीयों को प्रथम विश्वयुद्ध में भाग लेने के बदले में ऑटोमन साम्राज्य के प्रति उदार व्यवहार का वचन दिया था, परन्तु उन्होंने अपना वचन नहीं निभाया। जलियांवाला बाग नरसंहार और रौलेट एक्ट के रूप में औपनिवेशिक उत्पीड़न के साथ इन कारकों ने भारत में खिलाफत और असहयोग आन्दोलन के लिए एक चिंगारी के रूप में कार्य किया।

चित्र: प्रथम विश्व युद्ध के दौरान भारतीय सैनिक

- **आर्थिक व्यवहार्यता का सिद्धांत:** विडम्बना यह है कि मित्र शक्तियों ने 'आर्थिक व्यवहार्यता' के सिद्धांत का उपयोग यह सिद्ध करने के लिए किया कि नवनिर्मित राज्यों में जर्मन जनसंख्या वाले क्षेत्रों की जरूरत है, लेकिन आस्ट्रिया और जर्मनी के बीच एकीकरण की उपेक्षा की गई थी। जबकि आर्थिक रूप से यह बहुत ही व्यवहार्य था।
- **उपनिवेशों की हानि:** जर्मनी द्वारा अपने अफ्रीकी उपनिवेशों की हानि पर आपत्ति स्वाभाविक थी। यह वितरण निष्पक्ष नहीं था और केवल मित्र शक्तियों की साम्राज्यवादी आकांक्षाओं को संतुष्ट करने वाला था। **लीग ऑफ़ नेशंस** (राष्ट्रसंघ) ने इन उपनिवेशों को केवल मित्र शक्तियों के सदस्यों को मैंडेट के रूप में सौंप दिया था। मैंडेट प्रणाली वास्तव में जर्मनी के उपनिवेशों का अधिग्रहण ही था। ब्रिटेन को पूर्वी अफ्रीका के जर्मन क्षेत्र मिले और फ्रांस को कैमरून और टोगोलैंड के अधिकांश भाग प्राप्त हुए तथा इन दोनों उपनिवेशों के शेष भाग ब्रिटेन को सौंप दिए गए। साउथ अफ्रीका को दक्षिणी पश्चिमी अफ्रीका के जर्मन क्षेत्र प्राप्त हुए।

- **युद्ध अपराध उपबंध:** यह बहुत ही स्पष्ट है कि सभी साम्राज्यवादी शक्तियाँ प्रथम विश्व युद्ध के लिए उत्तरदायी थीं। परन्तु युद्ध अपराध उपबंध में प्रथम विश्व युद्ध का सम्पूर्ण उत्तरदायित्व जर्मनी और उसके सहयोगियों पर थोपा जाना सर्वथा अनुचित था। इसने जर्मनी को अपमानित करने का कार्य किया। मित्र शक्तियों ने इस बात पर बल दिया कि कानूनी रूप से जर्मनी से युद्ध की क्षतिपूर्ति वसूली जाए।
- **युद्ध की क्षतिपूर्ति:** इस भयावह युद्ध की क्षतिपूर्ति के परिणामस्वरूप जर्मनी को अपमानित होना पड़ा। 6600 मिलियन पाउंड की धनराशि बहुत अधिक थी और इसका उद्देश्य निकट भविष्य में जर्मनी को आर्थिक रूप से निर्बल बनाए रखना था।
- **क्षेत्र में कटौती:** आस्ट्रिया और हंगरी को क्षेत्र और जनसंख्या के मामले में घटा कर बहुत ही छोटा कर दिया गया था। आस्ट्रिया की अधिकांश औद्योगिक सम्पदा चेकोस्लोवाकिया और पौलेंड को प्राप्त हो गयी। शीघ्र ही यह आर्थिक संकट से घिर गया जिसके कारण उसे लीग ऑफ़ नेशंस (राष्ट्र संघ) से ऋण लेना पड़ा था।
- **मुक्त व्यापार अनुच्छेद की अवहेलना:** राष्ट्रों के बीच मुक्त व्यापार विल्सन के 14 सूत्रों का एक भाग था। परन्तु अधिकांश नवनिर्मित राष्ट्र-राज्यों ने व्यापार में अवरोध खड़े किए जिसके कारण ऑस्ट्रिया की अर्थव्यवस्था को पटरी पर लाना बहुत ही कठिन सिद्ध हुआ।
- **रूस को शांति समझौतों से बहुत अधिक लाभ नहीं हुआ** था क्योंकि वार्ताओं के लिए कम्युनिस्ट शासन को आमंत्रित ही नहीं किया गया था।

32. प्रथम विश्व युद्ध के प्रभाव (1914-19)

- **शांति संधियाँ:** इन्होंने जर्मनी को केवल अस्थाई रूप से ही क्षीण किया था, क्योंकि निःशस्त्रीकरण और भारी युद्ध क्षतिपूर्ति जैसे कुछ उपबंधों को कार्यान्वित करना असम्भव था। शीघ्र ही जर्मनी ने रूस की सहायता से अपना शस्त्रीकरण करना पुनः प्रारम्भ कर दिया था और क्षतिपूर्ति के भुगतान में भी आनाकानी करने लगा था।
    - इन संधियों ने केवल असंतोष और चरम राष्ट्रीय प्रतिद्वंद्विता के बीज बोने का कार्य किया, जिसका परिणाम द्वितीय विश्व युद्ध था।
    - इन संधियों ने यूरोप को राज्यों के दो समूहों में विभाजित कर दिया। जहाँ एक समूह शांति की व्यवस्था को संशोधित करना चाहता था वहीं दूसरा समूह शांति व्यवस्था के संरक्षण के लिए प्रयासरत था।
    - स. रा. अमेरिका ने शांति व्यवस्था की पुष्टि नहीं की थी और कभी भी लीग ऑफ़ नेशन्स में सम्मिलित नहीं हुआ क्योंकि वहां के जन-सामान्य ने विल्सन की निंदा की थी। भविष्य में किसी भी प्रकार के सैन्य गठजोड़ को रोकने के लिए स. रा. अमेरिका अपनी अलगाव की नीति पर लौट आया।
    - इटली अपने आप को ठगा हुआ अनुभव कर रहा था क्योंकि उसे 1915 में युद्ध में प्रवेश करने के लिए वह सभी क्षेत्र प्राप्त नहीं हुए जिनके लिए उसे गुप्त संधि में वचन दिया गया था।
- **लीग ऑफ़ नेशन्स** (राष्ट्र संघ) की रचना विश्व शांति और सामाजिक कार्य सुनिश्चित करने के लिए की गई थी।
- **रूस ने कम्युनिस्ट विचारधारा को अपना लिया:** प्रथम विश्व युद्ध बोल्शेविक विद्रोहियों के उद्भव में सहायक रहा। युद्ध में रूस की भागीदारी के कारण वहां की जनता आर्थिक संकट का सामना करने पर विवश थी, अतः बोल्शेविक विद्रोही युद्ध में रूस की भागीदारी के विरुद्ध थे। 1917 की रूसी क्रांति के दो चरण थे। फरवरी की क्रांति (1917) में सैनिक विद्रोहों और नागरिक अशांति के कारण जार को सत्ता से बाहर कर दिया गया था। एक अंतरिम सरकार की स्थापना की गई, परन्तु यह वादे के अनुसार चुनाव आयोजित करने में विफल रही। जर्मनी की सहायता से लेनिन निर्वासन को छोड़कर रूस वापस आ गया और अक्टूबर क्रांति (1917) का मार्ग प्रशस्त हुआ जिसने अस्थाई सरकार को उखाड़ फेंका। लेनिन के नेतृत्व में बोल्शेविक सत्ता में आए और जर्मनी के साथ 1917 में एक अलग शांति संधि (ब्रेस्ट

VISION IAS

लिटोवस्क की संधि) पर हस्ताक्षर किए गए। यह संधि रूसियों के प्रति बहुत ही कठोर थी। जब जर्मनी ने वर्साय की संधि को अनैतिक और अत्यधिक कठोर होने की बात की तो रूस ने इस बात को जर्मनी के विरुद्ध उपयोग किया गया।

चित्र: लेनिन

- **अमेरिका का सामरिक शक्ति के रूप में उदय:** स. रा. अमेरिका ने युद्ध में 1917 में प्रवेश किया जब अटलांटिक महासागर में जर्मनी द्वारा पोतों की नाकेबंदी (1917) में अमेरिका सहित सभी देशों के व्यापारिक पोतों को निशाना बनाना प्रारंभ कर दिया गया। जिम्मरमैन योजना (Zimmerman Plan) एक अन्य कारक थी जिसने अमेरिका के जनमानस की राय को युद्ध में प्रवेश करने के पक्ष में परिवर्तित कर दिया। यह योजना जर्मन राजनयिक जिम्मरमैन के मस्तिष्क की उपज थी। इस योजना में मैक्सिको को अमेरिका पर आक्रमण करने के लिए सहमत करना था। इसके पूर्व स. रा. अमेरिका निरंकुश ज़ार की ओर से युद्ध में प्रवेश नहीं करना चाहता था। स. रा. अमेरिका की अनिच्छा के पीछे अमेरिकी क्रांति की भावना थी, परन्तु रूस में ज़ार के शासन के पतन से यह बाधा भी समाप्त हो गयी थी। निम्नलिखित कारकों ने स. रा. अमेरिका की प्रथम विश्व युद्ध में वास्तविक विजेता के रूप में उभरने में सहायता की थी:
    - युद्ध स. रा. अमेरिका की भूमि पर नहीं लड़ा गया था। इसलिए स. रा. अमेरिका आधारभूत ढांचे को होने वाली सामान्य क्षति और युद्ध के परिणामस्वरूप पुनर्निर्माण पर होने वाले आर्थिक व्यय से बच गया।
    - अमेरिका ने सैन्य हस्तक्षेप केवल प्रथम विश्व युद्ध के अंतिम चरण में ही किया था। इस प्रकार युद्ध में अन्य यूरोपीय देशों की तुलना में इसने अपने न्यूनतम सैनिकों को ही खोया, जिन्हें बमबारी और खाई युद्ध से नहीं निबटना पड़ा था।
    - स. रा. अमेरिका ने मित्र शक्तियों को युद्ध के दौरान तथा जर्मनी को युद्ध के पश्चात् वर्साय की संधि के अंतर्गत उन पर लगाई गई क्षतिपूरक लागत की भरपाई के लिए ऋण दिए। इस प्रकार अमेरिका ने प्रथम विश्व युद्ध के माध्यम से बहुत सा धन अर्जित किया। इसकी युद्ध मशीनों अर्थात सैन्य उद्योगों ने युद्ध के समय और युद्ध के पश्चात् हथियार बेच कर सबसे अधिक लाभ अर्जित किया। 1929 की आर्थिक मंदी में घिरने से पूर्व का दशक स. रा. अमेरिका के लिए सबसे अधिक समृद्ध समय था।
    - वर्साय की वार्ताओं में राष्ट्रपति वुडरो विल्सन द्वारा निभाई गयी अग्रणी भूमिका प्रथम विश्व युद्ध के समय और इसके बाद स. रा. अमेरिका की महत्ता और उसके बढ़ते वर्चस्व की परिचायक है।

इस प्रकार यद्यपि प्रथम विश्व युद्ध की संध्या पर अमेरिका एक प्रमुख औद्योगिक अर्थव्यवस्था था परन्तु विश्व मंच पर इसके एक वास्तविक वैश्विक शक्ति के रूप में आगमन को प्रथम विश्व युद्ध ने ही उत्प्रेरित किया था।

- युद्ध के कारण **यूरोपीय अर्थव्यवस्था को संकट का सामना करना पड़ा** और वे पुनर्निर्माण के लिए स. रा. अमेरिका के ऋण पर निर्भर हो गये।

VISION IAS

www.examdivision.com ExamDivision.com

- **ऑटोमन (तुर्क) साम्राज्य का विभाजन:** प्रथम विश्व युद्ध में पराजय के चलते ऑटोमन साम्राज्य का विघटन हो गया, तत्पश्चात एक नये राष्ट्र के रूप में तुर्की का उदय हुआ।
- **हैब्सबर्ग साम्राज्य का विघटन:** प्रथम विश्व युद्ध की समाप्ति से पूर्व ही आस्ट्रिया एवं हंगरी स्वयं ही अलग हो गये थे। इस प्रकार हैब्सबर्ग साम्राज्य का अंत हो गया।
- **नए राष्ट्र राज्यों का उदय:** जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है; तुर्की, आस्ट्रिया और हंगरी जैसे नए राष्ट्र-राज्यों का उदय हुआ। इसके अतिरिक्त चेकोस्लोवाकिया और पौलैंड का भी गठन हुआ। सर्बिया ने युगोस्लाविया के अंतर्गत स्लाव लोगों को एकजुट करने के अपने स्वप्न को पूरा किया, जिसे सर्बिया और मॉन्टेनेग्रो का विलय कर के बनाया गया था। एस्टोनिया और लिथुआनिया को भी स्वाधीन राष्ट्र बनाया गया। ब्रेस्ट लिटोवस्क की संधि (1917) के पश्चात् जर्मनी ने उन्हें रूस से ले लिया था।

- **साम्राज्यवाद का अस्तित्व बना रहा:** जर्मन उपनिवेशों को मैंडेट में परिवर्तित कर दिया गया था। भविष्य में एक उपयुक्त तिथि को उन्हें स्वाधीन करने के लिए तैयार करने हेतु उन्हें मैनडेट्स के रूप में विजयी राष्ट्रों को सौंप दिया गया था। ब्रिटेन को जर्मनी के अफ़्रीकी उपनिवेश प्राप्त हो गए। ऑटोमन साम्राज्य के क्षेत्र इराक, सीरिया, ट्रांस-जॉर्डन और फिलिस्तीन को फ़्रांस और ब्रिटेन के बीच मैंडेट के रूप में वितरित कर दिया गया था।
- **नए हथियारों का इस्तेमाल:** प्रथम विश्व युद्ध में कई नए प्रकार के हथियारों का उपयोग किया गया था। कांटेदार तार, मशीन गन, टैंक, विषैली गैस आदि का उपयोग किया गया था। इसने विश्व को शांति से और दूर कर दिया और भविष्य में होने वाले युद्धों को बहुत ज्यादा खतरनाक बना दिया।
- **प्रथम विश्व युद्ध ने युद्ध के प्रति लोगों के दृष्टिकोण को परिवर्तित कर दिया:** बहुत अधिक संख्या में नागरिकों के मारे जाने से अब कई विचारकों ने युद्ध की निंदा की। प्रथम विश्व युद्ध से पहले युद्ध को गौरवशाली कहा जाता था और प्रकाशित साहित्य में रूमानियत के पुट की प्रधानता होती थी। प्रथम विश्व युद्ध के पश्चात् हेमिंग्वे जैसे लेखकों ने युद्ध को अमानवीय करार देते हुए उसकी निंदा करनी आरम्भ कर दी थी। अधिकांश लोगों ने प्रथम विश्व युद्ध को त्रासदी के रूप में देखा, जिसका होना कोई आवश्यक नहीं था। इसने केवल ऐसी सामाजिक-आर्थिक स्थितियाँ उत्पन्न कीं जिसने द्वितीय विश्व युद्ध की सम्भावनाओं को बढ़ा दिया।

33. लीग ऑफ़ नेशन्स (राष्ट्र संघ)

- लीग ऑफ़ नेशन्स (राष्ट्रसंघ) का उद्भव मित्र शक्तियों के युद्ध उद्देश्यों में निहित था। वुडरो विल्सन के 14 सूत्रों में एक अंतर्राष्ट्रीय संस्था के निर्माण की परिकल्पना की गई थी जो विश्व शांति को बनाए रखने के लिए कार्य करेगी। ब्रिटेन ने भी इस तरह के एक संगठन का निर्माण विश्व युद्ध के दौरान अपने युद्ध लक्ष्य

के रूप में किया था। इस अनुच्छेद ने जनवरी 1920 में लीग ऑफ़ नेशन्स का रूप धारण किया, जिसका मुख्यालय जेनेवा में था। इसी दिन वर्साय की संधि भी प्रभाव में आई थी।

33.1. लीग ऑफ़ नेशन्स (राष्ट्रसंघ) के उद्देश्य

लीग ऑफ़ नेशन्स (राष्ट्रसंघ) के निम्नलिखित उद्देश्य थे:

- **भविष्य में हो सकने वाले युद्धों को रोकने के लिए अंतर्राष्ट्रीय विवादों का निपटान करना**। इसे सामूहिक सुरक्षा के सिद्धांत के माध्यम से प्राप्त करना था। सभी सदस्य राष्ट्र सामूहिक रूप से उस देश के विरुद्ध कार्यवाही करेंगे जो युद्ध को छेड़ने का प्रयास करता है। आक्रमणकारी राष्ट्र के विरुद्ध कार्यवाही सामूहिक रूप से आर्थिक प्रतिबन्ध के रूप में होगी, यदि आवश्यक हुआ तो सैनिक कार्यवाही भी की जाएगी। इस प्रकार लीग का प्राथमिक लक्ष्य अंतर्राष्ट्रीय शांति को बनाए रखना था।
- **आर्थिक और सामजिक कार्य:** लीग ऑफ़ नेशन्स का उद्देश्य सम्पूर्ण विश्व में सामाजिक आर्थिक विकास के लिए अंतर्राष्ट्रीय सहयोग प्राप्त करना था। इस प्रयोजन के लिए राष्ट्रसंघ में विभिन्न संगठन बनाए गये थे।

33.2. लीग की संविदा

- यह उन नियमों की सूची थी, जिनसे राष्ट्रसंघ को संचालित किया जाना था। इन नियमों को एक अंतर्राष्ट्रीय समिति द्वारा बनाया गया था, जिसमें विश्व के महत्त्वपूर्ण नेता सम्मलित थे।

33.3. लीग ऑफ़ नेशन्स (राष्ट्रमंडल) का संगठनात्मक ढांचा

- **सदस्यता:** 42 सदस्य राष्ट्रों के साथ इसका आरम्भ हुआ था। 1926 तक जब जर्मनी को इसकी सदस्यता प्रदान की गयी तो सदस्यों की कुल संख्या 55 तक पहुंच गई थी।
- **सुरक्षा परिषद:** राष्ट्रसंघ में सुरक्षा परिषद जैसी एक संयुक्त सुरक्षा परिषद थी। आरम्भ में इसमें आठ सदस्य थे, चार स्थाई सदस्य और चार अस्थाई सदस्य। अस्थाई सदस्यों को तीन वर्ष की अवधि के लिए महासभा द्वारा चुना गया था। 1926 तक इस परिषद के तेरह सदस्य थे, जिनमें अस्थाई सदस्यों की सीटों की संख्या को बढ़ा कर अब 9 कर दिया गया। चार स्थाई सदस्य फ्रांस, इटली, जापान और ब्रिटेन थे। परिषद में सभी निर्णय सर्वसम्मति से होने थे। राष्ट्रसंघ के इस सुरक्षा परिषद का अधिदेश (मुख्य कार्य) राजनीतिक मुद्दों से निबटना था।
- **शांति बनाए रखने का कार्य:** वे सभी विवाद जो युद्ध का कारण बन सकते थे, उन्हें परिषद को भेजा जाना था। कोई भी सदस्य जो युद्ध छेड़ता है उसे शेष सदस्यों की सामूहिक कार्यवाही का सामना करना पड़ता था। सुरक्षा परिषद को उन नौसेनिक, वायु और सैन्य संसाधनों की अनुशंसा का अधिकार होगा जिनका योगदान प्रत्येक सदस्य को आक्रमणकारी के विरुद्ध कार्यवाही के लिए करना होगा।
- **महासभा:** राष्ट्रसंघ के सदस्यों द्वारा महासभा का गठन किया गया। महासभा की बैठकें वार्षिक रूप से होती थी और सभी निर्णय सर्वसम्मति से लिए जाते थे। महासभा के सभी सदस्यों का एक वोट था। महासभा लीग की नीति निर्माणकारी संस्था थी और इस प्रकार इसे सामान्य नीति के मुद्दों पर निर्णय करने का अधिदेश प्राप्त था। यह राष्ट्रसंघ की वित्तीय व्यवस्था को भी नियंत्रित करती थी और इसे किसी शांति संधि में संशोधन करने का अधिकार भी प्राप्त था। महासभा के विशेष अधिकारों में; नये सदस्यों का प्रवेश, परिषद के अस्थाई सदस्यों का आवधिक चुनाव, स्थायी न्यायालय के न्यायाधीशों की परिषद का चुनाव और बजट पर नियन्त्रण सम्मिलित था। व्यवहार में महासभा के पास राष्ट्रसंघ की गतिविधियों के सामान्य निर्देशन की शक्ति थी।
- **अंतर्राष्ट्रीय न्याय का स्थायी न्यायालय:** इसकी स्थापना हेग (नीदरलैंड) में की गई थी। इसका अधिदेश केवल राष्ट्रों के बीच कानूनी विवादों को निपटाना था न कि राजनैतिक विवादों का निपटान। इसमें विभिन्न राष्ट्रीयताओं के पन्द्रह न्यायाधीश थे। यह आज भी संयुक्त राष्ट्र संघ के भाग के रूप में कार्यरत है और इसे अंतर्राष्ट्रीय न्यायालय के रूप में जाना जाता है।
- **सचिवालय:** इसकी स्थापना एक सहायक इकाई के रूप में की गई थी। यह कागज़ी कार्यवाही, रिपोर्ट्स और एजेंडा तैयार करने का कार्य करता था।

VISION IAS

- **आयोग और समितियाँ:** कई आयोगों की स्थापना की गयी थी जिसमें प्रत्येक आयोग एक विशिष्ट समस्या से निबटता था। जैसे- 'मैंडेट्स', निःशस्त्रीकरण, सैन्य मामलों आदि से सम्बंधित मुद्दों से निपटने के लिए कुछ महत्वपूर्ण आयोगों का गठन किया गया था। दूसरी ओर कुछ महत्वपूर्ण समितियाँ स्वास्थ्य, श्रम, महिलाओं के अधिकारों, नशीली दवाओं, बालकल्याण आदि विषयों से सम्बन्धित थीं।

33.4. राष्ट्रसंघ के प्रदर्शन का मूल्यांकन

- राष्ट्रसंघ की सफलता या असफलता का निर्धारण हम पहले उल्लेख किए गए राष्ट्र संघ के दो प्रमुख उद्देश्यों से सम्बन्धित प्रदर्शन के विश्लेषण के आधार पर कर सकते हैं। यदि राष्ट्र संघ के प्रदर्शन का संक्षेप में मूल्यांकन किया जाए तो यह कहा जा सकता है कि यह अंतर्राष्ट्रीय विवादों के समाधान के लिए एक प्रमुख मंच होने और शांतिपूर्ण विश्व सुनिश्चित करने के अपने उद्देश्य में विफल रहा है। परन्तु पूरे विश्व में इसने सामाजिक और आर्थिक विकास के लिए महत्त्वपूर्ण कार्य किया। विशेषकर श्रमिकों के कल्याण के लिए अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन का कार्य और प्रथम विश्वयुद्ध के शरणार्थियों के पुनर्वास के लिए राष्ट्रसंघ का योगदान सराहनीय था।

33.4.1. राष्ट्रसंघ की सफलता

राष्ट्रसंघ दो क्षेत्रों में सफल रहा था:

- **अपने आयोगों और समितियों के माध्यम से आर्थिक और सामाजिक कार्य:**
  - **अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन (ILO):** यह राष्ट्रसंघ का प्रमुख संगठन नहीं था, अपितु उसका एक अभिकरण था। (यह 1946 में संयुक्त राष्ट्र का प्रथम विशिष्ट अभिकरण बना।) ILO सबसे सफल संगठन था। ILO के लक्ष्यों में सम्मिलित था - अधिकतम कार्य दिवस और न्यूनतम मजदूरी तय करना, यह सुनिश्चित करना कि सदस्य राष्ट्र बेरोजगारी लाभ और वृद्धावस्था पेंशन प्रदान करें। इसके कार्यों में विभिन्न सदस्य राष्ट्रों के प्रदर्शन के संबंध में सूचना का प्रचार-प्रसार करना और श्रमिकों के कल्याण के क्षेत्र में कार्रवाई के लिए सरकारों को प्रेरित करना सम्मिलित था।
  - **शरणार्थी संगठन:** इसने रूस में युद्धबंदियों को रूस से बाहर अपने घर लौटने में सहायता की। 1933 में नाजी उत्पीड़न से बचने के लिए भाग रहे यहूदियों की अलग-अलग देशों में फिर से बसने में सहायता की। इस प्रकार के दयालुतापूर्ण कार्य से लीग ने उन्हें सुरक्षा प्रदान की।
  - **स्वास्थ्य संगठन:** इसने विभिन्न महामारियों का कारण पता लगाने की दिशा में अच्छा कार्य किया। यह विशेष रूप से रूस में टाइफस महामारी से लड़ने में सफल रहा, जिसमें यूरोप के शेष हिस्सों में फैलने की संभाव्यता थी।
  - **मैंडेट आयोग:** इसके ऊपर मैंडेट (ऑटोमन साम्राज्य और जर्मनी के पूर्व उपनिवेश) के रूप में सदस्य राष्ट्रों को सौंपे गए प्रदेशों के शासन की निगरानी करने का उत्तरदायित्व था। सार (SAAR) प्रदेश में शासन की निगरानी करने के लिए स्थापित पृथक आयोग बहुत कुशल था और इसने 1935 में वहां सफलतापूर्वक जनमत संग्रह आयोजित किया। जनमत संग्रह के बाद सार प्रदेश जर्मनी को लौटा दिया गया। हालांकि मैंडेट आयोग ने अच्छी तरह कार्य किया, लेकिन यह तर्क दिया जा सकता है कि इसने पूर्ववर्ती अफ्रीकी उपनिवेशों में उपनिवेशवाद के विरूद्ध कुछ विशेष नहीं किया, जिन्हें मैंडेट में परिवर्तित कर दिया गया था। मैंडेट को स्वशासन के लिए तैयार किया जाना था लेकिन आयोग यह सुनिश्चित करने में विफल रहा कि औपनिवेशिक शक्तियाँ मैंडेट के शासन में स्थानीय लोगों की भागीदारी के लिए प्रावधान करें।
- **छोटे अंतर्राष्ट्रीय विवादों का निपटारा:** यहां राष्ट्रसंघ को आंशिक सफलता ही मिली। इसने ग्रीस को बुल्गारिया पर आक्रमण करने के लिए क्षतिपूर्ति का भुगतान करने हेतु विवश किया। जब तुर्की ने ब्रिटेन के मैंडेट मोसुल प्रांत पर दावा करना आरंभ किया तो राष्ट्रसंघ ने ब्रिटेन के पक्ष में निर्णय दिया। राष्ट्रसंघ ने पेरू और कोलंबिया के बीच क्षेत्रीय विवाद का समाधान किया। इसके साथ ही 1921 में, जब जर्मनी और पोलैंड के बीच ऊपरी सिलेसिया (एक औद्योगिक क्षेत्र) के संबंध में विवाद पैदा हो गया

VISION IAS

तो राष्ट्रसंघ ने सफलतापूर्वक दोनों पक्षों के लिए समझौते पर पहुँचना संभव बनाया और ऊपरी सिलेसिया दोनों के बीच बांट दिया गया।

स्पष्ट है कि इन विवादों में से किसी से भी विश्व शांति के लिए खतरा उत्पन्न नहीं हुआ। हालाँकि इन विवादों में जब भी कोई प्रमुख शक्ति संबद्ध होती थी तो राष्ट्रसंघ का निर्णय सदैव प्रमुख शक्ति के पक्ष में होता था।

33.4.2. राष्ट्र संघ की विफलता/प्रभावहीनता के कारण

- **मित्र राष्ट्रों का संगठन:** राष्ट्रसंघ को मित्र राष्ट्रों- विशेषकर फ्रांस और ब्रिटेन के संगठन के रूप में देखा जाने लगा था, जिसकी स्थापना अन्यायपूर्ण शांति संधियों के कार्यान्वयन के लिए की गई थी। इसलिए यह सभी देशों को संतुष्ट करने में विफल रहा।
    - तुर्की और इटली दोनों शांति संधियों से असंतुष्ट थे। जहां तुर्की उन क्षेत्रों को ग्रीस को सौंपे जाने से व्यथित था, जिन्हें वह अपना अभिन्न अंग मानता था; वहीं इटली 1915 में मित्र राष्ट्रों के पक्ष में युद्ध में प्रवेश करने के एवज में प्रादेशिक लाभ न मिलने के कारण असंतुष्ट था।
    - हस्ताक्षरित शांति संधियाँ आत्म-निर्णय के सिद्धांत के विरूद्ध थीं। उदाहरण के लिए शांति संधियों के बाद लाखों जर्मन जर्मनी से बाहर चेकोस्लोवाकिया और पोलैंड में रह रहे थे। इसी तरह कई तुर्क अब ग्रीस के निवासी थे।
- **राजदूतों का सम्मेलन (Conference of Ambassadors):** राष्ट्र संघ के गठन होने और इसके पूरी तरह से क्रियाशील होने तक शांति संधियों के संबंध में विवादों का समाधान करने के लिए एक अस्थायी निकाय के रूप में इस निकाय की स्थापना की गई थी। लेकिन राष्ट्रसंघ के गठन के बाद भी यह निकाय अस्तित्व में बना रहा। इससे राष्ट्रसंघ की वैधता और प्राधिकार को चोट पहुंची। कई बार राजदूतों के सम्मेलन ने राष्ट्रसंघ के निर्णयों की अवहेलना की। उदाहरण के लिए कोर्फू घटना (1923); जिससे इटली और ग्रीस संबंधित थे।
- **निःशस्त्रीकरण की विफलता:** केवल जर्मनी का ही वर्साय की संधि के अंतर्गत निःशस्त्रीकरण किया गया था। राष्ट्रसंघ अन्य प्रमुख शक्तियों को निःशस्त्रीकरण के लिए मनाने में विफल रहा। ब्रिटेन और फ्रांस स्व-निःशस्त्रीकरण नहीं चाहते थे। जब 1932-33 में विश्व निःशस्त्रीकरण सम्मेलन आयोजित किया गया तो हिटलर ने फ्रांस के साथ शस्त्रीकरण की समानता की मांग की। लेकिन फ्रांस ने अस्वीकार कर दिया क्योंकि उसे डर था कि जर्मनी समकक्ष सैन्य शक्ति बन जाएगा और शीघ्र ही उसकी सीमाओं के लिए खतरे के रूप में उभर आएगा। हिटलर ने विश्व निःशस्त्रीकरण सम्मेलन को छोड़ने के बहाने के रूप में इसका उपयोग किया। शीघ्र ही वह राष्ट्रसंघ की निंदा करने लगा और साथ ही जर्मनी ने इसकी सदस्यता त्याग दी।
- **सामूहिक सुरक्षा का मजाक:** राष्ट्रसंघ प्रथम विश्वयुद्ध के बाद शांति संधियों के माध्यम से स्थापित सीमाओं के किसी भी उल्लंघन की रोकथाम करने में विफल रहा।
    - **1923 का प्रस्ताव:** इसने प्रत्येक सदस्य को सामूहिक सुरक्षा सिद्धांत की प्राप्ति हेतु सैन्य संसाधनों की आपूर्ति करने के निर्णय की स्वतंत्रता प्रदान की। इस स्वतंत्रता ने किसी सदस्य राष्ट्र के द्वारा युद्ध के किसी भी कृत्य को रोकने के सभी राष्ट्रों के उत्तरदायित्व को प्रभावहीन बना दिया।
    - **जेनेवा प्रोटोकॉल की विफलता (1924):** ब्रिटेन और फ्रांस की सरकारों ने जेनेवा प्रोटोकॉल का प्रस्ताव किया था। राष्ट्रसंघ की सभा ने सर्वसम्मति से "अंतर्राष्ट्रीय विवादों के शांतिपूर्ण समाधान का प्रलेख" स्वीकार किया। इसमें विवादों की अनिवार्य मध्यस्थता का प्रावधान किया गया था। इसने राष्ट्रसंघ के सदस्यों को आक्रमण से पीड़ित राष्ट्र की तत्काल सैन्य सहायता उपलब्ध कराने हेतु प्रतिबद्ध किया। जेनेवा प्रोटोकॉल में यह व्यवस्था थी कि सदस्य राष्ट्र स्वयं को "राष्ट्र संघ के पक्ष में अपनी संप्रभुता पर महत्वपूर्ण सीमाबंधन के लिए सहमति देने हेतु तैयार हों"। लेकिन संयुक्त राज्य अमेरिका ने (अपनी अलगाव की नीति के कारण) इस प्रस्ताव की निंदा की और ब्रिटेन की अगली कंजर्वेटिव सरकार ने इस प्रोटोकॉल से ब्रिटिश समर्थन वापस ले लिया। इस प्रकार इस प्रोटोकॉल की पुष्टि कभी नहीं हो पाई।

VISION IAS

- **1929 के आर्थिक संकट** से गरीबी और बेरोजगारी में वृद्धि हुई और परिणामस्वरूप पूरे विश्व में दक्षिणपंथी सरकारें सत्ता में आ गईं। ये सरकारें अधिक आक्रामक थीं और उन्होंने राष्ट्रसंघ की प्रसंविदा का उल्लंघन किया। उदाहरण के लिए, जापान ने 1931 में मंचूरिया पर आक्रमण कर दिया, 1935 में इटली ने अबीसीनिया पर आक्रमण कर दिया, 1936 का स्पेन का गृहयुद्ध फ्रैंको के पक्ष में मुसोलिनी और हिटलर द्वारा सैन्य हस्तक्षेप का साक्षी बना। 1937 में जापान ने चीन पर आक्रमण कर दिया और हिटलर ने 1938 में ऑस्ट्रिया को हड़प लिया। इन सभी प्रकरणों में राष्ट्रसंघ शक्तिहीन सिद्ध हुआ और ऐसे सैन्य आक्रामणों को रोकने में विफल रहा। 1931 में मंचूरिया पर जापानी आक्रमण के प्रकरण में राष्ट्रसंघ का यह निर्णय था कि जापान को मंचूरिया को खाली कर देना चाहिए। जापान ने इस निर्णय को अस्वीकार कर दिया और परिणामस्वरूप इसने 1933 में राष्ट्रसंघ की सदस्यता त्याग दी। जापान के विरूद्ध सैन्य या आर्थिक प्रतिबंधों पर चर्चा तक नहीं की गई क्योंकि महामंदी के कारण ब्रिटेन और फ्रांस आर्थिक दबाव में थे। इसी तरह जब अबीसीनिया ने 1935 में इटली के आक्रमण के विरूद्ध राष्ट्रसंघ में अपील की तो राष्ट्रसंघ ने प्रतिबंध लगाया, लेकिन केवल आधे मन से। इटली को अभी भी कोयला, तेल और इस्पात जैसी महत्वपूर्ण वस्तुएँ आयात करने की अनुमति दी गई और इस प्रकार ये प्रतिबंध इटली को अबीसीनिया से पीछे हटने के लिए विवश करने में विफल रहे।

उपर्युक्त चर्चा से तीन बातें स्पष्ट होती हैं तथा विश्व राजनीति पर 1929 के आर्थिक संकट के निम्नलिखित प्रभाव पड़े:

- दक्षिणपंथी सरकारों; विशेषकर जापान, इटली और जर्मनी में फासीवादी शासन व्यवस्थाओं ने विश्व आर्थिक संकट का लाभ उठाया क्योंकि उन्हें पता था कि आर्थिक चिंताओं के कारण ब्रिटेन और फ्रांस जैसे राष्ट्रसंघ के महत्वपूर्ण सदस्य कार्यवाही नहीं करेंगे।
- युद्ध रोकने के लिए ब्रिटेन, फ्रांस और संयुक्त राज्य अमेरिका फासीवादी शासन व्यवस्थाओं के प्रति तुष्टीकरण की नीति अपना रहे थे। यह विनाशकारी साबित हुआ और धीरे-धीरे फासीवादी शासन व्यवस्थाएँ विश्व शांति को चुनौती देने के लिए शक्तिशाली होती गईं।
- साथ ही यह स्पष्ट है कि राष्ट्रसंघ के समर्थक राष्ट्रों सहित प्रत्येक राष्ट्र अपने स्वयं के आर्थिक हितों को लेकर चिंतित था। चाहे यह अलगाव की अमेरिकी नीति हो या जेनेवा प्रोटोकॉल का ब्रिटिश परित्याग हो, प्रमुख शक्तियाँ ऐसा कोई उत्तरदायित्व नहीं उठाना चाहती थीं जिससे कोई प्रत्यक्ष क्षेत्रीय या आर्थिक लाभ न हो। यहां तक कि राष्ट्रसंघ में महत्वपूर्ण भूमिका निभाने वाले ब्रिटेन और फ्रांस ने भी तब तक कार्यवाही नहीं की जब तक कि उन्हें संयुक्त राज्य अमरीका, सोवियत रूस आदि जैसी अन्य महत्वपूर्ण आर्थिक और सैन्य शक्तियों का समर्थन नहीं मिल गया। इस काल में राष्ट्रीय आर्थिक चिंताएं और राजनीतिक लाभ विश्व शांति की तुलना में अधिक महत्वपूर्ण हो गए थे।
- **राष्ट्र संघ वास्तव में कोई प्रतिनिधि संगठन नहीं था** और इसकी सदस्यता सीमित थी। इसका परिणाम राष्ट्रसंघ के कार्यों के लिए धन की कमी के रूप में भी सामने आया। 1920 में राष्ट्रसंघ के गठन के समय तीन प्रमुख विश्व शक्तियाँ अर्थात् संयुक्त राज्य अमेरिका, सोवियत रूस और जर्मनी इसके सदस्य नहीं थे। इस प्रकार यह फ्रांसीसियों और अंग्रेजों का संगठन बनकर रह गया था, फलतः एक वास्तविक विश्व संगठन कहलाने के लिए इसके पास वैधता का अभाव था। जर्मनी को कहीं 1926 में जाकर प्रवेश दिया गया, जबकि सोवियत रूस को 1934 में सदस्यता मिली। संयुक्त राज्य अमेरिका कभी भी राष्ट्रसंघ में सम्मिलित नहीं हुआ और न ही उसने शांति संधियों की पुष्टि ही की। प्रथम विश्व युद्ध के बाद अमेरिकी जनता ने वुडरो विल्सन और उसके चौदह सूत्रों को अस्वीकार कर दिया और अमेरिका अलगाव की अपनी नीति पर वापस लौट गया। रिपब्लिकन राष्ट्रसंघ को एक विश्व सरकार के रूप में देखते थे, जिससे अमेरिका की राष्ट्रीय संप्रभुता और स्वतंत्रता के लिए खतरा था। वे भविष्य के किसी भी सैन्य संघर्ष में सम्मिलित नहीं होना चाहते थे या यूरोपीय मामलों में सम्मिलित नहीं होना चाहते थे। 1933 तक जापान राष्ट्रसंघ से बाहर निकल चुका था और इसके तुरंत बाद ही हिटलर के समय जर्मनी ने भी राष्ट्रसंघ को छोड़ दिया। इस प्रकार द्वितीय विश्व युद्ध की पूर्व संध्या पर राष्ट्र संघ खंडहर बन गया था और विफल हो चुका था।

VISION IAS

www.examdivision.com ExamDivision.com

- **सारांश:** जहां भी राष्ट्रसंघ का निर्णय किसी भी प्रमुख शक्ति के विरूद्ध होता था, राष्ट्रसंघ ऐसे विवादों में अपने निर्णय लागू कराने में विफल रहता था। जापान, इटली और जर्मनी जैसी आक्रामक शासन व्यवस्थाओं ने राष्ट्रसंघ की अवहेलना की। ब्रिटेन और फ्रांस ने राष्ट्रसंघ को प्रभावी बनाने के लिए कुछ विशेष नहीं किया। इस हेतु 1929 का आर्थिक संकट भी अपने तरीके से उत्तरदायी था। राजदूतों के सम्मेलन ने राष्ट्रसंघ का प्राधिकार कम किया। जर्मनी, अमेरिका, सोवियत रूस जैसी महत्वपूर्ण शक्तियाँ इसके सदस्य नहीं थे। राष्ट्रसंघ की प्रसंविदा कमजोर थी और यह वास्तविक सामूहिक सुरक्षा प्रदान करने में विफल रहा।

33.5. राष्ट्र संघ की विफलता का प्रभाव

- मंचूरिया और अबीसीनिया में आक्रमण के विरूद्ध इसकी निष्क्रियता के कारण धीरे-धीरे छोटे राज्यों ने राष्ट्र संघ में अपना विश्वास खो दिया।
- फासीवादी शासन व्यवस्थाओं को प्रोत्साहन मिला। हिटलर वर्साय की संधि का उल्लंघन करने को लेकर आश्वस्त हो गया।
- द्वितीय विश्व युद्ध नहीं रोका जा सका।

33.6. राष्ट्रसंघ के साथ संयुक्त राष्ट्र संघ की तुलना

संयुक्त राष्ट्र संघ	**राष्ट्रसंघ**
द्वितीय विश्व युद्ध के बाद 1945 में स्थापित	प्रथम विश्व युद्ध के बाद 1920 में स्थापित
संयुक्त राष्ट्र चार्टर	राष्ट्रसंघ प्रसंविदा
स. रा. अमेरिका और सोवियत रूस की सक्रिय भागीदारी	स. रा. अमेरिका सम्मिलित नहीं हुआ। सोवियत रूस का भी बहुत बिलंब से प्रवेश हुआ (1934)
स. रा. अमेरिका और सोवियत रूस का वर्चस्व	ब्रिटेन और फ्रांस का वर्चस्व
स. रा. अमेरिका, सोवियत रूस, चीन और ब्रिटेन के प्रस्तावों पर संयुक्त राष्ट्र का चार्टर आधारित है	स. रा. अमेरिका, ब्रिटेन और फ्रांस द्वारा राष्ट्रसंघ की प्रसंविदा तैयार की गई थी क्योंकि रूस को वर्साय की संधि में आमंत्रित नहीं किया गया था।
संयुक्त राष्ट्र का उद्देश्य विश्व शांति, सभी के व्यक्तिगत मानवाधिकारों की सुरक्षा और सामाजिक-आर्थिक विकास है।	राष्ट्रसंघ में व्यक्ति के अधिकारों की सुरक्षा सम्मिलित नहीं थी।
संयुक्त राष्ट्र महासभा का निर्णय सर्वसम्मति के सिद्धांत पर आधारित नहीं है।	राष्ट्रसंघ की महासभा सर्वसम्मति के सिद्धांत के आधार पर निर्णय लेती थी। इसका परिणाम निरंतर गतिरोध निकला।
संयुक्त राष्ट्र में विकासशील देशों की बहुत अधिक भागीदारी है।	राष्ट्रसंघ में उपनिवेशों की कोई भागीदारी नहीं थी।
संयुक्त राष्ट्र अधिका प्रतिनिधित्व वाला संगठन है। लगभग सभी राष्ट्र इसके सदस्य हैं। पूर्व के उपनिवेशों द्वारा स्वतंत्रता प्राप्त करने के बाद यह तृतीय विश्व का कहीं अधिक प्रतिनिधि बन गया है। सोवियत रूस के विघटन के बाद नए राज्यों का उद्भव हुआ और परिणामस्वरूप इसकी सदस्यता में और अधिक वृद्धि हुई।	सभी राष्ट्रों की सदस्यता के अभाव के चलते राष्ट्रसंघ कम प्रतिनिधित्व वाला संगठन था।

VISION IAS

निर्णयों के प्रभावी होने के लिए संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद में मतदान सर्वसम्मति से होने की आवश्यकता नहीं है।	राष्ट्रसंघ की सुरक्षा परिषद में मतदान सर्वसम्मति से होना आवश्यक था।
संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद के स्थायी सदस्य संयुक्त राज्य अमेरिका, फ्रांस, ब्रिटेन, रूस और चीन हैं। अस्थायी सदस्यों की संख्या 10 है जो 2 वर्षों के लिए चुने जाते हैं।	राष्ट्रसंघ की परिषद के स्थायी सदस्य फ्रांस, ब्रिटेन, जापान और इटली थे। 1926 में अस्थायी सदस्यों की संख्या 9 थी जबकि 1920 में जब राष्ट्रसंघ का गठन हुआ था तो इनकी संख्या 4 थी। इन्हें 3 वर्षों के लिए चुना जाता था।

- आर्थिक और सामाजिक विकास कार्यों के प्रति अधिक समय और धन समर्पित किए जाने के कारण संयुक्त राष्ट्र अधिक सफल रहा। साथ ही, राष्ट्रसंघ की तुलना में सामाजिक-आर्थिक विकास के क्षेत्र में संयुक्त राष्ट्र का दायरा भी काफी अधिक व्यापक है। ILO को छोड़कर, संयुक्त राष्ट्र की सभी विशेषज्ञ एजेंसियों की स्थापना 1945 के बाद हुई। संयुक्त राष्ट्र सुशासन पर अधिक केंद्रित है। उदाहरण के लिए इसने सतत विकास लक्ष्यों जैसे विकास संबंधी लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए सदस्य राष्ट्रों के साथ कार्यक्रम तैयार किया है और इस दिशा में प्रमुख कार्य कर रहा है। संयुक्त राष्ट्र महत्वपूर्ण निर्णायक कार्रवाई करने में सक्षम रहा है क्योंकि संयुक्त राष्ट्र महासभा (UNGA) को सर्वसम्मति वाले मतों की आवश्यकता नहीं होती है। 1950 के **यूनाइटिंग फॉर पीस रेजोल्यूशन** (1950 के कोरियाई युद्ध के दौरान) के प्रावधानों के चलते संयुक्त राष्ट्र महासभा (UNGA) अब संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद (UNSC) के वीटो को भी रद्द कर सकता है। उल्लेखनीय है कि साम्यवादी चीन को UNO में प्रवेश न दिए जाने के कारण सोवियत रूस UNSC का बार-बार बहिष्कार कर रहा था, इसीलिए यह प्रावधान लाया गया था। कुछ विश्लेषकों का तर्क है कि प्रस्ताव पर मतदान नहीं करने का अर्थ वीटो करना है। इस प्रकार UNGA से परामर्श किया गया और UNGA ने यह धारा (**यूनाइटिंग फॉर पीस रेजोल्यूशन**) पारित की जिसने वीटो को रद्द करना संभव बनाया और इस प्रकार संयुक्त राष्ट्र कोरिया युद्ध में हस्तक्षेप कर सका। प्रस्ताव में कहा गया कि "ऐसी किसी भी स्थिति में जहां सुरक्षा परिषद, अपने पांच स्थायी सदस्यों में मतैक्य की कमी के कारण अंतर्राष्ट्रीय शांति और सुरक्षा बनाए रखने के लिए आवश्यक कार्यवाही करने में विफल रहती है, महासभा तुरंत उस मामले पर विचार करेगी और ऐसी कोई भी अनुशंसा कर सकती है जो वह अंतर्राष्ट्रीय शांति और सुरक्षा पुनर्स्थापित करने के लिए आवश्यक समझे।"
- इसके साथ ही संयुक्त राष्ट्र के महासचिव की उसके राष्ट्रसंघ के समकक्ष की तुलना में बहुत अधिक प्रतिष्ठा है। कोफी अन्नान (1997-2006) अपनी संघर्ष समाधान की क्षमता के लिए बहुत प्रसिद्ध हो गए थे। यहां तक कि यदि संयुक्त राष्ट्र युद्ध नहीं भी रोक पाया तो भी वह विभिन्न अवसरों पर युद्धविराम के लिए मध्यस्थता करके त्वरित समाप्ति में सफल रहा।
- वैश्विक शासन के युग में संयुक्त राष्ट्र और अधिक महत्वपूर्ण बन गया है और क्योंकि उदारीकरण, निजीकरण और वैश्वीकरण तथा पर्यावरण और अन्य ग्लोबल कॉमन्स की सुरक्षा जैसी वैश्विक चिंताओं के मुद्दों के कारण विश्व अधिक एकीकृत हो गया है।

33.7. संयुक्त राष्ट्र और राष्ट्रसंघ के बीच समानताएं :

- विश्व शांति और सामाजिक-आर्थिक विकास का समान उद्देश्य
- सुरक्षा परिषद में सदस्यों की वीटो शक्तियाँ

अपनी स्वयं की स्थायी सेना का अभाव और इस प्रकार सैनिकों के योगदान के लिए सदस्यों पर निर्भरता

साझा कमजोरियां:

- महाशक्तियों का उपकरण मात्र होने का आरोप
- पश्चिम समर्थक

VISION IAS

www.examdivision.com ExamDivision.com

- शक्तिशाली राष्ट्रों के अधीन होना

अमेरिका और यूरोप पर वित्तीय निर्भरता: संयुक्त राष्ट्र मुख्य रूप से अमेरिकी वित्त पोषण पर निर्भर है, जबकि राष्ट्रसंघ ब्रिटेन और फ्रांस पर निर्भर था।

34. 1919-29 तक का विश्व

- **तुर्की राष्ट्रवाद:** तुर्की सेवर्स की संधि (1920) से अप्रसन्न था क्योंकि उसे ग्रीस के हाथों अपना बहुत सा प्रदेश खोना पड़ा था। इस संधि के उपरांत तुर्की की जनसंख्या का एक हिस्सा ग्रीस के कब्जे वाले क्षेत्र में चला गया। इसने राष्ट्रवाद के उदय का मार्ग प्रशस्त किया और मुस्तफा कमाल पाशा ने ग्रीस को उसके कब्जे वाले इलाकों से बाहर खदेड़ दिया।
- **शांति संधियों से इटली की अप्रसन्नता:** इटली प्रथम विश्व युद्ध के बाद प्राप्त क्षेत्रीय लाभों से अप्रसन्न था। जब 1915 में मित्र देशों की ओर से सम्मिलित होने के लिए उसे राजी किया गया था तो उसे बहुत कुछ देने का वादा किया गया था। अतः जब 1922 में मुसोलिनी इटली में सत्ता में आया तो इटली ने युगोस्लाविया से फ्यूम छीन लिया। कोर्फू की घटना 1923 में घटित हुई। कोर्फू ग्रीस का एक द्वीप था। अल्बानिया और ग्रीस के बीच क्षेत्रीय विवाद के समाधान के लिए स्थापित सीमा आयोग के अंतर्गत काम कर रहे कुछ इतालवी श्रमिकों को मार दिया गया। प्रत्युत्तर में, इटली ने ग्रीस पर बमबारी की और कोर्फू पर कब्जा कर लिया और इटली ने मांगी गई क्षतिपूर्ति का भुगतान होने के बाद ही उसे छोड़ा।
- **यूरोप पर अमेरिकी युद्ध ऋण:** अमेरिका प्रथम विश्व युद्ध से बहुत लाभान्वित हुआ था। उसने खूब हथियार बेचे और मित्र शक्तियों को ऋण दिया। ब्रिटेन, फ्रांस और अन्य मित्र देशों को आशा थी कि अमेरिका उन्हें ऋण पर कुछ रियायत प्रदान करेगा। लेकिन अमेरिका ने युद्ध ऋण के पूर्ण पुनर्भुगतान की मांग जारी रखी।
- **जर्मन युद्ध क्षतिपूर्ति का प्रश्न:** ब्रिटेन और फ्रांस आर्थिक दबाव से जूझ रहे थे। उन्हें युद्ध के बाद अमेरिका का युद्ध ऋण चुकाना था और अपने यहां अवसंरचना के पुनर्निर्माण के लिए भी धन का निवेश करना था। जर्मनी भी युद्ध से तहस-नहस हो गया था और युद्ध क्षतिपूर्ति का भुगतान करना उसके लिए बहुत कठिन हो गया था। उसे उदार व्यवहार और भुगतान की जाने वाली राशि पर पुनर्विचार की आशा थी। ब्रिटेन भुगतान की शर्तें सरल करने के पक्ष में था, क्योंकि इससे जर्मन अर्थव्यवस्था में तेजी से सुधार होता, जिससे उसके लिए युद्ध क्षतिपूर्ति का भुगतान करना वास्तव में संभव होता। इसके साथ ही समृद्ध जर्मनी ब्रिटिश वस्तुओं के लिए निर्यात बाजार के रूप में काम करता। वहीं दूसरी ओर, फ्रांस कठोर नीति अपनाए हुए था और चाहता था कि जर्मनी युद्ध क्षतिपूर्ति का पूरा भुगतान करे। ऐसा दो कारणों से था। पहला, यह निकट भविष्य में जर्मनी को आर्थिक रूप से कमजोर रखने की फ्रांसीसी रणनीति थी जिससे वह फ्रांसीसी सीमाओं के लिए खतरा न पैदा कर सके। दूसरा, फ्रांस अमेरिका से लिए गए ऋणों का पुनर्भुगतान करने के लिए वास्तव में जर्मन युद्ध क्षतिपूर्ति पर निर्भर था।
- **रूसी गृह युद्ध (1918-20):** बोल्शेविकों ने सत्ता में आने के बाद दूसरे देशों में साम्यवादियों की सहायता करने के लिए अपने एजेंटों को भेजकर शेष विश्व में साम्यवादी क्रांति का निर्यात करने का प्रयास किया। इससे रूस लोकतांत्रिक शासन व्यवस्था वाले अधिकांश देशों का शत्रु बन गया। रूस में लेनिन ने क्रांति के बाद लोकतांत्रिक चुनावों के माध्यम से गठित विधानसभा को भंग कर दिया और साम्यवादी शासन की स्थापना करके सत्ता हड़प ली। यह लोकतंत्र चाहने वाले अन्य समूहों के बीच असंतोष का प्रमुख कारण बन गया। पश्चिमी राष्ट्रों और जापान ने रूसी गृहयुद्ध में बोल्शेविकों से लड़ने के लिए सेनाएँ भेजीं। यह गृहयुद्ध बोल्शेविकों और अन्य समूहों (जिन्हें व्हाइट्स के रूप में जाना जाता था) के बीच लड़ा गया। शेष यूरोप में साम्यवादी क्रांति विफल हो गई थी, लेकिन रूस में सफल रही क्योंकि बोल्शेविक गृहयुद्ध (1918-20) में विजेता के रूप में उभरे थे।

35. प्रथम विश्व युद्ध के बाद अंतर्राष्ट्रीय संबंधों में सुधार की दिशा में किए गए प्रयास

- **राष्ट्रसंघ (लीग ऑफ़ नेशन्स):** बातचीत के माध्यम से विवादों के समाधान के जरिए विश्व शांति स्थापित करने के उद्देश्य से 1920 में राष्ट्रसंघ की स्थापना की गई। सामूहिक सुरक्षा के सिद्धांत के अंतर्गत

VISION IAS

आक्रमणकारी राष्ट्र के विरूद्ध सेना का उपयोग और आर्थिक प्रतिबंध अपरिहार्य था। राष्ट्रसंघ छोटे विवादों का समाधान करने में सफल रहा परन्तु बड़ी शक्तियों की आक्रामकता की रोकथाम करने में यह विफल रहा।

- **आंग्ल-रूसी व्यापार संधि (1921):** रूसी गृहयुद्ध (1918-20) के बाद, ब्रिटेन और रूस के बीच सौहार्दपूर्ण सम्बन्ध थे। शेष यूरोप में साम्यवादी क्रांति विफल रही थी, पश्चिमी शक्तियाँ रूसी गृहयुद्ध में बोल्शेविकों को हराने में असफल रहीं थीं और रूस गृहयुद्ध से थक गया था। अब वह ब्रिटेन से निवेश और मित्रता चाहता था।
- **वाशिंगटन सम्मेलन (1921-22):** सुदूर पूर्व में बढ़ते जापानी प्रभाव को रोकने के लिए वाशिंगटन सम्मेलन अमेरिका द्वारा आयोजित किया गया था। प्रथम विश्व युद्ध के दौरान, जापान मित्र शक्तियों के पक्ष में लड़ा था और उसने चीन के कियाचाओ द्वीप और शांतुंग प्रांत पर कब्जा कर लिया था। साथ ही उसने प्रशांत महासागर में स्थित जर्मनी के अधिकार वाले सभी द्वीपों पर भी कब्जा कर लिया था। इस प्रकार, प्रथम विश्व युद्ध के बाद जापान प्रशांत क्षेत्र में अमेरिका का प्रतिद्वंद्वी बनकर उभरा था और उसने मजबूत नौसेना का विकास कर लिया था जो अमेरिकी हितों को खतरे में डाल सकती थी। वाशिंगटन सम्मेलन के माध्यम से अमेरिका जापान के साथ युद्ध और नौसैनिक प्रतिद्वंदिता रोकना चाहता था। इस सम्मेलन के बाद सहमति व्यक्त की गई कि जापान चीन के कियाचाओ द्वीप और शांतुंग प्रांत से हट जाएगा। बदले में, जापान को जर्मनी के अधिकार वाले प्रशांत महासागर के द्वीपों पर कब्ज़ा बनाए रखने की अनुमति दी गई। इसके साथ ही, ब्रिटेन, फ्रांस और अमेरिका ने जापान की सीमा के समीप नौसैनिक बेस का निर्माण न करने पर सहमति व्यक्त की। अमेरिका, जापान, ब्रिटेन और फ्रांस द्वारा चीन पर तटस्थ रहने की गारंटी दी गई। इसके साथ ही इन शक्तियों ने सुदूर पूर्व में एक-दूसरे के अधिकार क्षेत्रों का सम्मान करने पर भी सहमति वृयक्त की। यह समझौता अमेरिका, ब्रिटेन और जापान के नौसैनिक बेड़े पर सीमा आरोपित करता था जिनकी नौसेना 5:5:3 के अनुपात में होनी थी, अर्थात जापानी नौसेना ब्रिटेन और अमेरिका की नौसेना का $\frac{3}{5}$ वां भाग होती।

वाशिंगटन सम्मेलन का प्रभाव:

- हालांकि जापान की नौसेना का आकार ब्रिटेन और अमेरिका की नौसेना का 3/5 था फिर भी जापान प्रशांत क्षेत्र में सर्वोच्च शक्ति के रूप में उभरा क्योंकि जापानी नौसेना प्रशांत क्षेत्र में संकेंद्रित थी, जबकि ब्रिटेन और अमेरिका की नौसेनाएँ सभी महासागरों में फैली थीं।
- 1930 के दशक में जापान द्वारा चीन पर आक्रमण करने पर जब अमेरिका ने जापान के विरूद्ध हस्तक्षेप करने से मना कर दिया तो ब्रिटेन और फ्रांस ने भी कोई कार्यवाही नहीं की क्योंकि उन्हें लगा कि अमेरिका के बिना जापान के विरुद्ध युद्ध करने में उन्हें भारी क्षति उठानी पड़ेगी।
- **जेनोवा सम्मेलन (1922):** जेनोवा सम्मेलन ब्रिटेन द्वारा आयोजित किया गया था। निम्नलिखित समस्याओं का समाधान करना इस सम्मेलन का उद्देश्य था:
    - **फ्रांस-जर्मनी की शत्रुता:** जर्मनी फ्रांस को युद्ध क्षतिपूर्ति का भुगतान रोकने की धमकी दे रहा था।
    - **अमेरिकी युद्ध ऋण:** अमेरिका ने प्रथम विश्व युद्ध के दौरान संबद्ध मित्रशक्तियों को मुक्त रूप से ऋण दिया था और युद्ध के बाद कमजोर अर्थव्यवस्था के कारण, ब्रिटेन और फ्रांस के लिए पुनर्भुगतान करना मुश्किल हो रहा था।
    - ब्रिटेन रूस के साथ राजनयिक संबंध स्थापित करना चाहता था।

जेनोवा सम्मेलन का परिणाम: जेनोवा सम्मेलन उपरोक्त समस्याओं का समाधान करने में विफल रहा क्योंकि फ्रांस जर्मनी से पूर्ण युद्ध क्षतिपूर्ति की मांग कर रहा था। इसके साथ ही, अमेरिका ने सम्मेलन में भाग लेने से मना कर दिया और सभी ऋणों का पूर्ण भुगतान करने की मांग की। युद्ध क्षतिपूर्ति के प्रश्न पर फ्रांस द्वारा लचीलापन न दिखाने के कारण जर्मनी ने सम्मेलन का परित्याग कर दिया। रूस ने भी सम्मेलन का परित्याग कर दिया क्योंकि ब्रिटेन ने मांग की कि प्रथम विश्व युद्ध के दौरान ज़ार शासन द्वारा लिए गए युद्ध ऋणों का भुगतान बोल्शेविक करें।

जेनोवा सम्मेलन का प्रभाव

- जर्मनी और रूस ने एक अलग समझौते {**रैपलो (Rapallo) समझौता 1922**} पर हस्ताक्षर किया जिसके माध्यम से उन्होंने एक दूसरे को दी जाने वाली किसी भी युद्ध क्षतिपूर्ति को रद्द कर दिया।

VISION IAS

- फ्रांस ने 1923 में रूर क्षेत्र पर कब्जा कर लिया और लगभग 40 मिलियन पाउंड कीमत की वस्तुओं को जब्त कर लिया। रुर एक महत्वपूर्ण औद्योगिक क्षेत्र था। फ्रांस इस पर कब्ज़ा कर जर्मनी को युद्ध क्षतिपूर्ति का भुगतान करने के लिए विवश करना चाहता था। इस घटना के उपरांत वहां के जर्मन निवासियों ने निष्क्रिय प्रतिरोध का मार्ग अपनाया और वहां किसी भी प्रकार का कार्य करने से मना कर दिया। इससे न केवल फ्रांसीसी कब्जा विफल हो गया बल्कि जर्मन अर्थव्यवस्था पर भी इसका प्रभाव पड़ा। वस्तुओं की आपूर्ति में कमी के कारण जर्मनी में मुद्रास्फीति में अत्यधिक वृद्धि हुई और इस कारण जर्मन फ्रैंक का इतना अवमूल्यन हुआ कि वस्तुतः वह मूल्यहीन हो गई।
- **डेविस योजना (Dawes Plan-1924):** इस योजना का उद्देश्य रुर पर फ्रांसीसी कब्ज़े से उत्पन्न समस्याओं और इसके फलस्वरूप जर्मनी में आई गैलोपिंग मुद्रास्फीति एवं जर्मन फ्रैंक के भारी अवमूल्यन का समाधान करना था। अमेरिका ने इसका नेतृत्व किया और डेविस योजना के अंतर्गत यह सहमति व्यक्त की गई कि जर्मनी पर्याप्त समृद्ध होने तक प्रतिवर्ष उतनी ही धनराशि का भुगतान करेगा जितना वह वहन कर सकता है। लेकिन जर्मनी द्वारा भुगतान की जाने वाली कुल राशि में कोई कमी नहीं की गई। जर्मनी को अपनी अर्थव्यवस्था का पुनर्निर्माण करने के लिए अमेरिकी ऋण भी मिला। इसके साथ ही, फ्रांस ने रुर से हट जाने पर सहमति व्यक्त की। डेविस योजना सफल रही और अमेरिकी ऋणों के कारण जर्मनी की अर्थव्यवस्था सुधरने लगी। डेविस योजना के बाद अंतर्राष्ट्रीय संबंधों में सुधार आया और इसने 1925 की लोकार्नो की संधियों के लिए जमीन तैयार की।
- **लोकार्नो की संधियाँ (1925):** इसमें सम्मिलित होने वाली मुख्य शक्तियों में ब्रिटेन, फ्रांस, जर्मनी और इटली थे। पोलैंड, बेल्जियम और चेकोस्लोवाकिया इसमें शामिल होने वाले अन्य देश थे। इन संधियों को यूरोप में शांति और मित्रता के नए युग की पूर्व-संध्या के रूप में देखा गया। लोकार्नो संधियों के अंतर्गत हस्ताक्षरकर्ता देशों ने प्रथम विश्व युद्ध के बाद शांति संधि द्वारा निर्धारित सीमाओं को मान्यता प्रदान करने पर सहमति व्यक्त की। इसका अर्थ यह था कि राष्ट्रों ने एक दूसरे पर आक्रमण नहीं करने का वचन दिया और यदि किसी एक देश पर आक्रमण होता तो अन्य राष्ट्र आक्रामक देश के विरूद्ध एवं पीड़ित राष्ट्र के पक्ष में हस्तक्षेप करते। जर्मनी ने फिर से पुष्टि की कि वह वर्साय की संधि के अनुसार राइनलैंड को विसैन्यीकृत रखना जारी रखेगा।

लोकार्नो संधियों का प्रभाव

- यूरोप में इन संधियों को लोकार्नो भावना या फ्रांस और जर्मनी के बीच लोकार्नो हनीमून के रूप सराहा गया। 1926 में जर्मनी को राष्ट्रसंघ में प्रवेश करने की अनुमति दी गई,। यूरोप में आर्थिक समृद्धि आई और मित्रता का वातावरण बना। स्ट्रेसमैन (जर्मनी), ब्रियान्ड (फ्रांस) और चेम्बरलेन (ब्रिटेन) ने 1929 तक अनवरत मुलाकात की।
- **कमियाँ:** ब्रिटेन और जर्मनी ने पोलैंड और चेकोस्लोवाकिया के साथ लगी जर्मन सीमाओं की गारंटी नहीं दी। यह वह क्षेत्र था जहां विवाद होने की संभावना सर्वाधिक थी। इस समस्या की उपेक्षा करके, ब्रिटेन ने यह संदेश दिया कि यदि जर्मनी पोलैंड या चेकोस्लोवाकिया पर आक्रमण करेगा तो वह हस्तक्षेप नहीं करेगा। लोकार्नो भावना भ्रम थी, क्योंकि यह आर्थिक समृद्धि पर इतना अधिक निर्भर थी कि जब 1929 की महामंदी में आर्थिक समृद्धि का काल समाप्त हो गया तो पुरानी शत्रुताएं पुनः जागृत हो गईं।

- **केलॉग-ब्रियान्ड संधि (1928)**
  - यह अमेरिका एवं फ्रांस की अगुवाई वाली पहल थी और इसमें 65 देशों ने भाग लिया था जिन्होंने राष्ट्रीय नीति के उपकरण के रूप में युद्ध की निंदा करते हुए एक समझौते पर हस्ताक्षर किया।
  - **प्रभाव**: इस संधि का बहुत महत्व नहीं था क्योंकि आक्रमणकारी के विरूद्ध प्रतिबंधों का कोई उल्लेख नहीं किया गया था। जापान ने भी इस समझौते पर हस्ताक्षर किया था लेकिन शीघ्र ही उसने 1931 में मंचूरिया पर आक्रमण कर दिया।
- **यंग योजना (1929):** इसका उद्देश्य जर्मन युद्ध क्षतिपूर्ति के प्रश्न का समाधान करना था। इस योजना के अनुसार, भुगतान की जाने वाली कुल राशि पूर्व के 6600 मिलियन पाउंड से घटाकर 2000 मिलियन पाउंड कर दी गई। इसके साथ ही, इस नव निर्धारित राशि का 59 वर्षों के दौरान भुगतान किया जाना

VISION IAS

था। अमेरिका द्वारा संचालित यंग योजना का कारण यह था कि डेविस योजना ने जर्मनी द्वारा भुगतान की जाने वाली कुल राशि अपरिवर्तित छोड़ दी थी और जर्मनी उक्त राशि में कमी चाहता था। इसके अतिरिक्त फ्रांस भी लोकार्नो भावना के कारण अब समझौता करने के लिए तैयार था।

36. 1929 के बाद की घटनाएं

- वर्ष 1929 विश्व इतिहास में एक महत्वपूर्ण प्रस्थान बिंदु है क्योंकि 1929 के बाद यूरोप ने द्वितीय विश्व युद्ध की दिशा में आगे बढ़ना आरंभ कर दिया था। स्ट्रेसमान की मृत्यु (1929), वॉल स्ट्रीट का क्रैश होना (1929) और 1933 में हिटलर का सत्तासीन होना (वह चांसलर बन गया) जैसी 1929 के दौरान और बाद में होने वाली घटनाओं के कारण लोकार्नो भावना समाप्त हो गई।

36.1. 1929 का आर्थिक संकट

- 1929 का आर्थिक संकट जर्मनी में भारी बेरोजगारी लाया। 1932 तक जर्मनी में 6 मिलियन बेरोजगार पुरुष थे। इससे नाजियों के विकास को बढ़ावा मिला और वाईमर गणतंत्र का पतन हो गया। नाजियों के उदय के साथ, जर्मनी के प्रति फ्रांसीसी व्यवहार कठोर हो गया क्योंकि नाजियों ने चरम राष्ट्रवादी प्रचार के आधार पर सफलता प्राप्त की थी। नाज़ी सभी जर्मन क्षेत्रों को राइख के अंतर्गत लाना चाहते थे।

36.2. लॉसेन सम्मेलन (1932)

- इस सम्मेलन में ब्रिटेन और फ्रांस ने जर्मनी को शेष बचे युद्ध क्षतिपूर्ति का भुगतान करने की जिम्मेदारी से मुक्त कर दिया। ऐसा इसलिए किया गया था क्योंकि महामंदी के चलते 1932 तक छह मिलियन जर्मन लोग बेरोजगार हो चुके थे।

36.3. विश्व निःशस्त्रीकरण सम्मेलन

- विश्व निःशस्त्रीकरण सम्मेलन 1932-33 में आयोजित किया गया। राष्ट्रसंघ की प्रसंविदा के अंतर्गत सभी सदस्यों ने शस्त्रीकरण में कमी करने पर सहमति व्यक्त की, लेकिन वर्साय की संधि के अनुसार केवल जर्मनी का निःशस्त्रीकरण होना था। जर्मनी ने मांग की कि या तो सभी का निःशस्त्रीकरण होना चाहिए या शस्त्रीकरण के मामले में उसे कम से कम फ्रांस के समान स्थिति दी जानी चाहिए। ब्रिटेन और इटली जर्मनी के साथ सहानुभूति रखते थे। अंत में, जब फ्रांस टस से मस नहीं हुआ, तो हिटलर ने जर्मनी को इस सम्मेलन के साथ-साथ राष्ट्रसंघ से भी बाहर निकाल लिया (दोनों 1933 में)।

37. फ्रांस-जर्मनी संबंध (1919-33)

वर्साय की संधि के लिए होने वाली बातचीत के दौरान फ्रांस ने कठोर संधि पर बल दिया। फ़्रांस ने भविष्य में जर्मन आक्रमण को रोकने के लिए निम्नलिखित तीन रणनीतियों का अनुसरण किया:-

- **जर्मनी को आर्थिक और सैन्य रूप से कमजोर रखना।** इसमें निम्नलिखित तत्व सम्मिलित थे:
    - फ्रांस ने इस बात का दबाव बनाया कि जर्मनी युद्ध क्षतिपूर्ति का पूर्ण भुगतान करे।
    - जर्मनी को युद्ध क्षतिपूर्ति का भुगतान करने पर बाध्य करने के लिए रुर पर कब्जा (1923): रुर पर कब्जे का ब्रिटेन ने प्रबल विरोध किया क्योंकि ब्रिटेन जर्मनी के साथ उदार व्यवहार करने के पक्ष में था। ब्रिटेन का मानना था कि समृद्ध जर्मनी यूरोप की स्थिरता और ब्रिटेन के निर्यात के लिए बेहतर होगा।
    - 15 वर्षों तक सार क्षेत्र के कोयले का उपयोग।
    - फ्रांस ने वर्साय की संधि का प्रारूप तैयार करने के दौरान जर्मनी के निःशस्त्रीकरण और राइनलैंड के विसैन्यीकरण पर बल दिया था।

VISION IAS

जब ब्रिटेन जिनेवा प्रोटोकॉल से पीछे हट गया और संयुक्त राज्य अमेरिका ने अलगाव की नीति को पुनः अपना लिया और किसी भी युद्ध की स्थिति में फ्रांस को समर्थन देने का अग्रिम वचन देने से मना कर दिया तो फ्रांस ब्रिटेन और अमेरिका से नाराज हो गया।

- **संधियों पर हस्ताक्षर**: भविष्य में किसी भी जर्मन आक्रमण की रोकथाम के लिए फ्रांस ने 1921 से लेकर 1927 तक यूगोस्लाविया, चेकोस्लोवाकिया, पोलैंड और रोमानिया के साथ संधियों पर हस्ताक्षर किया। इन संधियों को सामूहिक रूप से **लिटिल एंटेंट** के रूप में जाना जाता है। लेकिन **लिटिल एंटेंट** कमज़ोर भागीदारों के कारण बहुत महत्वपूर्ण नहीं था। फ्रांस को व्यग्रतापूर्वक रूस जैसे सहयोगी की आवश्यकता थी क्योंकि इससे जर्मनी को एक साथ दो सीमाओं पर व्यस्त रखना संभव होता। लेकिन, रूस इस समय साम्यवादियों के अधीन था जो जर्मनी की तुलना में अधिक खतरनाक समझा जा रहा था। सोवियत रूस ने फ्रांस के साम्यवादियों की सहायता करने के लिए गुप्त एजेंट भेजकर 1917 में अपनी साम्यवादी क्रांति का निर्यात करने का प्रयास किया था।

- **मेल-मिलाप / मैत्री**: डेविस योजना (1924), लोकार्नो की संधियाँ (1925), यंग योजना (1929) और लॉसेन सम्मेलन (1932) आदि के माध्यम से मेल-मिलाप और मैत्री का प्रयास किया गया। स्ट्रासमान 1923 से लेकर 1929 तक जर्मन विदेश मंत्री था। वह बहुत ही महत्वपूर्ण नेता था और प्रथम विश्व युद्ध के बाद के मुश्किल दशक के दौरान उसने जर्मन विदेश नीति का संचालन किया था। फ़्रांस और जर्मनी के बीच के संबंध डेविस योजना (1924) तक कड़वे बने रहे। डेविस योजना के बाद वाईमर गणतंत्र के अंतर्गत जर्मनी में आर्थिक सुधार हुआ और परिणामस्वरूप दोनों राष्ट्रों के बीच तनाव कम हुआ। मेल-मिलाप के दृष्टिकोण के साथ समस्या यह थी कि लोकार्नो भावना के विकास के पीछे का व्यक्ति स्ट्रासमान भी प्रथम विश्व युद्ध के बाद जर्मन इच्छाओं की पूर्ति और जर्मन शिकायतों का निवारण चाहता था। स्ट्रासमान के नेतृत्व में जर्मनी अभी भी निम्नलिखित व्यवस्था प्राप्त करना चाहता था, हालांकि इन्हें प्राप्त करने के लिए उसने आक्रामक रुख नहीं अपनाया:
    - पोलिश गलियारा और डेनजिंग बंदरगाह
    - ऑस्ट्रिया के साथ संघ का निर्माण
    - चेकोस्लोवाकिया से सुडेटनलैंड
    - वर्साय की संधि का संशोधन अर्थात जर्मनी द्वारा दी जाने वाली क्षतिपूर्ति राशि में कमी, निःशस्त्रीकरण खंड की समाप्ति और राइनलैंड का पुनर्सैन्यीकरण।

 ©Vision IAS

www.examdivision.com ExamDivision.com

राइनलैंड

1929 के संकट के बाद, नाजियों का प्रभाव बढ़ गया और इसलिए जर्मनी में चरम राष्ट्रवाद भी बढ़ गया। फ्रांस का व्यवहार जर्मनी के विरूद्ध कठोर हो गया और उसने सोवियत रूस जैसे संभावित भावी सहयोगियों के निकट आना आरंभ किया:

- **ऑस्ट्रिया जर्मन सीमा-शुल्क संघ (1931)**: इसका प्रस्ताव जर्मनी ने किया था और इसका अत्यधिक आर्थिक महत्व था। फ्रांस ने हेग में अंतर्राष्ट्रीय स्थायी न्यायालय में अपील की, जिसने सीमा-शुल्क संघ के विरूद्ध निर्णय दिया।
- **विश्व नि:शस्त्रीकरण सम्मेलन (1932-33)**: सम्मेलन में जर्मनी ने सभी देशों द्वारा नि:शस्त्रीकरण के लिए सहमति न व्यक्त करने पर फ्रांस के समान मात्रा में हथियार रखने के अधिकार की मांग की। फ़्रांस

ने इस पर असहमति व्यक्त की और परिणामस्वरूप हिटलर के नेतृत्व में जर्मनी निःशस्त्रीकरण सम्मेलन और राष्ट्र संघ दोनों से बाहर निकल गया।

38. ब्रिटेन-सोवियत रूस संबंध (1919-33)

निम्नलिखित बिंदुओं के अंतर्गत इस संबंध को निरूपित किया जा सकता है:

- 1907 के ब्रिटेन-रूस समझौते से द्विपक्षीय तनाव में कमी आई और अधिक से अधिक व्यापार एवं निवेश का मार्ग प्रशस्त हुआ।
- **लेफ्ट-राईट विभाजन:** यह कहा जा सकता है कि जब भी लेबर पार्टी सत्ता में होती थी तो दोनों देशों के मध्य द्विपक्षीय संबंध अच्छे होते थे और जब कंजर्वेटिव सत्ता में आते थे तो सम्बन्ध रूखे हो जाते थे। ऐसा वामपंथी रूस और दक्षिणपंथी कंजर्वेटिवों की विचारधारा में अंतर के कारण होता था।
- रूसी गृहयुद्ध (1918-20) में ब्रिटेन की भागीदारी।
- **व्यापार समझौता (1921):** लेनिन रूसी अर्थव्यवस्था को बढ़ावा देने के लिए व्यापार और निवेश चाहता था। इसके साथ ही इस समझौते द्वारा एक प्रकार से साम्यवादी सरकार को ब्रिटेन से मान्यता प्राप्त हो गई।
- **जेनोवा सम्मेलन (1922):** यहां ज़ार शासन द्वारा उठाए गए युद्ध कालीन ऋणों के प्रश्न पर रूस और ब्रिटेन के बीच दरार चौड़ी हो गई।
- **अस्थिर राजनयिक संबंध:** 1927 में ब्रिटेन और भारत में कोमिंटर्न की गतिविधियों के संबंध में पता चलने पर ब्रिटेन की कंज़र्वेटिव सरकार ने रूस के साथ राजनयिक संबंध समाप्त कर दिए। 1929 में लेबर पार्टी की सरकार ने सोवियत रूस के साथ राजनयिक संबंध पुन: स्थापित किए।
- **हिटलर का उदय:** 1933 में हिटलर के चांसलर बनने के बाद, दोनों (ब्रिटेन-रूस) राष्ट्रों के बीच सकारात्मकता में वृद्धि हुई। हिटलर के अधीन जर्मनी ने रूसी सीमाओं के लिए खतरा पैदा किया और साथ ही नाजी प्रचार साम्यवादियों की आलोचना में बहुत अतिवादी था। ऐसा इसलिए था क्योंकि जर्मनी में साम्यवादी नाजियों के प्रमुख विरोधी समूह थे और 1917 के बाद, बोल्शेविकों ने जर्मनी में साम्यवादी क्रांति उकसाने का प्रयास किया था।

39. सोवियत रूस-जर्मनी संबंध (1919-33)

1930 तक रूस और जर्मनी के बीच संबंध सामान्यत: अच्छे थे, इसका श्रेय स्ट्रेसमैन के नेतृत्व को दिया जा सकता है। वहीं दूसरी ओर, सोवियत रूस कम से कम एक पूंजीवादी देश के साथ अच्छे संबंध रखना चाहता था। इनके संबंधों में निम्नलिखित महत्वपूर्ण बिंदु थे:

- **व्यापार संधि (1921):** 1921 में सोवियत रूस और जर्मनी के बीच एक व्यापार संधि पर हस्ताक्षर किया गया और आगे चलकर जर्मन उद्योगपतियों को रूस में व्यापारिक रियायतें मिलीं।
- **रैपलो समझौता 1922:** इसके निम्नलिखित प्रावधान थे:
    - रूस और जर्मनी के बीच पूर्ण राजनयिक संबंध पुन: स्थापित किया गया।
    - रूस और जर्मनी के बीच विशेष संबंध।
    - एक दूसरे को भुगतान की जाने वाली किसी भी युद्ध क्षतिपूर्ति को रद्द कर दिया गया।
    - **जर्मन शस्त्रीकरण आरंभ हुआ:** जर्मनी को वायुयान और गोला-बारूद के निर्माण के लिए रूस में कारखानों का निर्माण करने की अनुमति दी गई। इससे जर्मनी के लिए शस्त्रीकरण से संबंधित वर्साय की संधि की धारा को विफल बनाना संभव हुआ। जर्मन अधिकारियों ने ऐसे हथियारों का उपयोग सीखने के साथ रूस में प्रशिक्षण लेना आरंभ किया जो वर्साय की संधि के कारण जर्मनी में निषिद्ध थे।
    - रूस और जर्मनी के बीच इस सौहार्द्र के कई कारण थे। रूस और जर्मनी दोनों पोलैंड को कमजोर रखना चाहते थे। रूस चाहता था कि भविष्य में पश्चिम से होने वाले किसी भी आक्रमण के विरुद्ध

VISION IAS

जर्मनी मध्यस्थ राज्य के रूप में कार्य करे। इसका कारण यह था कि पश्चिमी शक्तियाँ साम्यवादी रूस की विरोधी थीं। इसके साथ ही, रूस कम से कम एक पूंजीवादी देश के साथ अच्छे संबंध रखना चाहता था।

- **बर्लिन की संधि (1926)**: इसने रैपलो समझौते का नवीनीकरण 1931 तक के लिए कर दिया। जर्मनी ने सोवियत रूस पर किसी अन्य शक्ति द्वारा आक्रमण किए जाने पर तटस्थ रहने का वचन दिया। इसके साथ ही दोनों ने सहमति व्यक्त की कि उनमें से कोई भी एक दूसरे के विरुद्ध आर्थिक प्रतिबंधों का उपयोग नहीं करेगा।
- **1930 के दशक के बाद:**
    - 1930 के दशक के बाद दोनों देशों के मध्य संबंधों में नकारात्मकता आ गई क्योंकि रूसी जर्मनी में नाजियों के बढ़ते प्रभाव के विरूद्ध थे और नाजी साम्यवादियों के कट्टर विरोधी थे।
    - रूस ने ऑस्ट्रिया-जर्मनी सीमा-शुल्क संघ (1931) के विचार का विरोध किया क्योंकि उसने इसे बढ़ते जर्मन राष्ट्रवाद के संकेत के रूप में देखा जिससे भविष्य में रूसी सीमाओं के लिए खतरा पैदा हो सकता था।
    - स्टालिन धीरे-धीरे पोलैंड, ब्रिटेन और फ्रांस की ओर झुकने लगा था।
    - 1934 के बाद, हिटलर ने रूस के साथ संबंध सुधारने का प्रयास किया। उसने 1939 में रूस के साथ अनाक्रमण संधि पर हस्ताक्षर किया।
- **अनाक्रमण संधि (1939):** इस संधि पर रूस और जर्मनी ने हस्ताक्षर किया था और दोनों ने एक दूसरे पर आक्रमण नहीं करने का वचन दिया था। जर्मनी द्वारा पोलैंड पर आक्रमण करने पर सोवियत रूस के तटस्थ बने रहने की स्थिति में सोवियत रूस और जर्मनी के बीच पोलैंड को आधा-आधा विभाजित करने का एक अनुच्छेद भी इस समझौते में शामिल था। यह हिटलर की एक रणनीतिक जीत थी क्योंकि इसने ब्रिटेन को सोवियत संघ के साथ गठबंधन पर हस्ताक्षर करने से रोक दिया। चूंकि ब्रिटेन ने पोलैंड की सुरक्षा की गारंटी दी थी अतः इस प्रकार के गठबंधन से पोलैंड की रक्षा करना ब्रिटेन के लिए और अधिक आवश्यक हो गया था।

40. सोवियत संघ और फ्रांस के परस्पर सम्बन्ध (1919-33)

निम्नलिखित कारणों से 1930 तक दोनों के बीच अप्रिय सम्बन्ध थे:

- **वर्साय की संधि:** फ्रांसीसी विरोध के कारण वर्साय की संधि वार्ताओं में रूस को आमंत्रित नहीं किया गया था। ऐसा इसलिए था क्योंकि 1917 के पश्चात् बोल्शेविकों ने फ़्रांस के कम्युनिस्टों को फ़्रांस में क्रांति के लिए उकसाने का प्रयास किया था।
- **रूसी गृह युद्ध (1918-20):** फ़्रांस ने बोल्शेविकों के साथ युद्धरत व्हाइट्स के पक्ष में अपनी सैनिक टुकड़ियां भेजी थीं।
- **रूस-पोलैंड युद्ध (1920):** फ़्रांस ने पोलैंड की सहायता के लिए अपनी सैनिक टुकड़ियाँ भेजी थीं जो बाद में रूसियों को वारसा (पोलैंड की राजधानी) से वापिस धकेलने में सक्षम रहीं।
- **लिटिल एंटेंट (1921-27):** लिटिल एंटेंट के अंतर्गत फ़्रांस-पोलैंड संधि (1912 में हस्ताक्षरित) जितनी जर्मनी के विरुद्ध थी उतनी ही यह रूस के विरुद्ध भी थी।

1930 के पश्चात् जर्मनी में नाजियों के उदय के कारण फ़्रांस-रूस सम्बन्धों में सकारात्मक वृद्धि हुई थी।

40.1. वर्साय की संधि

प्रमुख विषय 1:
वर्साय की संधि जर्मनी के गौरव को आहत करती है और नाजीवाद के विकास को गति प्रदान करती है।

VISION IAS

- यह संधि “तीन बड़ों” अर्थात अमेरिका, ब्रिटेन और फ्रांस को संतुष्ट करती हुई प्रतीत होती है, क्योंकि उनकी दृष्टि में यही शांति थी। इन्हें यह लगता था कि यह संधि जर्मनी को निर्बल तो बनाए रखेगी, परन्तु इतना सशक्त भी रखेगी कि वह समाजवाद के प्रसार को रोक सके। साथ ही यह फ़्रांसीसी सीमा को जर्मन आक्रमण से सुरक्षित भी रखेगी। राष्ट्रसंघ जैसे संगठन की स्थापना भी हो गयी थी जिससे विश्व भर में युद्ध की समाप्ति हो जाएगी।
- परन्तु, इसके कारण सम्पूर्ण जर्मनी में क्रोध व्याप्त हो गया, क्योंकि ऐसा लग रहा था कि एक राष्ट्र के रूप में जर्मनी के साथ अनुचित व्यवहार हुआ था। इन सबसे अधिक जर्मनी पर युद्ध के कारण के रूप में दोषारोपण करने वाले अनुच्छेद और उसके परिणामस्वरूप इस संधि में लगाये गए आर्थिक दंड पर जर्मनी में घृणा व्याप्त थी। जर्मनी के सामान्य नागरिकों का यह मत था कि अगस्त 1914 में की गई जर्मन सरकार की गलतियों के लिए उन्हें दंडित किया जा रहा था, जबकि सरकार ने युद्ध की घोषणा की थी न कि लोगों ने।
- संधि की अपमानजनक शर्तें जर्मनी को वर्षों तक भड़काती रहीं और इसने विभिन्न प्रकार से नाजीवाद के उदय में सहायता प्रदान की।

41. संयुक्त राज्य अमेरिका की विदेश नीति

प्रमुख विषय 2:

- संयुक्त राज्य ने अमेरिका पृथकतावाद की नीति अपनाया और यूरोपीय राजनीतिक मामलों से दृष्टि फेर लिया।
- अमेरिका की आर्थिक मंदी विश्व आर्थिक संकट में तब्दील हो गयी जिसने शीघ्र हीं कई यूरोपीय देशों को अपने चपेट में ले लिया और आने वाले वर्षों में यूरोप के राजनीतिक निर्णयों को प्रभावित किया।

- **वाशिंगटन सम्मेलन (1921-22):** सुदूर पूर्व में जापान के बढ़ते प्रभाव को रोकने के लिए अमेरिका द्वारा वाशिंगटन सम्मेलन का आयोजन किया गया था। वाशिंगटन सम्मेलन के आयोजन के पीछे प्रमुख उद्देश्य यह था कि इसके द्वारा अमेरिका जापान के साथ युद्ध और नौसैनिक दौड़ को रोकना चाहता था। इस सम्मेलन के पश्चात् यह सहमति बनी कि जापान किआचाओ द्वीप (Kiachow Island) और चीन के शानतुंग प्रान्त से सेना हटा लेगा और उसके बदले में जापान को जर्मन प्रशांत द्वीपों को अपने पास रखने की अनुमति प्राप्त हो गयी। इसके अतिरिक्त ब्रिटेन, फ़्रांस और अमेरिका; जापान की सीमा के समीप नौसैनिक बेस न बनाने के लिए भी सहमत हो गए। अमेरिका, जापान, ब्रिटेन और फ्रांस द्वारा चीन की तटस्थता की गारंटी दी गई। इन शक्तियों ने सुदूर पूर्व में एक दूसरे की संपत्तियों का सम्मान करने के लिए भी अपनी सहमति दी। इस समझौते में अमेरिका, ब्रिटेन और जापान के समुद्री बेड़ों की सीमा भी निर्धारित की गई, जिसे क्रमशः 5:5:3 के अनुपात में रखा जाना था। इसके कारण अमेरिका और ब्रिटेन के मध्य तनाव उत्पन्न हुआ, क्योंकि अंग्रेज ब्रिटिश नौसेना पर सीमा लगाए जाने से प्रसन्न नहीं थे। 1930 में जापान ने वाशिंगटन समझौते के प्रति अपनी प्रतिबद्धता की पुष्टि की लेकिन शीघ्र ही इसने नौसेना पर लगाई गयी सीमा का उल्लंघन किया।
- **पृथकतावाद की नीति:** प्रथम विश्व युद्ध में अमेरिका बहुत अधिक उलझा हुआ था। युद्ध के पश्चात् रिपब्लिकन को सत्ता प्राप्त हुई और उन्होंने पृथकतावाद की नीति का अनुसरण किया। रिपब्लिकन के अंतर्गत अमेरिका ने राष्ट्रसंघ में सम्मिलित नहीं होने का निर्णय लिया। इसने किसी भी शांति संधि की पुष्टि नहीं की और फ़्रांस की सीमाओं की गारंटी देने से भी मना कर दिया। पृथकतावाद की इस नीति का कारण यह था कि अमेरिकी युद्ध से तंग आ गए थे और उन्हें यूरोपीय राष्ट्रों के प्रति संदेह भी था कि वे शांतिपूर्वक रहेंगे। वे नहीं चाहते थे कि अमेरिका किसी भी प्रकार के सैन्य विवाद में सम्मिलित हो। पुनः उन्होंने राष्ट्रसंघ के विचार को भी अस्वीकार कर दिया, क्योंकि वे इसे एक अतिरिक्त सरकार के रूप में देखते थे। इसी आधार पर उन्होंने फ़्रांस और ब्रिटेन द्वारा तैयार किये गये जेनेवा प्रोटोकॉल का विरोध किया, जो सब के लिए सामूहिक सुरक्षा प्रदान कर सकता था। इसके अंतर्गत सदस्य राष्ट्रों को “राष्ट्रसंघ के पक्ष में उनकी सार्वभौमिकता पर महत्त्वपूर्ण सीमाएं लगाने की सहमति देनी थी।”

VISION IAS

- पृथकतावाद की नीति के परिणामस्वरूप इसने फासीवादी शासकों द्वारा 1930 के दशक में किए गए विभिन्न आक्रामक गतिविधियों के प्रति निष्क्रियता का प्रदर्शन किया। जापान द्वारा 1931 में मंचूरिया पर किये गए आक्रमण के विरुद्ध अमेरिका ने किसी भी तरह की कार्यवाही नहीं की। यहाँ तक कि ब्रिटेन और फ्रांस ने भी कोई कार्यवाही नहीं की। जब जापान ने मंचूरिया से बाहर निकलने से मना कर दिया तो राष्ट्रसंघ कुछ भी नहीं कर सका।
- **वाल स्ट्रीट के ध्वस्त होने एवं इसके विश्व आर्थिक संकट में परिवर्तित होने के कारण:**
  - **यूरोपीय देशों का युद्ध ऋण:** यूरोपीय देश युद्ध ऋण चुका पाने में कठिनाई का अनुभव कर रहे थे। ब्रिटेन और फ्रांस को अमेरिका से ऋण माफ़ी की अपेक्षा थी क्योंकि अमेरिका को प्रथम विश्व युद्ध से बहुत लाभ प्राप्त हुआ था। इसने यूरोप के पूर्व-निर्यात बाजारों पर अधिकार कर लिया था। परन्तु अमेरिका ने पूर्ण भुगतान पर बल दिया। जब तक फ्रांस ने रूर पर अधिकार नहीं किया था, अमेरिका मित्रराष्ट्रों द्वारा अमेरिका के ऋण का भुगतान करने और जर्मनी द्वारा मित्रराष्ट्रों को युद्ध क्षतिपूर्ति किये जाने में कोई सम्बन्ध नही देख पा रहा था। इसके अतिरिक्त अमेरिका ने विदेशी व्यापार शुल्कों की दरें बहुत ऊंची रखी थीं। इन कारकों ने यूरोपीय अर्थव्यवस्था को आघात पहुंचाया।
  - यद्यपि अमेरिका ने प्रथम विश्व युद्ध के पश्चात् पृथकतावाद की नीति पर लौटने का प्रयास किया, परन्तु शीघ्र ही उसे यह आभास हुआ कि वह अपनी सीमाओं के बाहर होने वाली घटनाओं से आँख नहीं चुरा सकता क्योंकि इन घटनाओं से उसकी अर्थव्यवस्था प्रभावित हो रही थी। 20वीं शताब्दी का दूसरा दशक यूरोपीय अर्थव्यवस्था के लिए बहुत समृद्ध था अतः अमेरिका ने यूरोप में अपना निवेश और व्यापार बढ़ाने का प्रयास किया। यूरोप की आर्थिक समृद्धि और राजनीतिक स्थिरता अमेरिका के व्यापारिक हितों, निवेशों और मित्रराष्ट्रों को दिए गये ऋणों की वापसी के लिए बहुत ही महत्त्वपूर्ण थी और अमेरिका यूरोपीय राष्ट्रों में घट रही घटनाओं की उपेक्षा भी नहीं कर सकता था। 1923 में रूर औद्योगिक क्षेत्र पर फ्रांस के अधिग्रहण से जर्मनी में मुद्रास्फीति तेजी से बढ़ने लगी, क्योंकि जर्मनी के श्रमिकों ने अपने निष्क्रिय प्रतिरोध के रूप में काम करना बंद कर दिया था। परिणामस्वरूप जर्मन अर्थव्यवस्था में मांग और आपूर्ति के असंतुलन द्वारा हुए फ्रैंक के तीव्र अवमूल्यन ने जर्मन अर्थव्यवस्था को उथलपुथल कर दिया था। फ्रांस को अमेरिकी ऋणों को चुकाना कठिन लग रहा था। इस घटना के पश्चात् ही अमेरिका को जर्मनी द्वारा युद्ध क्षतिपूर्ति और मित्रराष्ट्रों द्वारा अमेरिकी ऋण चुकाए जाने में सम्बन्ध समझ में आया। इस प्रकार अमेरिका डेविस योजना (1924) के माध्यम से जर्मनी की सहायता के लिए आगे आया, जिसने जर्मनी को युद्ध क्षतिपूर्ति भुगतान में सहायता की और फ्रांस ने रूर पर अधिकार छोड़ने के लिए सहमति दे दी। जब एक विवाद के कारण मैक्सिको ने अमेरिकी स्वामित्व वाले तेल के कुओं का अधिग्रहण करने की धमकी दी तब मैक्सिको में संकट की स्थिति उत्पन्न हो गई। अमेरिकी सरकार ने हस्तक्षेप किया और समझौता हो गया। इस प्रकार अपनी सीमाओं के बाहर बढ़ रहे आर्थिक हितों के कारण अमेरिका को अपनी पृथकतावाद की नीति से हटना पड़ा।
    - **ऋणों का मकड़ जाल:** जैसेकि पहले चर्चा की जा चुकी है, अमेरिका ने प्रथम विश्व युद्ध के समय मित्र राष्ट्रों को धन उधार दिया था। मित्र शक्तियाँ स्वयं अमेरिका से प्राप्त अपने ऋण चुकाने के लिए जर्मनी द्वारा की जाने वाली युद्ध क्षतिपूर्ति पर निर्भर थीं। इस प्रकार जब जर्मनी ने युद्ध क्षतिपूर्ति के भुगतान में चूक करना प्रारम्भ किया तो अमेरिका को जर्मनी की सहायता के लिए *डेविस योजना* (1924) और *यंग योजना* (1929) के माध्यम से ऋण प्रदान करने पड़े। इस प्रकार से ऋणों के मकड़जाल से बन गये थे, जहाँ अमेरिका जर्मनी को युद्ध क्षतिपूर्ति के लिए ऋण देता था, जिससे वह ब्रिटेन और फ्रांस को भुगतान करता था, जिससे फिर ये देश अमेरिका को ऋण वापसी के रूप में उसी धन का भुगतान करते थे। संयुक्त राज्य अमेरिका के संकट का प्रमुख कारण ऋणों का यह मकड़ जाल था जो उसे तेजी से भीषण आर्थिक मंदी की ओर ले जा रहा था। एक बार जब अमेरिका जर्मनी को और अधिक ऋण देने की स्थिति में नहीं था तो उसने यूरोपीय देशों से अपने ऋणों के तुरंत भुगतान की मांग की जिससे पूरे यूरोपीय राष्ट्रों की अर्थव्यवस्था चरमराने लगी। 1929 की वैश्विक आर्थिक मंदी का अमेरिका ही उत्तरदायी था।

प्रमुख विषय 3: 1930 के दशक में जर्मनी, इटली और जापान की धुरी शक्तियों की फासीवादी शासनों द्वारा आक्रामक गतिविधियों में वृद्धि देखी गई। दमदार आक्रामकता और चतुर कूटनीति के एक चतुर मिश्रण के

VISION IAS

माध्यम से धुरी शक्तियाँ पड़ोसी देशों के छोटे-छोटे क्षेत्रों को हथियाने के साथ-साथ अपनी सैन्य शक्तियों का भी विस्तार कर रहे थे।

42. अंतर्राष्ट्रीय संबंध (1933-39)

Italy, Germany, and Japan expand their territory

Italian Expansion	German Expansion	Japanese Expansion

Mussolini wanted to build a New Roman Empire in Africa. In 1935, the Italian Army Invaded Ethiopia, then known As Abyssinia.	In March of 1938, after the annexation of Austria by Germany (known as the *Anschluss*), German officers marched into Austria. This change, which was more of an absorbing of Austria into Germany than an equal unification, lasted until the end of the war.	In 1931, the Japanese army invaded resource rich Manchuria. When the Japanese prime minister protested, he was assassinated by military officials. From that point forward, the military controlled the country.

- **भूमिका:** 1933-39 की अवधि इटली, जर्मनी और जापान जैसे फासीवादी शासनों द्वारा शासित आक्रामकता की अवधि थी। यह ऐसा समय था जिसमें जर्मनी ने वर्साय की संधि का उल्लंघन करना प्रारम्भ कर दिया था। लोकार्नो की भावना जो ब्रिटेन, फ्रांस और जर्मनी के बीच सम्बन्धों का सकारात्मक लक्षण थी, 1929 की महान आर्थिक मंदी और स्ट्रेसमैन (जर्मन विदेश मंत्री, जिन्होंने जर्मनी और फ्रांस के बीच सामंजस्य स्थापित किया था) की मृत्यु के पश्चात् समाप्त हो गयी थी। 20वीं शताब्दी के तीसरे दशक में जापान, इटली और जर्मनी में राष्ट्रवाद अपने चरम पर पहुंच गया था।
- **घटनाक्रम को संक्षेप में इस प्रकार बताया जा सकता है:**
    - जापान ने मंचूरिया पर आक्रमण किया (1931) और राष्ट्रसंघ जापान को पीछे हटने के लिए विवश नहीं कर सका।
    - 1933 में जर्मनी ने स्वयं को विश्व निःशस्त्रीकरण सम्मेलन से बाहर कर लिया। 1933 में ही जापान और जर्मनी ने अपने आप को राष्ट्रसंघ से बाहर कर लिया। धीरे-धीरे राष्ट्र संघ के अधिकार घटते रहे और 1939 तक यह एक मृतप्राय संगठन बन गया था।
    - 1935 में जर्मनी ने अनिवार्य सैन्य सेवा प्रारम्भ कर दी।
    - जर्मनी द्वारा अनिवार्य सैन्य सेवा प्रारम्भ किए जाने के विरोध में इटली, ब्रिटेन और फ्रांस के बीच स्ट्रेसा फ्रंट (1935) बना।
    - 1935 के आंग्ल-जर्मन नौसैनिक समझौते से जर्मनी को पनडुब्बियाँ बनाने की अनुमति प्राप्त हो गई और स्ट्रेसा फ्रंट समाप्त हो गया।
    - मुसोलिनी ने अबीसीनिया पर आक्रमण कर दिया (1935)।
    - 1936 में राइनलैंड का पुनर्सैन्यीकरण।
    - रोम-बर्लिन धुरी (1936)

VISION

- ○ हिटलर और जापान के बीच 1936 में कोमिंटर्न विरोधी समझौते पर हस्ताक्षर
- ○ स्पेन का गृह युद्ध (1936)।
- ○ जापान ने 1937 में चीन पर पूर्ण रूप से आक्रमण कर दिया।
- ○ अंसचल्स (Anschluss)-हिटलर ने 1938 में ऑस्ट्रिया पर अधिकार कर लिया।
- ○ म्युनिख सम्मेलन (1938) – हिटलर को चेकोस्लोवाकिया से इस वचन पर सुडेटेनलैंड प्राप्त हो गया कि वह चेकोस्लोवाकिया के किसी अन्य क्षेत्र पर अपना दावा नहीं करेगा।
- ○ हिटलर ने म्यूनिख संधि को भंग करके चेकोस्लोवाकिया पर अधिकार कर लिया।
- ○ हिटलर ने डैंनज़िंग के स्वतंत्र शहर की मांग की। पोलैंड इसके विरुद्ध था। ब्रिटेन और फ़्रांस ने जर्मनी के आक्रमण की स्थिति में पोलैंड की सहायता करने के लिए सहमति प्रदान कर दी।
- ○ हिटलर ने 1939 में रूस के साथ परस्पर आक्रमण न करने के लिए संधि की और पोलैंड पर आक्रमण कर दिया।
- ○ ब्रिटेन ने जर्मनी के विरुद्ध युद्ध की घोषणा कर दी और द्वितीय विश्व युद्ध का आरम्भ हो गया।

- **जापानी आक्रमण:** इस अवधि में जापान की तीन महत्वपूर्ण आक्रामक गतिविधियाँ उल्लेखनीय हैं। इसने 1931 में मंचूरिया पर आक्रमण किया, 1933 में चीन के उत्तरी-पूर्वी भाग पर आक्रमण किया और 1937 में चीन पर सम्पूर्ण आक्रमण का आदेश दे दिया, जिसके परिणामस्वरुप द्वितीय चीन-जापान युद्ध (1937-45) हुआ। यह युद्ध द्वितीय विश्व युद्ध में परिणत हो गया, जो 1945 तक चला।

जापान का प्रसार

- **मंचूरिया पर आक्रमण (1931):** यह समझना महत्त्वपूर्ण है कि जापान ने मंचूरिया पर आक्रमण (1931) क्यों किया? आर्थिक मंदी के कारण जापान अत्याधिक आर्थिक तनाव से ग्रस्त था। इसके निर्यात नाटकीय ढंग से कम हो गये थे और भरपूर फसल के उत्पादन के कारण चावल के मूल्यों में कमी आ गयी थी। जापान के लोग अत्याधिक आर्थिक कठिनाइयों से जूझ रहे थे। मंचूरिया में च्यांग काई शेक का प्रभाव भी बढ़ रहा था। जिसके कारण मंचूरिया में जापानी हितों के लिए संकट उत्पन्न हो रहा था। रूस-जापान युद्ध (1904-05) के पश्चात् जब जापान को दक्षिणी मंचूरिया और आर्थर बन्दरगाह पर विशेष अधिकार प्राप्त हुए थे तो जापान ने मंचूरिया के उद्योगों और आधारभूत ढांचे के विकास की योजनाओं में (विशेषरूप से दक्षिणी मंचूरिया में) निवेश किया था। (*1931 तक मंचूरिया के रेलवे और

बैंकिंग व्यवस्था पर जापान का नियन्त्रण हो गया था)। अतः सेना ने जापानी सरकार की आपत्तियों की अवहेलना करते हुए मंचूरिया पर आक्रमण कर दिया।

- **मंचूरिया पर आक्रमण के परिणाम:** जापान ने मंचूरिया को स्वाधीन मान्चुको राज्य के रूप में घोषित कर दिया और वहां एक कठपुतली सरकार की स्थापना कर दी। राष्ट्रसंघ का मत था कि मंचूरिया क्षेत्र के प्रशासन को उसके नियन्त्रण में लाया जाना चाहिए, परन्तु जापान ने इसकी उपेक्षा की। संघ कुछ भी नहीं कर सका क्योंकि अमेरिका जापान से युद्ध नहीं चाहता था और ब्रिटेन तथा फ़्रांस ने बिना अमेरिका के समर्थन के किसी भी कार्यवाही से मना कर दिया। इस प्रकार से यह पश्चिमी शक्तियों द्वारा जापान के तुष्टीकरण का एक कार्य बन गया।
- **उत्तरी-पूर्वी चीन पर आक्रमण (1933):** 1933 में जापान चीन के उत्तरी-पूर्वी क्षेत्रों की ओर बढ़ा। इसका कोई औचित्य नहीं था और यह विशुद्ध रूप से एक आक्रामक कार्यवाही थी। 1935 तक जापान कुओमिन्तांग सरकार (KMT) और माओ-ज़ेडोंग (माओत्से तुंग) की चीनी कम्युनिस्ट पार्टी (CCP) के बीच छिड़े गृहयुद्ध का लाभ उठाते हुए चीन के बहुत बड़े क्षेत्र पर अधिकार करने में सफल रहा था।
- **चीन पर आक्रमण (1937):** 1936 में जर्मनी के साथ कोमिनटर्न विरोधी संधि पर हस्ताक्षर करने के पश्चात् जापान ने चीन पर आक्रमण करने की योजना बनाई। जापान ने पीकिंग में चीनी और जापानी सैनिकों के बीच हुई छोटी सी घटना को आक्रमण के लिए एक बहाना बना लिया। 1938 तक शंघाई और नानकिंग (च्यांग काई शेक की राजधानी) जापानियों के नियन्त्रण में आ गये थे। परन्तु, इससे सम्पूर्ण विजय प्राप्त नहीं हुई थी। ऐसा इसलिए हुआ क्योंकि 1936 तक CCP और KMT के बीच जापानी आक्रमण का प्रतिरोध करने के लिए एक युद्धविराम समझौते पर सहमति हुई थी। इससे पूर्व च्यांग काई शेक ने जापानियों से निबटने के स्थान पर माओ को हराने पर अपना ध्यान केन्द्रित कर रखा था जिससे 1936 तक की जापानी सफलता की व्याख्या हो जाती है। इसके अतिरिक्त रूस ने भी चीन की सहायता की, परन्तु वह इसमें पूरी तरह सम्मिलित नहीं हुआ क्योंकि वह स्वयं भी जापान से पूर्णतः उलझना (चौतरफा युद्ध) नहीं चाहता था।
- **निष्कर्ष:** द्वितीय विश्व युद्ध की पूर्व संध्या पर पूर्वी चीन का अधिकांश क्षेत्र जापान के नियन्त्रण में था, वहीं च्यांग काई शेक और माओ का नियन्त्रण मध्य और पश्चिमी भागों पर था। यह तर्क दिया जा सकता है कि यद्यपि राष्ट्रसंघ ने जापान की निंदा की परन्तु यह इतना सशक्त नहीं था कि जापान के विरुद्ध कोई कठोर कार्यवाही कर सके, क्योंकि:
    - अमेरिका पृथकतावाद की नीति का अनुसरण कर रहा था।
    - रूस (संयुक्त समाजवादी सोवियत गणतन्त्र-USSR) जापान के साथ पूर्णतः उलझना नहीं चाहता था।
    - ब्रिटेन और फ़्रांस हिटलर से ही निबटने में अत्यधिक व्यस्त थे।

मुसोलिनी की विदेश नीति:

- **1919-24:** मुसोलिनी ने 1922 में सत्ता ग्रहण की और तुरंत ही एक आक्रामक विदेश नीति लागू करनी प्रारम्भ कर दी। उसने **1923 की कोर्फू घटना** (*पहले चर्चा की जा चुकी है) को लेकर ग्रीस पर बमबारी की, जहाँ इटली द्वारा ग्रीस को युद्ध की सम्पूर्ण क्षतिपूर्ति के लिए विवश किया गया। यहीं पर राजदूतों के सम्मेलन में राष्ट्रसंघ के मत को अस्वीकृत कर दिया गया। **फ्यूम:** 1924 में इटली ने फ्यूम पर आक्रमण किया और उसपर अधिकार कर लिया। 1920 के पश्चात् से फ्यूम युगोस्लाविया और इटली के बीच विवाद की जड़ बना हुआ था। एक समझौते के रूप में रपालो की संधि (1920) पर हस्ताक्षर किए गये, जिसमें फ्यूम के स्वतंत्र नगर को इटली और फ़्रांस द्वारा संयुक्त रूप से उपयोग किये जाने का प्रावधान किया गया था। 1920-24 तक इसका अस्तित्व एक स्वतंत्र नगर का था। इसके पश्चात् इटली ने अपने सैनिक बल वहां भेज दिए और युगोस्लाविया ने इटली द्वारा फ्यूम के अधिग्रहण को मान्यता प्रदान कर दी।
- **1924-34:** इस अवधि में इटली की विदेश नीति की दो महत्वपूर्ण चिंताएं थीं। **पहली** – इटली-फ़्रांस प्रतिद्वंद्विता, क्योंकि फ़्रांस युगोस्लाविया का सहयोगी था (*लिटिल एंटेन्ट* को स्मरण करें) और

VISION IAS

www.examdivision.com ExamDivision.com

भूमध्यसागर और बाल्कन में इटली भी प्रभाव बनाने के लिए फ़्रांस के साथ प्रतिस्पर्धा कर रहा था। **दूसरी**, इटली को यह आशंका थी कि जर्मनी आस्ट्रिया पर अधिकार कर सकता है, जो इटली के उत्तर-पूर्व में था और इटली और जर्मनी के बीच एक तटस्थ राज्य का कार्य करता था।

- **लोकार्नो सन्धियाँ और इटली:** इटली 1925 की लोकार्नो संधि में प्रतिभागी था। लोकार्नो सन्धियों पर राष्ट्रसंघ के अधिकार-क्षेत्र से बाहर हस्ताक्षर किये गये थे:
    - जर्मनी ने राइनलैंड के असैन्यीकरण की पुन: पुष्टि की थी।
    - इसके अतिरिक्त, जर्मनी, फ़्रांस और बेल्जियम ने एक दूसरे की सीमाओं का सम्मान करने का वचन दिया। इटली और ब्रिटेन ने इसका उत्तरदायित्व लिया था। तीनों में से (फ़्रांस, बेल्जियम, जर्मनी) किसी के द्वारा भी आक्रमण की स्थिति में अन्य सभी आक्रमण के पीड़ित की सहायता करेंगे।
    - जर्मनी, पोलैंड और चेकोस्लोवाकिया के बीच एक समझौता हुआ था, जिसमें सीमा विवादों के मुद्दों के लिए मध्यस्थता न्यायाधिकरण या स्थायी अंतर्राष्ट्रीय न्यायालय द्वारा मध्यस्थता की अनुमति थी। परन्तु जर्मनी ने पोलैंड और चेकोस्लोवाकिया के साथ अपनी सीमाओं की कोई गारंटी नहीं दी थी। पोलैंड या चेकोस्लोवाकिया में से यदि किसी पर भी जर्मनी का आक्रमण हुआ तो फ़्रांस ने उनकी सहायता के लिए अपनी सहमति दी थी। परन्तु जब लोकार्नो संधि में प्रदान की गयी गारंटी के अनुरूप इटली-आस्ट्रिया की सीमाओं की गारंटी की कोई व्यवस्था नहीं दी गई तो इटली को बहुत निराशा हुई।
- **बाल्कन क्षेत्र में इटली:** इस दशक में इटली ने अल्बानिया, बुल्गारिया और ग्रीस से अच्छे सम्बन्ध बना कर बाल्कन क्षेत्र में अपना प्रभाव बढ़ाने का प्रयास किया। अल्बानिया जोकि इटली का दक्षिणी पड़ोसी था, दोनों के बीच परस्पर आर्थिक और सैन्य संधियों के कारण इटली के आर्थिक प्रभाव में आ गया। अल्बानिया युगोस्लाविया का विरोधी था। ऐसा इसलिए था; क्योंकि सर्बिया, जो अब युगोस्लाविया का अंग था प्रथम बाल्कन (1912) युद्ध के पश्चात् अल्बानिया का क्षेत्र चाहता था। परन्तु शांति समझौते के समय अल्बानिया को एक स्वाधीन राज्य बना दिया गया था। अल्बानिया पर इटली के प्रभाव से इटली को एड्रियाटिक सागर पर नियन्त्रण प्राप्त हो गया था।

www.examdivision.com ExamDivision.com

- **इटली और ब्रिटेन:** इटली ने ब्रिटेन से भी, विशेषकर उपनिवेशों के प्रश्न पर अच्छे सम्बन्ध विकसित करने का प्रयास किया। उसने इराक के मोसुल प्रान्त पर ब्रिटेन के दावे का समर्थन किया, जिसमें टर्की भी अपना हित देखता था। राष्ट्रसंघ ने इस विवाद में ब्रिटेन का पक्ष लिया और 1926 में टर्की इस निर्णय से सहमत हो गया। इसके बदले में ब्रिटेन ने सोमालीलैंड इटली को दे दिया। इसके अतिरिक्त इटली ने सोवियत संघ (USSR) के साथ 1933 में अनाक्रमण संधि पर हस्ताक्षर कर लिए। इस प्रकार से इस दशक में इटली ने स्वयं को आक्रामक विदेशी नीति के स्थान पर कूटनीति में अधिक व्यस्त रखा।
- **1934 के पश्चात्:** प्रारम्भिक विरोध के पश्चात् मुसोलिनी का झुकाव हिटलर की ओर हो गया और इटली ने कई आक्रामक कार्यवाहियाँ कीं।
- **आस्ट्रिया, जर्मनी और इटली:** मुसोलिनी ने व्यापारिक समझौतों पर हस्ताक्षर करके आस्ट्रिया की नाजी-विरोधी सरकार के समर्थन द्वारा नाज़ी जर्मनी के विरुद्ध आस्ट्रिया को सशक्त करने का प्रयास किया। 1934 में नाजी प्रदर्शनकारियों ने आस्ट्रिया के चांसलर की हत्या कर दी। इसके पश्चात् मुसोलिनी ने जर्मनी द्वारा आस्ट्रिया पर अधिकार करने के किसी भी प्रयास को पहले से ही रोकने के लिए इटली-आस्ट्रिया सीमा पर सैन्यबल भेज दिए। इसके साथ ही जर्मनी द्वारा आस्ट्रिया को अपने नियन्त्रण में लेने का पहला प्रयास विफल रहा और फ़्रांस-इटली के सम्बन्धों में सुधार हुआ।
- **स्ट्रेसा मोर्चा (1935):** इसका उद्देश्य लोकार्नो संधियों की पुष्टि करना तथा आस्ट्रिया की स्वतंत्रता को घोषित करना था। इसके हस्ताक्षरकर्ता जर्मनी द्वारा भविष्य में वर्साय संधि में परिवर्तन करने के किसी भी प्रयास का विरोध करने के लिए भी सहमत हुए थे। 1935 में हिटलर के कांस्क्रिपशन (अनिवार्य सैन्य सेवा) निर्णय की निंदा करने के लिए इटली के साथ फ़्रांस और ब्रिटेन भी सम्मिलित हो गये। यह अनिवार्य सैन्य सेवा का निर्णय वर्साय की संधि का उल्लंघन था। इसके अतिरिक्त ब्रिटेन और फ़्रांस ने इटली की सीमाओं की गारंटी भी दी। इससे मुसोलिनी को बहुत राहत प्राप्त हुई, जो आस्ट्रिया में जर्मनी की महत्वाकांक्षा के प्रति आशंकित था।
- **आंग्ल-जर्मन नौसेना समझौता (1935)** के अंतर्गत हिटलर को पनडुब्बियाँ बनाने की अनुमति प्राप्त हो गयी। इस घटना के पश्चात् मुसोलिनी का ब्रिटेन से विश्वास उठ गया। फ़्रांस भी ब्रिटेन से निराश था और आंग्ल-जर्मन समझौते से स्ट्रेसा मोर्चा भंग हो गया। हिटलर के लिए यह कूटनीतिक विजय थी। इसके पश्चात् हिटलर की सफलता से मुसोलिनी बहुत प्रभावित हुआ और हिटलर समर्थक बन गया।
- **अबीसीनिया पर आक्रमण (1935):** इसके तुरंत बाद मुसोलिनी ने अबीसीनिया (इथियोपिया) पर आक्रमण कर दिया। इस आक्रमण के निम्नलिखित प्रमुख कारण थे:
  - 1896 में अबीसीनिया के साथ हुए युद्ध में इटली को जो क्षति पहुंची थी वह इसका प्रतिशोध लेना चाहता था। मुसोलिनी सोचता था कि इस विजय से देश के भीतर उसकी प्रतिष्ठा में वृद्धि होगी।
  - मुसोलिनी स्थानीय समस्याओं से जन सामान्य का ध्यान हटाना चाहता था और अपनी लोकप्रियता में वृद्धि करना चाहता था। यह स्मरण रखा जाना चाहिए कि इटली अभी तक महान वैश्विक मंदी के प्रभाव का सामना कर रहा था।
  - इटली को एक निर्यात बाजार प्राप्त हो जायेगा और उसे अपनी आर्थिक समस्याओं से जूझने में सहायता मिलेगी।

स्ट्रेसा मोर्चे को पुनर्जीवित करने के प्रयास में ब्रिटेन और फ़्रांस ने अबीसीनिया संकट के लिए मीडिया में इटली की निंदा नहीं की। इसके अतिरिक्त यह प्रथम अवसर था जब राष्ट्रसंघ ने किसी देश को आक्रामक घोषित कर उसके विरुद्ध आर्थिक प्रतिबन्ध लगाने का निर्णय लिया हो। परन्तु इटली को प्रतिबंधित करने का निर्णय आधे मन से किया गया और यह औपचारिकता मात्र बन कर रह गई। इटली के आर्थिक प्रतिबंधों में कोयला, इस्पात और तेल के निर्यात को प्रतिबंधित नहीं किया गया था। ये वस्तुएँ इटली में प्रमुखता से आयात होती थीं और इनके व्यापार को प्रतिबंधित किये बिना कोई भी प्रतिबंध सशक्त नहीं हो सकते थे। वे इटली को अबीसीनिया से बाहर जाने के लिए विवश करने में विफल रहे। ब्रिटेन और फ़्रांस, दोनों ही आर्थिक और सैन्य रूप से उस युद्ध के लिए तैयार नहीं थे जो इटली के तेल और कोयला निर्यात पर प्रतिबन्ध लगाने के कारण हो सकता था। इस प्रकार ब्रिटेन और फ़्रांस ने तुष्टीकरण की नीति का अनुसरण किया। राष्ट्रसंघ अबीसीनिया की स्वतंत्रता सुनिश्चित करने में विफल रहा। राष्ट्रसंघ और इसकी सामूहिक सुरक्षा की अवधारणा की साख में कमी आई। प्रतिबन्ध इतने कठोर नहीं थे फिर भी मुसोलिनी इनसे क्रोधित था। स्ट्रेसा मोर्चा मृतप्राय हो गया था और मुसोलिनी का झुकाव हिटलर की ओर होने लगा था। हिटलर द्वारा इटली के आक्रमण की निंदा न करने से उसे इटली में मुसोलिनी के रूप में एक सहयोगी प्राप्त करने का अवसर प्राप्त हो गया था। इसके बदले में मुसोलिनी ने 1938 में जर्मनी द्वारा आस्ट्रिया पर किए गए अधिकार के विरुद्ध कोई आपत्ति नहीं की।

VISION IAS

- **स्पेन के गृह युद्ध में इटली की भूमिका (1936):** स्पेन का गृह युद्ध दक्षिण और वाम पंथों के बीच हुआ था। दक्षिण पंथ का नेता फ्रैंको था। मुसोलिनी ने स्पेन में अपनी सेनाएं फ्रैंको के पक्ष में युद्ध लड़ने के लिए भेजीं। इसके लिए मुसोलिनी ने इस बहाने का उपयोग किया कि वह यूरोप में साम्यवाद के प्रसार को रोकना चाहता था। परन्तु फ्रैंको को समर्थन देने के पीछे उसके वास्तविक उद्देश्य इस प्रकार थे:
  - फ्रांस को धमकाने के लिए मुसोलिनी स्पेन में अपना नौसैनिक अड्डा बनाना चाहता था।
  - मुसोलिनी यूरोप में एक और फासीवादी राज्य चाहता था जो उसके सहयोगी के रूप में कार्य करे और शक्ति संतुलन इटली के पक्ष में झुक जाए।
- **रोम-बर्लिन धुरी:** 1936 में मुसोलिनी ने रोम-बर्लिन धुरी की घोषणा के साथ ही हिटलर से हाथ मिला लिया। इसका अर्थ यह था कि यूरोप के सभी शांतिप्रिय देश इटली और जर्मन गठबन्धन की काल्पनिक रेखा से निर्मित धुरी के चारों ओर घूमते रहेंगे। इस प्रकार से इटली और जर्मनी का मुख्य उद्देश्य जितना संभव हो सके उतने राज्यों को इस गठबन्धन व्यवस्था के प्रभाव के अंतर्गत लाना था।
- **कोमिन्टर्न विरोधी समझौता:** 1937 में इटली कोमिन्टर्न विरोधी समझौते में सम्मिलित हो गया जिसमें अब जापान, इटली और जर्मनी सदस्य थे। इस समझौते पर हस्ताक्षर करने से इटली के लोगों के बीच मुसोलिनी की लोकप्रियता घट गयी क्योंकि जनसामान्य इसे अंतर्राष्ट्रीय मामलों में एक आक्रामक दिखावे के रूप में देखता था। इटली की जनता को यह भय था कि कहीं मुसोलिनी इटली को एक और युद्ध में न धकेल दे।
- **म्यूनिख सम्मेलन (1938):** इसके परिणामस्वरूप जर्मनी को जर्मन जनसंख्या वाला क्षेत्र सुडेटनलैंड (चेकोस्लोवाकिया) प्राप्त हुआ। सम्मेलन में भाग लेने के फलस्वरूप घरेलू मोर्चे पर मुसोलिनी की लोकप्रियता में वृद्धि हुई क्योंकि यह सम्मेलन युद्ध से बचाव का प्रतीक था।
- **अल्बानिया पर आक्रमण (1939):** मुसोलिनी ने 1939 में अल्बानिया पर आक्रमण कर दिया। यह एक अनावश्यक आक्रामक कार्यवाही थी। इसका कारण यह था कि अल्बानिया पहले से ही इटली के आर्थिक प्रभाव में था तथा दोनों देशों के बीच मित्रवत सम्बन्ध थे और इसके अधिग्रहण से कोई वास्तविक लाभ भी नहीं मिलने वाला था। यहाँ इसका विशेष उद्देश्य केवल हिटलर की सफलताओं के समकक्ष पहुंचना था जिसने हाल ही (1938) में आस्ट्रिया पर अधिकार किया था। हिटलर के साथ लोकप्रियता की इस दौड़ में मुसोलिनी पिछड़ा हुआ नहीं दिखना चाहता था तथा वह उसके समकक्ष स्थिति प्राप्त करने की अभिलाषा रखता था।
- **इस्पात का समझौता (Pact of Steel- 1939):** यह समझौता इटली और जर्मनी के बीच किया गया था। इस संधि के द्वारा इटली पूर्ण रूप से जर्मनी का सहयोगी बन गया था और युद्ध की स्थिति में उसने पूर्ण सैन्य समर्थन देने का वचन दिया था।

42.1. एडोल्फ हिटलर और नाजी

चित्र: नाज़ी समर्थकों के साथ हिटलर

©Vision IAS

- 1933-39 तक की घटनाओं का आगे विवरण देने से पहले इस प्रश्न का उत्तर देना प्रासंगिक है कि "हिटलर के उद्देश्य क्या थे?"

42.1.1. हिटलर के उद्देश्य

- हिटलर 1933 में चांसलर बन गया था। हिटलर ने यह पहले ही स्पष्ट कर दिया था कि यदि नाजी पार्टी सत्ता में आई तो उसके उद्देश्य क्या होंगे। हिटलर जर्मनी को एक महान शक्ति बनाना चाहता था और उसकी प्रतिष्ठा को पुनः स्थापित करना चाहता था। उसके उद्देश्यों के पहले समूह में निम्नलिखित लक्ष्यों को रखा जा सकता है:
    - वर्साय की संधि को समाप्त करना।
    - शक्तिशाली सेना का निर्माण करना।
    - सभी जर्मन मूल के लोगों को थर्ड राइख़ के अंतर्गत लाने के लिए आस्ट्रिया एवं पोलैंड और चेकोस्लोवाकिया के कुछ भागों का अधिग्रहण करना, इन दोनों क्षेत्रों में काफी बड़ी मात्रा में जर्मन जनसंख्या अल्पसंख्यकों के रूप में निवास करती थी।
    - सार क्षेत्र, डेनजिंग बन्दरगाह और पोलैंड गलियारे को वापस प्राप्त करना।
- चूँकि इनमें से अधिकांश उद्देश्यों को 1938 तक बिना किसी युद्ध के प्राप्त कर लिया गया था तो अब प्रश्न यह उठता है कि द्वितीय विश्व युद्ध को क्यों रोका नही जा सका। यह प्रश्न हमें हिटलर के लक्ष्यों के दूसरे समूह की ओर ले जाता है, जिन पर विद्वानों में कुछ असहमति है। ये उद्देश्य इस प्रकार थे:
    - लेबेन्स्रम (Lebensraum अर्थात् रहने का स्थान): कुछ विद्वानों का तर्क है कि आस्ट्रिया और चेकोस्लोवाकिया एवं पोलैंड के कुछ भागों पर अधिकार का लक्ष्य, हिटलर के लक्ष्यों का आरम्भ मात्र था, उसके पश्चात् उसका उद्देश्य सम्पूर्ण चेकोस्लोवाकिया और पोलैंड पर अधिकार करना था। वह रूस में यूराल पर्वत तक अधिकार करना चाहता था। जर्मनी के इन मंसूबों के भय से रूस ने अपने कई कारखानों को यूराल के पूर्व में स्थानांतरित कर दिया। इन क्षेत्रों पर जर्मनी के अधिग्रहण से जर्मनी को **लेबेन्स्रम या रहने का स्थान** प्राप्त हो जाता। इससे जर्मनी की खाद्य सुरक्षा भी सुनिश्चित हो जाती और यह ऐसे क्षेत्र का कार्य करता, जहाँ भविष्य में बढ़ी हुई जर्मन जनसंख्या को बसाया जा सकता था। इस प्रकार की योजना का एक अतिरिक्त लाभ साम्यवाद का विनाश भी होता।
    - अगला चरण था- अन्य यूरोपीय शक्तियों के अफ़्रीकी उपनिवेशों पर विजय और अटलांटिक महासागर में नौसैनिक अड्डों की स्थापना।
- कुछ विद्वानों का तर्क है कि हिटलर एक विश्व युद्ध नहीं, अपितु पोलैंड के साथ सीमित युद्ध चाहता था। हिटलर को यह पता नहीं था कि ब्रिटेन पोलैंड की रक्षा करने के वचन के प्रति गम्भीर है। चेकोस्लोवाकिया की तुलना में पोलैंड सैन्य रूप से कमजोर था और जब हिटलर ने चेकोस्लोवाकिया पर अधिकार किया तो ब्रिटेन ने तुष्टीकरण की नीति का अनुसरण किया। इससे पहले म्यूनिख सम्मेलन (1938) में ब्रिटेन ने सुडेटनलैंड को वस्तुतः हिटलर को भेंट में दे दिया था। यदि ब्रिटेन जर्मन विस्तार को रोकना चाहता तो पोलैंड की तुलना में चेकोस्लोवाकिया एक बेहतर सहयोगी हो सकता था।

42.1.2. हिटलर की सफलताएँ

- **विश्व निःशस्त्रीकरण सम्मेलन (1932-33)**: जब फ़्रांस शस्त्रीकरण में जर्मनी को समान स्थिति दिए जाने पर सहमत नहीं हुआ तो हिटलर ने जर्मनी को विश्व निःशस्त्रीकरण सम्मेलन से अलग कर लिया। ब्रिटेन जर्मनी की मांग के प्रति सहानुभूति रखता था, क्योंकि उसे जर्मन मांग उचित लगती थी। इसमें जर्मनी की एक कुटनीतिक विजय थी, क्योंकि इस सम्मेलन के बाद हिटलर को जर्मनी का पुनः शस्त्रीकरण करने का बहाना मिल गया था।

VISION IAS

www.examdivision.com

- **पोलैंड के साथ दस वर्षीय अनाक्रमण संधि (1934):** पोलैंड सदा से ही जर्मनी की चालों के प्रति सशंकित था। उसे डर था कि जर्मनी पोलिश गलियारे को वापस लेने का प्रयास करेगा, जिसमें निम्नलिखित क्षेत्र सम्मिलित थे:

जैसा कि मानचित्र से स्पष्ट है, पोलिश गलियारे ने पूर्वी प्रशा को जर्मनी के शेष भागों से अलग कर दिया था और यह स्थिति जर्मनी की असंतुष्टि का कारण बनी। मित्र राष्ट्रों द्वारा युद्ध उद्देश्य के रूप में किये गए वादे के अनुसार बाल्टिक सागर तक पहुँच प्रदान करने के लिए वर्साय की संधि में पोलैंड को पोलिश गलियारा प्रदान किया गया था। पोलिश गलियारा प्राप्त हो जाने के पश्चात् पोलिश लोगों द्वारा किये गए दमन के कारण इस क्षेत्र से अल्पसंख्यक जर्मन लोगों का अत्यधिक पलायन हुआ। इस क्षेत्र की जनसंख्या में पोलिश लोग बहुसंख्यक थे। चूँकि पोलिश गलियारा पोलैंड को बाल्टिक सागर तक पहुंच प्रदान करता था अतः पोलैंड की आर्थिक स्वतंत्रता के लिए पोलिश गलियारा बहुत महत्वपूर्ण था। डेनजिंग शहर पोलैंड और जर्मनी दोनों ही से स्वतंत्र था। इस दस वर्षीय अनाक्रमण संधि के प्रभाव निम्नलिखित थे :

  - ब्रिटेन ने इसे हिटलर की शांतिपूर्ण भावना के प्रमाण के रूप में लिया।
  - इस संधि ने लिटिल एंटेट (लघु सुदृढ़ संघ) को नष्ट कर दिया, जिस पर सहयोगियों के एक समूह के रूप में फ्रांस, युगोस्लाविया, चेकोस्लोवाकिया, रोमानिया और पोलैंड ने हस्ताक्षर किए थे। जर्मनी के आक्रमण की स्थिति में निवारक के रूप में लिटिल एंटेन्ट पोलैंड पर बहुत अधिक निर्भर था।
  - इस संधि में चेकोस्लोवाकिया और आस्ट्रिया के विरुद्ध जर्मन आक्रमण की स्थिति में पोलिश तटस्थता की गारंटी दी गई थी। इस प्रकार यह जर्मनी की रणनीतिक जीत थी। उसका इरादा पहले चेकोस्लोवाकिया से सुडेटनलैंड लेना और फिर आस्ट्रिया पर अधिकार करना था। पोलैंड को संघर्ष से बाहर रख कर उसने अपने इन लक्ष्यों की प्राप्ति की दिशा में अपनी स्थिति को सुदृढ़ कर लिया।
  - इस संधि ने फ्रांस और रूस के सम्बन्धों में सुधार किया क्योंकि दोनों ही जर्मनी की महत्वाकांक्षाओं से खतरा अनुभव करते थे।

- **सार क्षेत्र (1935):** वर्साय की संधि के अंतर्गत यह वादा किया गया था कि 15 वर्ष पश्चात् (1920 से) सार में जनमत संग्रह कराया जायेगा। तब तक इसकी कोयला खदानों का उपयोग फ्रांस द्वारा किया जायेगा। लीग ऑफ़ नेशन्स के मैंडेट कमीशन ने सफलता पूर्वक जनमत संग्रह आयोजित किया और जब 90% लोगों ने जर्मनी के पक्ष में मत दिया तो उसे यह क्षेत्र सौंप दिया गया। पोलैंड के साथ गैर-

आक्रामक संधि (1934) के पश्चात् हिटलर ने फ़्रांस को शांत करने के लिए कहा कि सार के हस्तांतरण के पश्चात् फ़्रांस और जर्मनी के सभी गिले-शिकवे समाप्त हो गये हैं।

- **कांस्क्रिपशन (Conscription-1935)**: कांस्क्रिपशन का अर्थ अनिवार्य सैन्य सेवा है। वर्साय की संधि में जर्मनी द्वारा इसे आरम्भ किये जाने पर प्रतिबन्ध लगा दिया गया था। परन्तु हिटलर ने 1935 में अनिवार्य सैन्य सेवा प्रारम्भ कर दी। ऐसा करने के पीछे उसका बहाना था कि ब्रिटेन ने अभी ही अपनी वायु सेना की शक्ति में वृद्धि की है और फ़्रांस ने अनिवार्य सैन्य सेवा की अवधि 12 महीने से बढ़ा कर 18 महीने कर दी है। यहाँ यह स्पष्ट है कि फ़्रांस और ब्रिटेन भी भविष्य की किसी भी सम्भावित आक्रामकता का सामना करने के लिए अपनी सेना को तैयार कर रहे थे। अनिवार्य सैन्य सेवा प्रारम्भ करने के पश्चात् हिटलर ने घोषणा की कि वह 6 लाख की संख्या में सैन्यबल तैयार करेगा। यह पुनः वर्साय की संधि का उल्लंघन था, जिसमें इसकी सीमा 1 लाख सैनिक निर्धारित की गयी थी। ब्रिटेन, फ़्रांस और इटली जो हिटलर की चालों के प्रति सशंकित थे, उन्होंने अपने आप को 1935 में स्ट्रेसा मोर्चे (Stresa Front) के रूप में संगठित कर लिया, जिसने हिटलर की अनिवार्य सैन्य सेवा की निंदा की और आस्ट्रिया पर अधिकार करने की किसी भी जर्मन योजना के विरुद्ध आस्ट्रिया की सीमाओं की रक्षा करने की गारंटी दी।
- **ब्रिटिश-जर्मन नौसैनिक संधि (1935):** यह फिर से हिटलर की कूटनीतिक जीत थी, क्योंकि इसके परिणामस्वरूप स्ट्रेसा मोर्चे को भंग (1935) कर दिया गया था। ब्रिटेन अपने सहयोगियों से परामर्श किये बिना ही इस समझौते पर आगे बढ़ गया था। इस संधि के अंतर्गत हिटलर ने जर्मन नौसेना को ब्रिटेन की नौसेना के 35% तक सीमित करने का प्रस्ताव रखा। इस संधि पर सहमत होने के पीछे ब्रिटेन का यह विचार था कि जब जर्मनी ने अनिवार्य सैन्य सेवा आरम्भ कर ही दी है तो इस संधि के माध्यम से अब ब्रिटेन जर्मनी के शस्त्रीकरण को नियंत्रित करने में सफल हो जाएगा। चूँकि ब्रिटेन युद्ध नहीं चाहता था अतः उसके अनुसार एक शांत जर्मनी सुनिश्चित करने का यह सर्वश्रेष्ठ उपाय था। ब्रिटिश-जर्मन नौसैनिक संधि के प्रभाव से ही जर्मनी के शस्त्रीकरण में अत्यधिक वृद्धि हुई। 1938 तक, जर्मनी के पास 8 लाख एक्टिव और रिज़र्व सैनिक, 5000 वायुयान, 47 यु-बोट (पनडुब्बियाँ) और 21 विशाल पोत थे, जिनमे युद्ध-पोत, क्रूजर और डिस्ट्रॉयर थे।
- **राइनलैंड का पुनः सैन्यीकरण (1936):** ब्रिटेन और फ़्रांस के एबीसीनिया के संकट में व्यस्त होने का लाभ उठाते हुए हिटलर ने राइनलैंड में सैन्यबल भेज दिया। यह वर्साय संधि का और लोकार्नो संधियों (1925) में स्ट्रेसमेन की वचनबद्धता का उल्लंघन था।
- **रोम-बर्लिन धुरी (1936):** यह इटली और जर्मनी के बीच एक संधि थी। इसका आशय यह था कि यूरोप के सभी शांतिप्रिय देश इटली और जर्मनी के मध्य एक काल्पनिक रेखा के इर्द-गिर्द घुमते रहेंगे।
- **कोमिंटर्न विरोधी संधि (1936)**: यह गठबंधन बनाने की दिशा में एक कदम था। जर्मनी और जापान इसके मूल हस्ताक्षरकर्ता थे। 1937 में इटली भी इस कोमिंटर्न विरोधी संधि में सम्मिलित हो गया। इस गठबंधन का लक्ष्य सम्बन्धित देशों में साम्यवाद के प्रसार को रोकना था। यह फ़्रांस और ब्रिटेन के लिए एक संकेत भी था कि सदस्यों का आक्रामक रुख रूस की ओर अधिक था न की फ़्रांस और ब्रिटेन की ओर।
- **स्पेन का गृह युद्ध (1936):** जर्मनी ने फ्रैंको के पक्ष में युद्ध में भाग लिया। हिटलर ने स्पेन पर बमबारी का आदेश दिया, जिसके परिणामस्वरूप बड़ी संख्या में निर्दोष नागरिकों को जान गंवानी पड़ी। इससे ब्रिटेन और फ़्रांस भयभीत हो गये और इस प्रकार के किसी भी विनाशक युद्ध को टालने के लिए हिटलर को प्रसन्न रखने का प्रयास करने लगे।
- **आस्ट्रिया के साथ अंसचल्स (Anschluss) (1938)**: अंसचल्स का अर्थ है संघ। आस्ट्रिया में लाखों की संख्या में जर्मन निवास करते थे। वर्साय की संधि में जर्मनी और आस्ट्रिया के एकीकरण को प्रतिबंधित कर दिया गया था। 1931 में जर्मनी ने इस एकीकरण की दिशा में पहला कदम आस्ट्रिया-जर्मनी के मध्य सीमा शुल्क संघ की स्थापना करने के सुझाव के रूप में उठाया। फ़्रांस ने अंतर्राष्ट्रीय न्यायालय में अपील

VISION IAS

www.examdivision.com ExamDivision.com

की, जिसने सीमा शुल्क एकीकरण के विरुद्ध निर्णय दिया। रूस और इटली भी सीमा शुल्क एकीकरण के विरुद्ध थे क्योंकि यह जर्मन राष्ट्रवाद का प्रतीक था। 1934 में हिटलर ने आस्ट्रिया पर अधिकार करने का पहला प्रयास किया। इस प्रयास को इटली ने विफल कर दिया, क्योंकि जब आस्ट्रिया के नाजियों ने आस्ट्रिया के चांसलर की हत्या कर दी और जर्मनी आस्ट्रिया पर आक्रमण करने वाला था तो इटली ने आस्ट्रिया की सीमाओं पर स्थित ब्रेनर पास (दर्रे) पर अपनी सेना भेज दी। इटली से युद्ध होने के भय से हिटलर आगे नहीं बढ़ा। परन्तु शीघ्र ही उसने इटली के विरोध को निष्प्रभावी करने के प्रयास किए। जब मुसोलिनी ने अबीसीनिया पर आक्रमण किया (1935) तो हिटलर ने कोई आपत्ति नहीं की। इसके अतिरिक्त 1936 में उसने रोम-बर्लिन धुरी बनाकर के इटली को अपना सहयोगी बना लिया। अबीसीनिया पर अधिकार करने पर हिटलर द्वारा प्रतिबन्ध न लगाए जाने के बदले में इटली ने आस्ट्रिया पर अधिकार के अपने दावों को वापस ले लिया। 1938 में अंततः अंसचल्स संपन्न हुआ। आस्ट्रिया के नाजियों ने आस्ट्रिया में सरकार के विरुद्ध विशाल प्रदर्शन किया। जर्मनी ने आस्ट्रिया के सम्मुख 10 मांगें प्रस्तुत कीं, जिनमें से एक मांग थी की गृह मंत्री के पद पर एक नाजी को नियुक्त किया जाए। चांसलर ने शीघ्र ही आस्ट्रिया एवं जर्मनी के एकीकरण के प्रश्न पर जनमत संग्रह आयोजित किया। चांसलर कुछ हद तक एक नकारात्मक परिणाम के लिए आश्वस्त था। परिणामों की अनिश्चितता से हिटलर ने आस्ट्रिया पर आक्रमण की धमकी दी। उसने कहा कि वह "वियना को आस्ट्रिया का स्पेन बना देगा" परिणामस्वरूप चांसलर ने त्यागपत्र दे दिया, जिसके बाद आस्ट्रिया की नाजी सरकार ने आस्ट्रिया पर अधिकार करने के लिए हिटलर को आमंत्रित किया। ब्रिटेन और फ़्रांस ने मौखिक रूप से विरोध किया। उन्हें जर्मनी के साथ युद्ध का भय था और स्पेन के गृह युद्ध (1936) में हिटलर द्वारा निर्दोष नागरिकों पर की गई बमबारी को देखते हुए वह युद्ध से होने वाली नागरिकों की जान की संभावित क्षति को रोकना चाहते थे।

विलय का प्रभाव:

- चेकोस्लोवाकिया के लिए यह एक गम्भीर खतरा था, जिस पर अब तीन दिशाओं से आक्रमण हो सकता था अर्थात दक्षिण से (आस्ट्रिया), पश्चिम और उत्तर से (जर्मनी)।
- शीघ्र ही जर्मनी ने म्यूनिख सम्मेलन (1938) में सुडेटनलैंड की मांग की और उसे प्राप्त कर लिया और इस प्रकार चेकोस्लोवाकिया के बहुत से उद्योग जर्मनी को चले गए।

- **म्यूनिख सम्मेलन (1938):** इसके परिणामस्वरूप जर्मन जनसंख्या वाला क्षेत्र सुडेटनलैंड (चेकोस्लोवाकिया) जर्मनी को प्राप्त हो गया। चेकोस्लोवाकिया में लोकतंत्र के कारण हिटलर चेकोस्लोवाकिया से घृणा करता था, क्योंकि इसकी रचना वर्साय की संधि से हुई थी। जर्मनी के लिए लेबेन्स्राम के अपने स्वप्न को पूरा करने हेतु हिटलर चेकोस्लोवाकिया पर अधिकार करना चाहता था। उसे विशेषरूप से सुडेटनलैंड चाहिए था, क्योंकि यह औद्योगिक रुप से बहुत समृद्ध था और वहां जर्मन जनसंख्या भी अधिक थी। हिटलर ने यह तर्क देना प्रारम्भ किया कि सुडेटनलैंड में सरकार जर्मन लोगों से भेदभाव करती है। यह इस तर्क पर आधारित था कि अन्य समूहों की तुलना में जर्मन लोगों में बेरोजगारी अधिक थी। सुडेटनलैंड में नाजियों ने विशाल विरोध प्रदर्शन आयोजित किए। ऐसा महसूस किया जा रहा था कि सुडेटनलैंड पर अधिकार करने के लिए हिटलर चेकोस्लोवाकिया पर आक्रमण करेगा और इसलिए म्यूनिख में एक सम्मेलन आयोजित किया गया। म्यूनिख सम्मेलन में, इटली, फ़्रांस और जर्मनी ने भाग लिया। USSR और चेकोस्लोवाकिया को आमंत्रित भी नहीं किया गया था। सम्मेलन का यह निर्णय था कि जर्मनी सुडेटनलैंड पर तो अधिकार कर सकता है परन्तु वह चेकोस्लोवाकिया पर इससे अधिक दावा नहीं करेगा। ब्रिटेन और फ़्रांस ने चेकोस्लोवाकिया को यह भी बता दिया कि यदि वे म्यूनिख समझौते को स्वीकार नहीं करते तो जर्मनी द्वारा आक्रमण की स्थिति में वे उसकी सहायता के लिए नहीं आएंगे। यह लोकार्नो संधियों के विरुद्ध था। हालांकि लोकार्नो संधि में जर्मनी ने चेकोस्लोवाकिया के साथ अपनी सीमाओं को लेकर कोई गारंटी नहीं दी थी परन्तु फ़्रांस ने पोलैंड और चेकोस्लोवाकिया पर जर्मनी के आक्रमण की स्थिति में उनकी सहायता के लिए प्रतिबद्धता व्यक्त की थी। ब्रिटेन और फ्रांस द्वारा सहायता से इनकार करने के फलस्वरूप चेकोस्लोवाकिया म्यूनिख

VISION IAS

संधि पर सहमत हो गया। सुडेटनलैंड को गंवा कर उसने अपने भारी उद्योगों का 70% और जर्मनी के विरुद्ध अपनी किलेबंदी को खो दिया था। परिणामस्वरूप सरकार के प्रभाव में कमी और आर्थिक समस्याओं के कारण स्लोवाकिया ने भी अलगाव की मांग प्रारम्भ कर दी। शीघ्र ही, कानून और व्यवस्था की समस्याएं भी खड़ी होने लगी थीं।

- **शेष चेकोस्लोवाकिया का अधिग्रहण (1939):** म्यूनिख सम्मेलन के पश्चात् उत्पन्न परिस्थितियों में, हिटलर ने चेकोस्लोवाकिया के राष्ट्रपति को कानून व्यवस्था बहाल करने के लिए जर्मन सैनिकों से अनुरोध करने के लिए विवश किया। शीघ्र ही जर्मन सेना चेकोस्लोवाकिया में प्रवेश कर गई और उस पर अधिकार कर लिया। ब्रिटेन और फ़्रांस ने केवल मौखिक विरोध ही किया। ब्रिटेन ने कहा कि शेष चेकोस्लोवाकिया पर गारंटी लागू नहीं होती है, क्योंकि उसने स्वयं ही जर्मन सेनाओं को आने का अनुरोध किया था और तकनीकी रूप से यह आक्रमण नहीं था।
- **पोलैंड पर आक्रमण (1939):** चेकोस्लोवाकिया पर अधिकार के पश्चात्, ब्रिटेन ने यह निर्णय लिया कि अब जर्मनी का और अधिक तुष्टीकरण नहीं किया जाएगा। पोलैंड का अधिग्रहण अनुचित था। अब तक हिटलर ने अपने सभी क्षेत्रीय अधिग्रहणों को जातीयता और वर्साय की संधि के आधार पर उचित ठहराया था। गैर-जर्मन जनसंख्या वाले क्षेत्र के अधिग्रहण की यह पहली कार्यवाही थी। जब हिटलर ने घोषणा की, कि उसे डेनजिंग चाहिए तो ब्रिटेन और फ़्रांस ने पोलैंड की रक्षा के लिए अपनी प्रतिबद्धता दोहराई। हिटलर पोलिश गलियारे के मध्य से रेल और सड़क मार्ग चाहता था, ताकि शेष जर्मनी को पूर्वी प्रशा से जोड़ा जा सके। यद्यपि यह मांग अनुचित नहीं थी, क्योंकि डेनजिंग में 95% जर्मन जनसंख्या रहती थी और पूर्वी प्रशा से कनेक्टिविटी तार्किक थी, परन्तु यह माँग चेकोस्लोवाकिया की हार के तुरंत बाद उठी थी, इसलिए पोलैंड इसके पश्चात् होने वाले सम्पूर्ण आक्रमण की आशंका से भयभीत था। ब्रिटेन ने पोलैंड वासियों पर दबाव बनाने का प्रयास किया, परन्तु उन्होंने जर्मन मांगों को अस्वीकार कर दिया। हिटलर ने रूस को तटस्थ रखने के लिए 1939 में रूस के साथ एक अनाक्रमक संधि पर हस्ताक्षर किये और पोलैंड पर पूर्ण आक्रमण कर दिया। इसके साथ ही द्वितीय विश्व युद्ध आरम्भ हो गया।

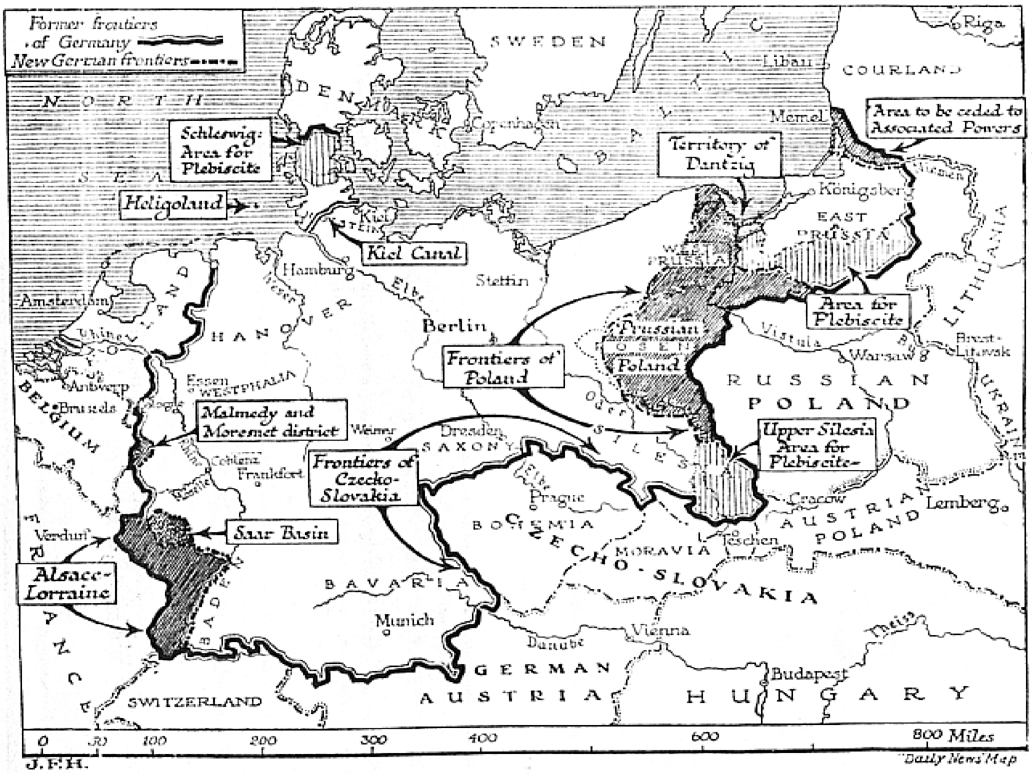

THE NEW GERMANY.

चित्र: जर्मन विस्तार

प्रमुख विषय 4: ब्रिटेन और कुछ सीमा तक फ्रांस ने भी पुनरुत्थानशील जर्मनी के प्रति तुष्टीकरण की नीति अपनाई। इटली और जापान भी अपने आक्रामक कृत्यों के परिणामों से बच निकलते हैं, क्योंकि राष्ट्रसंघ विस्तारवादी प्रवृत्तियों की धमकियों से निबटने में पूर्णतः विफल रहा।

जर्मनी द्वारा वर्साय की संधि का उल्लंघन और जापान एवं इटली का आक्रामक कार्यवाहियों के लिए प्रतिबंधों से बच निकलना सीधे तौर पर तुष्टीकरण की नीति का परिणाम था। इस नीति का अनुसरण करने के निम्नलिखित कारण हैं:

- **युद्ध को टालना:** अन्य शक्तियाँ युद्ध से बचना चाहती थीं, क्योंकि वे आर्थिक और सैन्य रूप में सशक्त नहीं थीं इसलिए वे उस प्रकार के युद्ध में विजय प्राप्त नहीं कर सकती थीं। इस प्रकार के युद्ध का परिणाम सम्भवतः गतिरोध ही होता। ब्रिटेन और फ्रांस अपने नगरों पर बमबारी और नागरिकों की मृत्यु से भयभीत थे, जिसका विभत्स प्रदर्शन जर्मनी द्वारा स्पेन के गृह-युद्ध (1936) में किया जा चुका था।
- **आर्थिक संकट (1929):** अन्य यूरोपीय शक्तियाँ शस्त्रीकरण के अत्यधिक खर्च का वहन नहीं कर सकती थीं। वे अभी पूरी तरह से आर्थिक संकट से उबर नहीं पाईं थीं।
- **जनमत:** ब्रिटेन के लोग युद्ध के विरुद्ध थे। प्रथम विश्व युद्ध के पश्चात् युद्ध के प्रति लोगों के दृष्टिकोण में नाटकीय परिवर्तन आया था। व्यवसायी भी युद्ध के विरुद्ध थे क्योंकि यह उनके आर्थिक हितों को ठेस पहुँचाता था। एक युद्ध पूरी अर्थव्यवस्था को सैन्य उत्पादन के अनुकूल बना देता है और बमबारी से मूलभूत ढांचों एवं औद्योगिक हितों को हानि पहुँचती है।
- **सहानुभूति:** कई समूह यह महसूस कर रहे थे कि जर्मनी और इटली की शिकायतें वास्तविक थीं। इसने जर्मनी और इटली से निबटने के लिए सैन्य बल का प्रयोग रोक दिया। विशेषकर, ब्रिटेन में कई नेताओं का दृष्टिकोण सहानुभूतिपूर्ण था और संभावित युद्ध को रोकने के लिए इसके कई नेता स्वयं ही वर्साय संधि की कठोर शर्तों को संशोधित करने की मांग कर रहे थे। इस प्रकार अंग्रेज़ वर्साय की संधि को ही युद्ध के वास्तविक कारण के रूप में देख रहे थे और इसलिए उन्होंने जर्मनी की उन मांगों के प्रति सहमति जताई, जो संधि के कठोरतम शर्तों को निरस्त करने के लिए लक्षित की जा रही थी। इसलिए उन्होंने तुष्टीकरण की नीति का अनुसरण किया।
- **राष्ट्रसंघ की विफलता:** राष्ट्रसंघ निष्प्रभावी सिद्ध हुआ और इसका संकेत 1937 में निर्वाचित प्रधानमन्त्री चैम्बरलेन के कथन से मिलता है कि "अंतर्राष्ट्रीय कानून का सम्मान करने के लिए वार्ता के माध्यम से विभिन्न नेताओं के साथ व्यक्तिगत सम्पर्क महत्त्वपूर्ण है।" उसने जर्मनी के साथ विवादों को सुलझाने के लिए युद्ध के स्थान पर कूटनीति का समर्थन किया।
- **आर्थिक सहयोग:** ब्रिटेन के लिए जर्मनी एक निर्यात बाजार था और इसलिए ब्रिटिश यह मानते थे कि आर्थिक सहयोग दोनों देशों के हित में है। ब्रिटेन का विश्वास था कि यदि वह जर्मनी की आर्थिक बहाली में सहायता करेगा तो जर्मनी ब्रिटेन के प्रति मित्रतापूर्ण सम्बन्ध रखेगा।
- **साम्यवादी रूस का भय** नाजियों के भय से कहीं अधिक था। यह विशेष रूप से ब्रिटेन और फ़्रांस के रूढ़िवादी समूहों के सम्बन्ध में सत्य था। उन्होंने नाजी जर्मनी को पश्चिम की ओर बढ़ने वाले साम्यवादी विस्तार के प्रतिरोधक के रूप में देखा। इसलिए उन्होंने जर्मन शस्त्रीकरण का विरोध नहीं किया।
- **विलम्ब करना:** कुछ विद्वानों का तर्क है कि अंग्रेजों ने तुष्टीकरण की नीति का अनुसरण स्वयं का शस्त्रीकरण करने के लिए समय प्राप्त करने के लिए किया। आर्थिक संकट के कारण आर्थिक समस्याओं और प्रथम विश्व युद्ध के परिणामों के कारण, ब्रिटेन और फ़्रांस में कुछ नेताओं का यह मत था कि तुष्टीकरण की प्रक्रिया जितनी अधिक लम्बी होगी, उतना ही समय उन्हें शस्त्रीकरण के लिए मिल सकेगा। चैम्बरलेन ने तुष्टीकरण की नीति के साथ साथ शस्त्रीकरण में भी वृद्धि की। उसका यह मत था कि शस्त्रीकरण और तुष्टीकरण की दोहरी तलवार एक निवारक का कार्य करेगी।

VISION IAS

प्रमुख विषय 5 : तुष्टीकरण की नीति फासीवादियों की सहायता करती है, परन्तु इसके कारण गलत पूर्वानुमान भी हो जाता है, जो अंततः द्वितीय विश्व युद्ध की ओर ले जाता है। जर्मनी को रोकने के लिए यूरोपीय शक्तियों का प्रयास अंततः निरर्थक सिद्ध हुआ।

तुष्टीकरण के अन्य पक्ष

- इसने फासीवादी शक्तियों के बीच एक धारणा उत्पन्न किया जिसके कारण गलत अनुमान लगाए गए। हिटलर ब्रिटेन और फ़्रांस की सुस्ती और निर्बलता के विषय में आश्वस्त था। उसने सोचा था कि यदि जर्मनी; पोलैंड (जिसकी सुरक्षा की गारंटी अंग्रेजों ने दी थी) पर आक्रमण भी करता है, तो भी कोई कुछ कार्यवाही नहीं करेगा।
- **जर्मनी को रोकने के लिए अन्य शक्तियों के प्रयास:**
  - फ़्रांस तुष्टीकरण के विरुद्ध था। उसने जर्मनी को आस्ट्रिया-जर्मनी कस्टम एकीकरण (1931) के प्रस्ताव के विरुद्ध अंतर्राष्ट्रीय स्थायी न्यायालय में खींचा था। इसने जर्मनी के अनिवार्य सैन्य सेवा (1935) के विरुद्ध स्ट्रेसा मोर्चा बनाया। स्ट्रेसा मोर्चे ने जर्मन आक्रमण को रोकने के लिए आस्ट्रिया की सीमाओं की गारंटी दी थी।
  - 1934 में इटली ने अंसचल्स (Anschluss) के पहले प्रयास को रोका था।
  - फ़्रांस ने यह सुनिश्चित किया था कि USSR 1934 में राष्ट्रसंघ में प्रवेश करे। इसे जर्मनी के विरुद्ध उपयोग किया गया था। फ़्रांस इटली तथा सोवियत संघ के साथ मिलकर एक जर्मन विरोधी गठबन्धन बनाना चाहता था।
  - इटली ने 1933 में USSR के साथ एक अनाक्रमण संधि पर हस्ताक्षर किया था। परन्तु रूस-फ़्रांस गठबन्धन में सैन्य सहयोग के लिए कोई प्रावधान नहीं था क्योंकि फ़्रांस का नेतृत्व कम्युनिस्टों पर विश्वास नहीं करता था। ऐसा इसलिए था क्योंकि मास्को ने लम्बे समय तक कम्युनिस्टों को यह निर्देश दे रखा था कि वे फ़्रांस के अन्य वामपंथी दलों के साथ सहयोग न करें।
- **होअरे-लवाल संधि (Hoare-Laval pact- 1935):** यह ब्रिटेन और फ़्रांस के बीच एक गुप्त संधि थी। इस संधि का उद्देश्य अबीसीनिया का विभाजन करना और इसका अधिकांश भाग इटली को देना था। यह समझौता असफल हो गया क्योंकि इसकी जानकारी लीक हो गई थी जोकि ब्रिटेन और फ़्रांस की जनता में आक्रोश का कारण बनी।
- **फ़्रांस ने तुष्टीकरण की नीति का अनुसरण क्यों किया?:** फ़्रांस तुष्टीकरण को रोकने में विफल रहा और कई बार स्वयं भी तुष्टीकरण की नीति पर चला, क्योंकि फ़्रांस दक्षिणपंथियों और वामपंथियों में विभाजित हो चुका था। दक्षिणपंथी साम्यवादी रूस के विरुद्ध प्रतिरोधक के रूप में हिटलर का समर्थन करते थे।

VISION IAS

Copyright © by Vision IAS

All rights are reserved. No part of this document may be reproduced, stored in a retrieval system or transmitted in any form or by any means, electronic, mechanical, photocopying, recording or otherwise, without prior permission of Vision IAS.